क्या हो खुशी का पैमाना

खुशी मापने के वैश्विक पैमाने को लेकर तमाम किंतु-परंतु रहे हैं लेकिन फिर भी भारत के नीति-नियंताओं को इस सवाल पर आत्ममंथन करना चाहिए कि भारत दुनिया के करीब 140 देशों में 126वें नंबर पर क्यों है। खुशी मापने के पश्चिमी चश्मे पर हमेशा से ही सवाल उठते रहे हैं, फिर भारत जैसे विशाल जनसंख्या व सांस्कृतिक विविधता वाले देश को एक पैमाने से मापना अतार्किक ही है। हो सकता है जिस बात पर अमेरिकी नागरिक खुश होते हों, वह एक आम भारतीय की खुशी की वजह न हो। सही मायनों में खुशी का आधार संतोष होता है। जो एक सापेक्ष स्थिति है। एक मनःस्थिति है। फिर भारत जैसे देश का दर्शन भौतिक संपदा के बजाय आंतरिक शांति और संतुष्टि में खुशी तलाशता रहा है। फकीरों की मौज को खुशी के पैमाने पर कदापि नहीं आंका जा सकता। वैसे पश्चिमी मापदंड के आधार पर कर्ज में डूबे व अराजकता से जूझते देश पाकिस्तान को भारत के मुकाबले ज्यादा खुशहाल बताने का तर्क गले से नहीं उतरता। इस बार की वर्ल्ड हैप्पीनेस रिपोर्ट में एक बार फिर सातवीं दफा फिनलैंड लगातार खुशहाल देश बना है। उसके बाद डेनमार्क व आइसलैंड का नंबर आता है। ये देश विकसित मगर भारत के एक छोटे शहर की जितनी आबादी वाले देश हैं।

निस्संदेह, बड़ी जनसंख्या का हमारी नागरिक सेवाओं पर प्रतिकूल असर पड़ता ही है। भले ही हमारे नीति-नियंताओं की नीतियों में खोट रहे हों और भ्रष्टाचार व्यवस्था को लीलता रहा है, लेकिन हम कैसे भूलें कि देश सदियों की गुलामी से निकलकर अपने पैरों पर खड़ा हुआ है। भले ही देश में घनघोर आर्थिक असमानता हो, लेकिन फिर भी आज देश की आर्थिक विकास की दर दुनिया में सबसे ज्यादा है। जरूरी है कि आर्थिक विकास समतामूलक होना ही चाहिए। लेकिन यहां एक सवाल यह भी है कि क्या आर्थिक संपन्नता ही खुशी का आधार है? अगर वाकई आधार है तो क्यों आम भारतीयों के सपनों का अमेरिका पहले दस खुश देशों की सूची से बाहर है? क्यों कोई भी विकसित बड़ा राष्ट्र पहले दस खुश देशों में शामिल नहीं है? बहरहाल, वैश्विक खुशी का सूचकांक हमारे नीति-नियंताओं को आत्ममंथन का मौका देता है। सत्ताधीशों को विचार करना होगा कि आखिर आम भारतीय कैसे खुश हो सकता है। देश में गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवाएं और बेहतर शिक्षा व्यवस्था कैसे स्थापित की जा सकती हैं। देश में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों, जातीय भेदभाव, निरक्षरता और आर्थिक असमानता को दूर करने की गंभीर पहल तो होनी ही चाहिए। बेरोजगारी की समस्या को प्राथमिकता के आधार पर संबोधित करने की जरूरत है। लोगों का देश की कानून व्यवस्था के प्रति भरोसा बने, ऐसी नीतियों को क्रियान्वित करने की जरूरत है।

चुनौती भरा है अकेले सेवानिवृत्ति के बाद जीवनयापन

नारायण कृष्णमूर्ति

पति-पत्नी दोनों अगर लंबे समय तक नौकरी के बाद सेवानिवृत्त हुए हैं तो रिटायरमेंट के बाद लागत के लिहाज से उनका जीवन आसान बना रहता है।?इसके विपरीत, आप अकेले हैं व सेवानिवृत्ति के बाद खर्च साझा करने वाला कोई और नहीं हैं तो यह रिटायरमेंट आपके लिए?अपेक्षाकृत महंगा साबित हो सकता है।?

जब आपका पाला सेवानिवृत्त हो चुके और होने वाले लोगों से पड़ता है तो कई बार किसी बात के लिए आपकी आलोचना जरूर हो सकती है। हाल ही में मैं अलग-अलग अवसरों और जगहों पर दो अनोखे लोगों से मिला। उनमें सिर्फ एक ही समानता थी कि दोनों अविवाहित थे। एक की उम्र 63 वर्ष थी, जबकि दूसरे की 56 साल। कोविड महामारी के दौरान सरकारी नौकरी में लंबे करियर के बाद सेवानिवृत्त हुए। उमा कुछ साल में सेवानिवृत्त होने वाली हैं। तलाक के बाद वह कई साल से अकेली रह रही हैं। बहुत से लोग मानते हैं कि किसी जोड़े के सेवानिवृत्त होने के लिए आवश्यक संख्या को दो से विभाजित करने का तरीका अकेले रिटायर होने वाले से ज्यादा सही है। पर, वास्तविकता यह है कि अगर आप अकेले हैं तो आपको जो चाहिए वह उससे अधिक है, जो आप तब प्राप्त करेंगे, जब आप रिटायरमेंट संख्या को दो से विभाजित करेंगे। हां, यह थोड़ा चिंताजनक लग सकता है, लेकिन सच है कि अगर आप अकेले सेवानिवृत्त होने वाले हैं तो जोड़े के रिटायरमेंट की तुलना में आपके खर्च अक्सर ज्यादा होते हैं।

एक की उम्र 63 वर्ष थी, जबकि दूसरे की 56 साल। कोविड महामारी के दौरान सरकारी नौकरी में लंबे करियर के बाद सेवानिवृत्त हुए। उमा कुछ साल में सेवानिवृत्त होने वाली हैं। तलाक के बाद वह कई साल से अकेली रह रही हैं। बहुत से लोग मानते हैं कि किसी जोड़े के सेवानिवृत्त होने के लिए आवश्यक संख्या को दो से विभाजित करने का तरीका अकेले रिटायर होने वाले से ज्यादा सही है। पर, वास्तविकता यह है कि अगर आप अकेले हैं तो आपको जो चाहिए वह उससे अधिक है, जो आप तब प्राप्त करेंगे, जब आप रिटायरमेंट संख्या को दो से विभाजित करेंगे। हां, यह थोड़ा चिंताजनक लग सकता है, लेकिन सच है कि अगर आप अकेले सेवानिवृत्त होने वाले हैं तो जोड़े के रिटायरमेंट की तुलना में आपके खर्च अक्सर ज्यादा होते हैं। अकेले सेवानिवृत्त होने वालों के पास आवास, वाहन और घर चलाने जैसी चीजों की लागत साझा करने के समान अवसर नहीं होते हैं। इसलिए, उन्हें रिटायर के लिए अधिक बचत करनी होगी।?अगर आप अकेले हैं और बच्चों का पालन-पोषण नहीं कर रहे हैं तो ऐसे में आपके पास अपनी उम्र के 30 और 40 के दशक के दौरान बचत करने के कहीं अधिक अवसर होते हैं। जिनके पास बच्चों के लिए धन, घर और कई अन्य चुनौतियां होती हैं और जिनका सामना उन्हें परिवार के पालन-पोषण करते समय करना पड़ता है, उनको ज्यादा खर्च करना होता है।

अकेले सेवानिवृत्त होने वालों के पास आवास, वाहन और घर चलाने जैसी चीजों की लागत साझा करने के समान अवसर नहीं होते हैं। इसलिए, उन्हें रिटायर के लिए अधिक बचत करनी होगी।?अगर आप अकेले हैं और बच्चों का पालन-पोषण नहीं कर रहे हैं तो ऐसे में आपके पास अपनी उम्र के 30 और 40 के दशक के दौरान बचत करने के कहीं अधिक अवसर होते हैं। जिनके पास बच्चों के लिए धन, घर और कई अन्य चुनौतियां होती हैं और जिनका सामना उन्हें परिवार के पालन-पोषण करते समय करना पड़ता है, उनको ज्यादा खर्च करना होता है।

रिटायरमेंट के समय अपने खर्च पर जरूर रखें नजर

वास्तविकता यह है कि प्रति व्यक्ति खर्च बहुत अधिक है, इसलिए जब रिटायरमेंट की योजना बना रहे हों तो इस पर विचार करने की जरूरत है। परिवारों की तुलना में सिंगल लोग लाइफस्टाइल पर अनजाने में अधिक खर्च करते हैं और इसे वे अपना भी लेते हैं। उदाहरण के लिए, जब एक छोटी कार से भी काम हो सकता है तो भी अकेला व्यक्ति सेडान खरीद लेता है। इसके विपरीत, एक दंपती रिटायरमेंट के करीब एक छोटी कार ही पसंद करेगा।

चुनौती अधिक बचत करने की जरूरत

सिंगल लोगों को 60 वर्ष की आयु तक समान उम्र वाले जोड़े की तुलना में रिटायर होने पर लगभग 15-20 फीसदी अधिक बचत की जरूरत होगी। रिटायरमेंट बचत से 4-6 फीसदी निकासी यह पता लगाने का एक आसान तरीका है कि रिटायर होने पर आपको वास्तव में कितने पैसे की आवश्यकता होगी। इसका मतलब है कि 4 फीसदी का रेट पाने के लिए आपको रिटायर होने पर वास्तव में जितना पैसा निकालना होगा, उससे 25 से 30 गुना की आवश्यकता होगी।

मैंने सेवानिवृत्ति के प्रति दृष्टिकोण को समझने के लिए हरि व उमा दोनों से बातचीत करना शुरू किया। हरि ने कहा, भोजन, स्वास्थ्य देखभाल व सुरक्षा जैसी कुछ सामान्य सुविधाओं की बात आती है तो साझा लागत का लाभ उठाने के लिए वह रिटायरमेंट कम्युनिटी में चले गए हैं। दूसरी ओर, उमा ने कुछ साल पहले 50 साल की उम्र में उच्च अध्ययन के लिए अपनी लंबी नौकरी से छुट्टी ले ली थी। अब वह अपनी कंपनी में एक बड़े पद, जिम्मेदारी और वेतन पर वापस आ गई हैं, लेकिन इस नए बदलाव ने उनकी सेवानिवृत्ति की उम्र को 70 साल तक कर दिया है। एक महत्वपूर्ण पहलू जो सिंगल लोगों के लिए चुनौती बन सकता है, वह है उनका स्वास्थ्य। अक्सर अकेले रहने वाले लोगों के लिए स्वास्थ्य की देखभाल महंगी साबित होती है।

सिंगल लोगों के लिए रिटायरमेंट लागत अधिक होती है क्योंकि खर्च साझा करने वाला कोई नहीं होता है। उदाहरण के लिए, यात्रा करते समय होटल के डबल रूम की लागत सिंगल रूम की तुलना में थोड़ी अधिक हो सकती है। लेकिन, दो लोगों के डबल रूम में ठहरने की प्रति व्यक्ति लागत सिंगल कमरे की तुलना में कम हो जाती है। अमूमन, किसी कपल को जिन चीजों के लिए 100 रुपये की जरूरत होगी, उसके लिए अकेले व्यक्ति को 60 से 70 रुपये खर्च करने होंगे।

थका-थका सा क्यों लग रहा विपक्ष

शैलेश कुमार सिंह

कुछ उदाहरण के साथ इसकी पड़ताल करते हैं। आखिर पूरे विपक्ष को क्यों लगने लगा है कि चुनावों की निष्पक्षता सुनिश्चित नही है। शायद विपक्ष के नेताओ को ठीक चुनाव से पहले जिस तरह से सरकारी एजेंसियां सीबीआई और ईडी निशाना बना रही है उससे अविश्वास बढ़ा है। मैं नहीं कहता कि वो दूध से धुले हैं लेकिन उनपर करवाई की टाइमिंग गलत है। जिन लोगों को ईडी ने अंदर किया है उनमें दो अरविंद केजरीवाल और हेमन्त सोरेन तो आपने अपने राज्य के मुख्यमंत्री हैं। यहां सवाल ये भी उठ रहा है कि एक अन्य कद्दावर नेता महाराष्ट्र के अजीत पवार जब विपक्ष में थे तो उनपर भी भ्रष्टाचार के चलते गिरफ्तारी की तलवार लटक रही थी लेकिन केंद्रीय सत्ता से हाथ मिलाते ही तलवार हट गई और वो प्रदेश के उपमुख्यमंत्री बन गए हैं। ऐसे कई उदाहरण है जिसमे विपक्ष में बैठ कर भृष्टाचार के आरोप झेल रहै नेता जब सत्तारूढ़ दल में आये तो उनको टिकट भी मिला और चैन से बंशी बजाने का मौका भी। सरकारी एजेंसियों का दुरुपयोग सत्तारूढ़ दल करते रहे हैं। इस मामले में कांग्रेस का दामन भी छींटों से भरा हुआ है लेकिन आजकल ये थोड़ा ज्यादा चर्चा में है। ईडी ने जिन राजनेताओं को अपने जांच के दायरे में लिया है उनमें 95 प्रतिशत विपक्ष के हैं। चुनाव के ठीक पहले एक चुनाव आयुक्त ने बिना कारण बताए त्यागपत्र दे दिया। चुनाव सर पे हैं आनन फानन में दो चुनाव आयुक्तों की बहाली की गयी। चुनाव आयुक्तों की बहाली की प्रक्रिया भी ऐसी है जिसमे सरकार की ही चलती है। समय के साथ भ्रष्टाचार के मुद्दे पक्ष और विपक्ष दोनो के के विरुद्ध उठते रहे हैं।

एक मशहूर मानव विज्ञानी अर्जुन अप्पादुराई की सुने तो भारत का लोकतंत्र थकान के दौर से गुजर रहा है। इस लोकतंत्र में मुख्य विपक्षी दल कांग्रेस है और सत्तारूढ़ दल भाजपा उससे देश को मुक्त करने की बात कहती है। वो जमाना भी नही रहा जब कमजोर विपक्ष के साथ भी संसद में राम मनोहर लोहिया का कद बहुत बड़ा था। आज मुख्य विपक्षी दल कांग्रेस का चेहरा बने नेता को पप्पू साबित करने की मुहिम चलाई जाती है। कहते हैं कि मजबूत विपक्ष के बगैर प्रजातंत्र की प्राणवायु खत्म हो जाती है।

यही प्रजातंत्र है जिसमे मजबूत इंदिरा गांधी को झटके से धूल चटा दिया था और उनकी जगह आये लोगों ने जब जनादेश की कद्र नही की तो दो वर्ष बाद ही उन्हें पुनः काबिज कर दिया था। 1984 में महज 2 सीटों पर सिमट आई भाजपा 14 साल बाद सत्ता के द्वार तक पहुंच गई। इसी प्रजातंत्र ने 'इंडिया शाइनिंग' और 'फीलगुड' के दावे को खारिज कर दिया था। आज देश में माहौल ये है कि लोगो को ये विश्वास दिलाया जा रहा है कि अगले 25 साल तक वर्तमान सरकार ही सत्ता सुख जारी रखेगी। ऐसे में बुझे हुए अपमानित विपक्ष के साथ भारतीय लोकतंत्र के थकान की बात कुछ हद तक तार्किक भी लग रही है।

आखिर इस थ्योरी के पीछे कौन से तर्क हैं। दरअसल सत्ता विरोध के स्वर और उस पर निगरानी ही लोकतंत्र को जिंदा रखते हैं। देश की पहली और दूसरी लोकसभा में जब विपक्ष कमजोर था तब नेहरू कुछ कांग्रेसियों को भी विपक्ष के बेंच पर बैठाते थे ताकि सकारात्मक वाद विवाद हो सके। विपक्ष में बैठने वालों में उनके दामाद फिरोज गांधी भी हुआ करते थे। ?से हालात में प्रजातंत्र फलता और फूलता है। शासक भी तानाशाह के जैसा व्यवहार नही कर पाता है। लेकिन उसी प्रजातंत्र में जब सारा विपक्ष चुनाव प्रक्रिया पर ही सवाल उठाने लगे तो उसे क्या कहेंगे। हो सकता है विपक्ष का सोचने का ढंग गलत हो लेकिन इसका तार्किक जवाब या व्यवस्था में उचित परिवर्तन कर विपक्ष को संतुष्ट करना सत्ता पक्ष का दायित्व है। एक और गौरतलब बात है कि प्रजातंत्र में 'एंटी इनकम्बेंसी' शब्द हमेशा सत्ता के विरोध में किया जाता है लेकिन यही शब्द जब विपक्ष के लिए प्रयुक्त होने लगे और मीडिया अपने ज्यादातर सवाल पक्ष के बजाय विपक्ष से पूछने लगे तो प्रजातंत्र की थकान तो दिखेगी।

कुछ उदाहरण के साथ इसकी पड़ताल करते हैं। आखिर पूरे विपक्ष को क्यों लगने लगा है कि चुनावों की निष्पक्षता सुनिश्चित नही है। शायद विपक्ष के नेताओ को ठीक चुनाव से पहले जिस तरह से सरकारी एजेंसियां सीबीआई और ईडी निशाना बना रही है उससे अविश्वास बढ़ा है। मैं नहीं कहता कि वो दूध से धुले हैं लेकिन उनपर करवाई की टाइमिंग गलत है। जिन लोगों को ईडी ने अंदर किया है उनमें दो अरविंद केजरीवाल और हेमन्त सोरेन तो आपने अपने राज्य के मुख्यमंत्री हैं। यहां सवाल ये भी उठ रहा है कि एक अन्य कद्दावर नेता महाराष्ट्र के अजीत पवार जब विपक्ष में थे तो उनपर भी भ्रष्टाचार के चलते गिरफ्तारी की तलवार लटक रही थी लेकिन केंद्रीय सत्ता से हाथ मिलाते ही तलवार हट गई और वो प्रदेश के उपमुख्यमंत्री बन गए हैं। ऐसे कई उदाहरण है जिसमे विपक्ष में बैठ कर भृष्टाचार के आरोप झेल रहै नेता जब सत्तारूढ़ दल में आये तो उनको टिकट भी मिला और चैन से बंशी बजाने का मौका भी।

सरकारी एजेंसियों का दुरुपयोग सत्तारूढ़ दल करते रहे हैं। इस मामले में कांग्रेस का दामन भी छींटों से भरा हुआ है लेकिन आजकल ये थोड़ा ज्यादा चर्चा में है। ईडी ने जिन राजनेताओं को अपने जांच के दायरे में लिया है उनमें 95 प्रतिशत विपक्ष के हैं। चुनाव के ठीक पहले एक चुनाव आयुक्त ने बिना कारण बताए त्यागपत्र दे दिया। चुनाव सर पे हैं आनन फानन में दो चुनाव आयुक्तों की बहाली की गयी। चुनाव आयुक्तों की बहाली की प्रक्रिया भी ऐसी है जिसमे सरकार की ही चलती है।

समय के साथ भ्रष्टाचार के मुद्दे पक्ष और विपक्ष दोनो के के विरुद्ध उठते रहे हैं। कई गैरभाजपाई मुख्यमंत्री इसके दायरे में आते दिखे लेकिन सत्ता के खिलाफ जो मुद्दे सुर्खियों में आते हैं उनके विरुद्ध विपक्ष उतनी सिद्दत से सड़क पर नही उतरता जिससे गम्भीर बहस और उसे राजनीतिक लाभ हो सके। इसका सबसे ज्वलंत उदाहरण चुनावी बांड हैं। सुप्रीम कोर्ट ने साफ शब्दों में इसे अवैध करार दिया। सच्चाई सामने आने पर ये भी खुलासा हुआ कि लोगों को जुआ खेला कर लूटने वाली और सरकार से सुविधाओं की उम्मीद रखने वाली कंपनियों ने दिल खोल कर चंदा दिया। विपक्ष इस पर सुगबुगाया तो लेकिन बात सड़क तक नही पहुंची। कोढ़ में खाज की तरह विपक्षी एकता की उम्मीद बन रहे नीतीश कुमार खुद सत्ता की गोद मे जा बैठे। विपक्ष सरकार के कामकाज का हिसाब लेने में भी विफल दिख रहा है। ये तय हो चुका है कि सर पे खड़े लोकसभा चुनाव सरकार के दौरान सरकार के 10 साल के कामकाज का हिसाब गौण रहेगा और राम मंदिर, हिन्दू गौरव, राष्ट्रीय अस्मिता, विदेशो में भारत का सम्मान, पाकिस्तान की गिरती हालत से तुलना बड़े मुद्दे रहेंगे। ये ठीक है कि दुनियाभर में लोकतंत्र अलग अलग स्वरूप में मौजूद है। बांग्लादेश और पाकिस्तान में तो ये सांकेतिक मात्र है। जब लोकतंत्र की बात होती है तो दुनिया की निगाह सबसे ज्यादा वोटरों वाले हिंदुस्तान की तरफ ही जाती है। ऐसे में विपक्ष मुक्त थकता हुआ भारतीय लोकतंत्र कुछ अच्छे संकेत नहीं दे रहा है। इसे ऊजार्वान होने के लिए एक मजबूत विपक्ष की आवश्यकता है।

https://t.me/AllNewsPaperPdf

सम्पादकीय

विपक्षी एकता के मायने

राजधानी दिल्ली के ऐतिहासिक रामलीला मैदान में विपक्षी गठबंधन इंडिया के समर्थक और भाजपा-विरोधी बड़े नेता मौजूद थे। एकजुटता साफ नजर आ रही थी। उनमें से अधिकतर ने देश को आगाह किया कि यदि तीसरी बार भी मोदी सरकार बनी, तो देश का संविधान बदलने की शुरुआत होगी। शासन और भी एकाधिकारवादी हो जाएगा। भारत रूस बन सकता है। लोकतंत्र की आत्मा खत्म कर दी जाएगी। जिस तरह रूस पर पुतिन का राज है, उसी तरह भारत में मोदी की स्थिति होगी। यह आशंका कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खड़गे ने जताई थी। संविधान को बदलने की बात राहुल गांधी ने की, जिन्हें किन्हीं भाजपा नेताओं ने ब्रीफ किया था। यहां तक आगाह किया गया कि देश में आग लग जाएगी। इनके अलावा अखिलेश यादव, तेजस्वी यादव, शरद पवार, सीताराम येचुरी, भगवंत मान आदि विपक्षी नेताओं ने रोजगार का संकट, बेरोजगारी, महंगाई, किसानों का एमएसपी, जांच एजेंसियों की निरंकुशता और प्रशासन आदि के साझा मुद्दे उठाकर अपने लोकसभा चुनाव अभियान को गति दी। सारांश में विपक्ष की साझा रैली कई मायनों में असर छोड़ गई। एक बार फिर इंडिया बिखरने के बजाय लामबंद होता दिखाई दिया। आपसी विरोधाभास को भी उन्होंने स्वीकार किया। बेशक ममता बनर्जी और स्टालिन सरीखे मुख्यमंत्री रैली में नहीं आए, लेकिन उन्होंने अपने प्रतिनिधि भेजकर स्पष्ट किया कि वे आज भी इंडिया के घटक हैं। बहरहाल विपक्षी नेताओं ने चुनावों को लोकतंत्र-संविधान बचाने की सामूहिक कोशिश चित्रित किया। दूसरी तरफ प्रधानमंत्री मोदी ने 1857 की प्रथम क्रांति की मूलभूमि मेरठ से चुनाव के दूसरे हिस्से का आगाज किया। उन्होंने भारत-रत्न चौधरी चरण सिंह के गौरव समारोह के जरिए पश्चिमी उप्र के किसानों, जाटों और मसीहा के भक्त-समर्थकों को साधने की कोशिश की। प्रधानमंत्री ने भ्रष्टाचार के मुद्दे पर चुनावी लड़ाई की चेतावनी भी कबूल की और देश से साझा किया कि भ्रष्टाचार के खिलाफ कार्रवाई जारी रहेगी, क्योंकि जनता का जो पैसा लूटा गया है, वह उसे लौटा रहे हैं। अभी तक 17,000 करोड़ रुपए से अधिक लोगों को वापस किए जा चुके हैं, यह प्रधानमंत्री मोदी ने दावा किया। प्रधानमंत्री ने भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई को मोदी की गारंटी करार दिया और कहा कि वह विपक्ष के रुदन और चिल्लाने से घबराने वाले नहीं हैं। इन दोनों जनसभाओं का आकलन करने के बाद चुनाव विश्लेषकों की व्याख्या है कि जितना एकतरफा आम चुनाव माना जाता रहा है, उतना नहीं है। कुछ गंभीर जन-समस्याओं पर लोगों में ध्रुवीकरण होने लगा है। अंडर करंट भी माना जा रहा है। उप्र और राजस्थान सरीखे राज्यों में जिस तरह एकतरफा मोदी लहर आंकी जा रही थी, अब वह स्थिति नहीं है। प्रधानमंत्री ने बूथ स्तर के काडर को अनुरोध किया है कि वे घर-घर जाएं और कहें कि मोदी जी ने नमस्कार भेजा है। बेशक भाजपा के पक्ष में भ्रष्टाचार के अलावा, अयोध्या राम मंदिर निर्माण, लाभार्थी योजनाएं, महिला वोट बैंक और मोदी सरकार की विभिन्न परियोजनाएं आदि हैं। यदि समूचा विपक्ष आज से ही एक सीट, एक साझा उम्मीदवार की रणनीति को अमलीजामा पहना दे और देश भर में सघन अभियान चलाए, तब भी मोदी और भाजपा-एनडीए दुर्जेय हैं। चुनाव विशेषज्ञों का मानना है कि तमिलनाडु, केरल सरीखे दक्षिण भारतीय राज्यों में इस बार प्रधानमंत्री मोदी, राम मंदिर, सनातन आदि को लेकर एक अनूठी लहर महसूस की जा रही है, लिहाजा भाजपा इस बार इन राज्यों में शून्य नहीं रहेगी। यदि विपक्षी दल आपस में भाजपा-विरोधी वोटों को कम काटें और भरपूर मतदान हो, तब भी भाजपा को परास्त करना बहुत मुश्किल काम है, क्योंकि चुनाव घोषणा से पहले ही भाजपा के काडर ने सभी बुनियादी बंदोबस्त कर दिए थे। प्रधानमंत्री भी दक्षिण राज्यों में रोड शो जैसे प्रचार अभियान सम्पन्न कर चुके हैं।

देखते है आगे होता है क्या?

संजय गोस्वामी

जी हाँ महंगा पर सकता है ऐ सौदा क्योंकि श्री राज ठाकरे के एनडीए में शामिल होने से एनडीए को खासकर हिन्दी बाहुल्य इलाके खासकर बिहार और उप्र में नुकसान हो सकता है इसका कारण है मनसे द्वारा महाराष्ट्र में उत्तर भारतीय पर टिका टिपण्णी और बहुत से फेरिवालो से मुंबई में मारपीट का मामला इससे उस पार्टी ने एक ऐसी छाप छोड़ी है जिससे उसके अपने ही घर में सिर्फ 1विधानसभा में ही जीत मिली है जो वर्षों पहले मार पिट के शिकार हुए होंगे वह कभी वोट नहीं देंगे और उप्र, बिहार एनडीए का बेस है कोरोना में भी अवसर था लेकिन आरएसएस व माननीय मुख्यमंत्री योगीजी ने अच्छा काम किया और पुनः जीत गए अतः महाराष्ट्र में भी आपस में ही टकराव है ऐसे में हो सकता है कुछ जनाधार मिल जाए लेकिन उसका खामियाजा उत्तर भारत में खासकर ग्रामीण इलाके में गरीब लोग जो रोजी रोटी की तलाश में मुंबई आते हैं और किसी पार्टी के इसारे पर बेरहमी से पीटा जाता हो तो क्या वह वोट करेंगे? एक प्रश्नचिन्ह है। 2024 लोकसभा चुनावों से पहले महाराष्ट्र में बड़ी सियासी हलचल सामने आई है। बीजेपी के अगुवाई वाले महायुति में महाराष्ट्र नव निर्माण सेना (मनसे) के प्रमुख राज ठाकरे की एंट्री तय मानी जा रही है। दावा किया जा रहा है कि जल्द ही महायुति के चौथे पार्टनर के तौर पर मनसे का नाम घोषित हो सकता है। महाराष्ट्र में राज ठाकरे को साथ लेने के पीछे कहा जा रहा है कि इससे बीजेपी उद्धव ठाकरे फैक्टर को काटकर महाविकास अघाड़ी को और कमजोर कर सकेगी, लेकिन इसी के साथ सवाल खड़ा हो रहा है कि पूर्व में उत्तर भारतीयों के नजर में खलनायक रहे राज ठाकरे को साथ लेकर बीजेपी यूपी-बिहार जैसे हिन्दी पट्टी वाले राज्य में सियासी नुकसान उठाना चाहेगी। राज ठाकरे पूर्व में हिन्दी भाषा को लेकर भी सवाल खड़े करते आए हैं। उन्होंने दिसम्बर, 2018 में कहा था कि हिन्दी राष्ट्रीय भाषा नहीं है फिर राजनीति में कुछ भी चलता है मनसे का एनडीए में शामिल होते ही उत्तर भारतीय में नाराजगी कई चैनलों में खुलकर आई और चूंकि 10साल में किसी भी पार्टी के लिए एंटी-इनकंबेंसी यानी सत्ता-विरोधी लहर कुछ ना कुछ तो होता है जिसे समझना बहुत मुश्किल है क्योंकि यह मार्जिन अभी उतना दिख नहीं रहा है लेकिन मनसे के आने से सत्ता-विरोधी लहर खासकर उप्र, बिहार व मप्र में अगर 1परसेंट भी फिसला तो कम से कम 50सीट ऐसे हैं जहाँ मामला बिगड़ सकता है जहाँ तक साउथ का प्रश्न है कर्नाटका से बीजेपी को अच्छा वोट मिलता है लेकिन अभी वहाँ कांग्रेस की सरकार है अतः वहाँ उपमुख्यमंत्री डी के शिवकुमार हैं जो राजनीती के उस इलाके के चाणक्य माने जाते हैं अतः वहाँ अभी से फील्डिंग लगा रखी है अतः वहाँ 10सीट ऐसे है जहाँ हार जीत का मामला 1से 2परसेंट है अतः वहाँ भी एन डी ए को नुकसान होता दिख रहा है जिसतरह चुनावी चंदे का मामला सामने आया है उससे यही लग रहा है कि सबसे ज्यादा चंदे वाली पार्टी बीजेपी सवालों से घिर सकती है और विपक्षी पार्टियों इसे भुनाने में कोई कसर नहीं छोड़ेगी उप्र में पेपर लीक मामलों से काफी लोगों में नाराजगी है अतः चुनाव में इसका असर भी देखने को मिल सकती हैं हालांकि मुख्यमंत्री योगीजी का काम बेहतरीन हुआ है अतः वहाँ पिछले चुनाव के मुकाबले 4-5 सीटों का नुकसान हो सकता है क्योंकि समाजबादी पार्टी व कांग्रेस के गठबंधन से अल्पसंख्यक का वोट स्प्लिट नहीं होगा जहाँ तक बिहार की बात है वहाँ मनसे का नाम तो नहीं जानते लेकिन श्री राज ठाकरे को बिलकुल पसंद नहीं करते और बहुत से गरीब लोग जो रोजी रोटी के लिए मुंबई जाते हैं वह और उनका परिवार भी किसे वोट करेंगे ऐ आने वाला समय बताएगा बिहार में ऐसे भी बीजेपी आधे सीट पर चुनाव लड़ रही है और यदि जद (यू) अगर 14-15 सीट भी ले आती है और इंडिया गठबंधन में कुछ सीट की जरुरत पड़ी तो श्री नीतीश कुमार को पलटीमारते देर नहीं लगेगी अधिकतर सीटों पर हार जीत का मार्जिन कम होता है अगर हरेक राज्य में इसी तरह 4-5सीट भी कम हुए तो जीत हेतु कहीं ऐसा ना हो की 275 के करीब सीट भी ना जीत सके, क्योंकि एनडिए यही हाल 2004 के समय भी चुनाव प्रचार के समय लग रहा था कि 300 से 350सीट जीत जाएगी और भारत उदय का रथ निकला लेकिन 200का आकड़ा भी नहीं पार कर सकी और महज 182सीट ही प्राप्त हो सकी चूंकि गणित में संभावना का थ्योरी ऐ बताता है कि यदि कोई 2बार लगातार जीत दर्ज करता है तो तीसरे बार भी जीत की पुरी संभावना रहती है लेकिन चुनाव में हकीकत उल्टी रहती है क्योंकि सत्ताविरोधी लहर और जनता की इच्छा कुछ और होती है देखते है आगे होता है क्या?हालांकि श्री मोदीजी ने सराहनीय कार्य किया है लेकिन कुछ चीज जात, पात, धर्म आदि पर लोग गुमराह हो जाते हैं और फिर काम को कम और कुछ मुद्दों पर आपस में ही सहमति नहीं बन पाती सरकार ने हर फिल्ड में अच्छा काम है लेकिन लोकल समस्या अभी भी एक विकराल समस्या है जिस तरह अंतराष्ट्रीय रिश्ते मजबूत हुए और चंद्रयान -3की इतिहासिक वैज्ञानिक विकास भी सफलता की कड़ी है लेकिन जनता क्या इस कठिन परीक्षा को पूर्ण मार्क देती है तो ठीक है. हालांकि लोकतंत्र में देखते है आगे होता है क्या?

अरविंद केजरीवाल की गिरफ्तारी से लोकसभा चुनावों पर क्या असर पड़ेगा?

ईडी का दावा है कि इन गिरफ्तारियों के पीछे कोई राजनीति नहीं है। लेकिन राजनीति और लोक का एक बड़ा हिस्सा ऐसा है, जो इन गिरफ्तारियों के पीछे राजनीति देख रहा है। मोदी विरोधी आईएनडीआईए गठबंधन में चूंकि केजरीवाल भी शामिल हैं, लिहाजा गठबंधन के नेता इन गिरफ्तारियों को सिर्फ और सिर्फ राजनीतिक बताने-बनाने में जुट गए हैं। उनका एक ही सवाल है कि आखिर सिर्फ विपक्षी नेताओं को ही ईडी या सीबीआई निशाना क्यों बना रहे हैं? बार-बार ऐसा कहकर एक तरह से मोदी विरोधी मोर्चे के नेताओं की कोशिश यह है कि इन गिरफ्तारियों को भ्रष्टाचार की बजाय सिर्फ राजनीति का रंग दिया जाए और इसके जरिए मोदी विरोधी वोटों की फसल काट ली जाये। लेकिन सवाल यह है कि क्या ऐसा संभव है? मोदी के उभार के बाद के दोनों संसदीय चुनावों में दिल्ली विधानसभा में अपार बहुमत रखने वाली आम आदमी पार्टी एक भी सीट हासिल नहीं कर पाई है। इस बार तो आम आदमी पार्टी ने उस कांग्रेस के साथ गठबंधन कर लिया है, जिसके भ्रष्टाचार के विरोध में उसका समूचा अस्तित्व पनपता रहा। दिल्ली में लोकसभा की सात सीटें हैं, जिनमें तीन सीटों पर जहां कांग्रेस चुनाव लड़ रही है, वहीं आम आदमी पार्टी चार सीटों पर मैदान में है। पिछले दो आम चुनावों में आम आदमी पार्टी की स्थिति तीसरे नंबर की पार्टी बनकर रह गई थी। गठबंधन करके कांग्रेस और आम आदमी पार्टी-दोनों ने उम्मीद लगा रखी है कि दो आम चुनावों से जारी दिल्ली में उनका सूखा शायद कम हो जाए। केजरीवाल की गिरफ्तारी के पहले तक ऐसा नहीं लग रहा था कि विगत के दो चुनावों से इतर कांग्रेस और आम आदमी पार्टी का इतिहास इस बार इतर होने जा रहा है।

उमेश चतुर्वेदी
लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं स्तम्भकार हैं

लोकसभा चुनाव की प्रक्रिया जारी हो, इसी बीच किसी राज्य के मुख्यमंत्री की गिरफ्तारी हो और उस पर राजनीति ना हो, ऐसा संभव ही नहीं है। दिल्ली के कथित आबकारी घोटाले में मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल और भारत राष्ट्र समिति की नेता के कविता को प्रवर्तन निदेशालय यानी ईडी ने गिरफ्तार किया है। ईडी का दावा है कि इन गिरफ्तारियों के पीछे कोई राजनीति नहीं है। लेकिन राजनीति और लोक का एक बड़ा हिस्सा ऐसा है, जो इन गिरफ्तारियों के पीछे राजनीति देख रहा है। मोदी विरोधी आईएनडीआईए गठबंधन में चूंकि केजरीवाल भी शामिल हैं, लिहाजा गठबंधन के नेता इन गिरफ्तारियों को सिर्फ और सिर्फ राजनीतिक बताने-बनाने में जुट गए हैं। उनका एक ही सवाल है कि आखिर सिर्फ विपक्षी नेताओं को ही ईडी या सीबीआई निशाना क्यों बना रहे हैं? बार-बार ऐसा कहकर एक तरह से मोदी विरोधी मोर्चे के नेताओं की कोशिश यह है कि इन गिरफ्तारियों को भ्रष्टाचार की बजाय सिर्फ राजनीति का रंग दिया जाए और इसके जरिए मोदी विरोधी वोटों की फसल काट ली जाये।

लेकिन सवाल यह है कि क्या ऐसा संभव है? मोदी के उभार के बाद के दोनों संसदीय चुनावों में दिल्ली विधानसभा में अपार बहुमत रखने वाली आम आदमी पार्टी एक भी सीट हासिल नहीं कर पाई है। इस बार तो आम आदमी पार्टी ने उस कांग्रेस के साथ गठबंधन कर लिया है, जिसके भ्रष्टाचार के विरोध में उसका समूचा अस्तित्व पनपता रहा। दिल्ली में लोकसभा की सात सीटें हैं, जिनमें तीन सीटों पर जहां कांग्रेस चुनाव लड़ रही है, वहीं आम आदमी पार्टी चार सीटों पर मैदान में है। पिछले दो आम चुनावों में आम आदमी पार्टी की स्थिति तीसरे नंबर की पार्टी बनकर रह गई थी। गठबंधन करके कांग्रेस और आम आदमी पार्टी-दोनों ने उम्मीद लगा रखी है कि दो आम चुनावों से जारी दिल्ली में उनका सूखा शायद कम हो जाए। केजरीवाल की गिरफ्तारी के पहले तक ऐसा नहीं लग रहा था कि विगत के दो चुनावों से इतर कांग्रेस और आम आदमी पार्टी का इतिहास इस बार इतर होने जा रहा है। लेकिन केजरीवाल की गिरफ्तारी के बाद दोनों पार्टियों को सहानुभूति लहर उठने की उम्मीद है। उन्हें लगता है कि सहानुभूति की वजह से इस बार भारतीय जनता पार्टी के किले में सेंध लग सकती है।

शराब घोटाले में केजरीवाल के पहले उनके दो स्तंभों पूर्व उप मुख्यमंत्री मनीष सिसोदिया और राज्यसभा सदस्य संजय सिंह गिरफ्तार हो चुके हैं। उनकी जमानत की याचिकाएं खारिज हो चुकी हैं। दिल्ली शराब नीति घोटाले में दिल्ली से तीसरी बड़ी गिरफ्तारी केजरीवाल की हुई है। इसी केस में भारत राष्ट्र समिति की नेता और पार्टी अध्यक्ष के. चंद्रशेखर राव की बेटी के कविता भी गिरफ्तार हैं। केजरीवाल को गिरफ्तार करने से पहले ईडी ने नौ बार समन देकर उन्हें बुलाया। लेकिन हर बार वे ईडी के सामने जाने से बचते रहे। केजरीवाल का राजनीतिक अनुभव भले ही कम हो, लेकिन उनकी पैंतरेबाजी से साफ है कि राजनीति करने में वे पुराने से पुराने नेताओं पर भारी हैं। समन को अनदेखा करके एक तरह से वे इस मुद्दे को जिंदा रखने और इसके जरिए अपने लिए वोटरों की सहानुभूति हासिल करने की कोशिश करते रहे। गिरफ्तारी के बावजूद मुख्यमंत्री पद से इस्तीफा ना देकर भी केजरीवाल राजनीति कर रहे हैं। ईडी की हिरासत से ही वे दिल्ली के लिए दो आदेश जारी कर चुके हैं। पहले में जहां उन्होंने दिल्ली की सीवर व्यवस्था दुरूस्त करने का आदेश दिया है, वहीं उनका दूसरा आदेश स्वास्थ्य व्यवस्था को दुरुस्त रखना है। दिल्ली में विपक्षी भूमिका निभा रही भारतीय जनता पार्टी इस पर हंगामा कर रही है। दिल्ली के मुख्यमंत्री पद से केजरीवाल को हटाने की मांग वाली याचिका दिल्ली हाईकोर्ट में दाखिल की गई। जिसे हाईकोर्ट ठुकरा चुका है। इसके बावजूद नैतिकता के आधार पर भाजपा केजरीवाल से इस्तीफे की मांग कर रही है। लेकिन केजरीवाल के खेमे के तर्क है कि संविधान में कहीं नहीं लिखा है कि हिरासत में लिए गए व्यक्ति को अपने पद से इस्तीफा दे ही देना होगा। इस तर्क के सहारे केजरीवाल मुख्यमंत्री के पद पर जमे हुए हैं।

हिरासत से आदेश देना और उसका आम आदमी पार्टी द्वारा भरपूर प्रचार किया जाना दरअसल केजरीवाल के प्रति सहानुभूति हासिल करने की प्रक्रिया का ही विस्तार है। भारतीय समाज भावुक होता है। इस भावुकता का फायदा हर राजनीतिक दल अपने तईं उठाते रहे हैं। इसी अंदाज में केजरीवाल परिवार भी आगे बढ़ रहा है। केजरीवाल की पत्नी सुनीता केजरीवाल के भावुकताभरे बयान भी इसका ही उदाहरण हैं। दरअसल इन कदमों से आम आदमी पार्टी दिल्ली के लोगों को यह संदेश देने की कोशिश कर रही है कि जेल में रहते हुए भी आम आदमी पार्टी प्रमुख सिर्फ दिल्ली के ही बारे में सोच रहे हैं। इसके साथ ही आम आदमी पार्टी की कोशिश इस बहाने सहानुभूति हासिल करना है।

इस बीच दिल्ली के उपराज्यपाल वीके सक्सेना के एक बयान से दिल्ली सरकार की बर्खास्तगी को लेकर अटकलें तेज हो गईं। उपराज्यपाल ने यह कह दिया कि जेल से दिल्ली की सरकार नहीं चलने दी जाएगी। उपराज्यपाल के इस बयान के बाद आम आदमी पार्टी ने दिल्ली में राष्ट्रपति शासन लगाने की कोशिशों का जोरदार विरोध किया। वैसे माना यह जा रहा है कि यह विरोध भी आम आदमी पार्टी की रणनीति का ही हिस्सा है। ताकि केंद्र सरकार दिल्ली सरकार को बर्खास्त कर दे। इससे केजरीवाल के पक्ष में जोरदार लहर उठ खड़ी होगी और मौजूदा आम चुनावों में आम आदमी पार्टी इसका फायदा उठा सकेगी। वैसे भारतीय जनता पार्टी की ओर से केजरीवाल को दोषी बताने की खूब कोशिशें हो रही हैं। दिल्ली में विपक्षी दल होने के नाते उसकी यह जिम्मेदारी भी है। लेकिन यह भी सच है कि दिल्ली बीजेपी की यह कोशिश बहुत ज्यादा कामयाब नहीं है। दिल्ली का एक वर्ग ऐसा भी है, जो मानता है कि केजरीवाल को तंग किया जा रहा है। दिल्ली की बसों, मेट्रो आदि में ऐसी चचाएं सुनाई दे रही हैं। हालांकि एक तबका ऐसा भी है, जो मानता है कि भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन से उभरे केजरीवाल भी भ्रष्ट हो गए हैं। केजरीवाल के प्रति सहानुभूति रखने वाले में उस वर्ग के लोग ज्यादा हैं, जिन्हें दिल्ली सरकार की कल्याणकारी योजनाओं का फायदा मिल रहा है। हालांकि दिल्ली की खस्ताहाल बसें, व्यवस्था की ढिलाई आदि के चलते केजरीवाल सरकार से नाराजगी रखने वाला भी एक वर्ग है। जो इस गिरफ्तारी को जायज ठहरा रहा है। केजरीवाल की गिरफ्तारी को नाजायज बताने में जुटी कांग्रेस की स्थित सांप-छछूंदर जैसी हो गई है। लोग चुटकियां लेने से बाज नहीं आ रहे। लोगों का कहना है कि जिस कांग्रेस को भ्रष्टाचारी बताते-बताते केजरीवाल ने नष्ट कर दिया, वह भी उसकी ईमानदारी की गारंटी दे रही है। यही वजह प्रहसन का बिंदु है, जिसकी वजह से दिल्ली के आम चुनावों में बीजेपी उम्मीद लगा सकती है। हालांकि इस प्रहसन के प्रभाव को कम करने की कोशिश में आम आदमी पार्टी ही नहीं, कांग्रेस भी प्राणपण से जुटी है। दिल्ली की काया पलटने वाली कांग्रेसी मुख्यमंत्री शीला दीक्षित के बेटे संदीप दीक्षित कभी कहा करते थे कि वे केजरीवाल से अपनी मां के अपमान का बदला जरूर लेंगे।

सूचना का अधिकार : पारदर्शिता की व्यापक पहचान पर ध्यान दें

कई तरह के उतार-चढ़ाव के बाद अंत में भारत में जो राष्ट्रीय स्तर का कानून पास हुआ वह थोड़ी-बहुत कमियों के बावजूद कुल मिलाकर एक अच्छा और मजबूत कानून माना गया है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की दुनिया में लोकतंत्र को विश्व स्तर पर बहुत व्यापक मान्यता प्राप्त हुई। जो देश लोकतांत्रिक नहीं थे उन्होंने भी इसे अपनी कमी के रूप में स्वीकार किया और सीमित लोकतांत्रिक व्यवस्थाएं अपनाने की चेष्टा की। पिछले लगभग दो दशकों में कई देशों में तानाशाहियों को समाप्त कर लोकतांत्रिक सरकारों की स्थापना हुई। पर लोकतंत्र की इस ऊपरी प्रगति के बावजूद बढ़ती संख्या में विचारवान लोगों ने महसूस किया कि लोकतांत्रिक व्यवस्था भीतर ही भीतर खोखली होती जा रही है। इसे सही अथरे में लोगों की भलाई और भागेदारी की व्यवस्था बनाने के लिए इसमें कई महत्त्वपूर्ण सुधारों की जरूरत है। सूचना के जन-अधिकार को भी ऐसे ही एक महत्त्वपूर्ण सुधार के रूप में देखा जा रहा है जो किसी भी लोकतंत्र के लिए आवश्यक है। पर क्या सूचना के अधिकार का कानून बन जाना ही पर्याप्त है? क्या मात्र इससे यह सुनिश्चित हो जाएगा कि सरकार और प्रशासन सही मायने में पारदर्शी हैं और वे लोगों से कुछ छुपाना नहीं चाहते? अमेरिका में बहुत समय से सूचना के अधिकार/स्वतंत्रता का कानून मौजूद है

भारत डोगरा
लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं।

मई 2005 में जब भारतीय संसद ने सूचना के जन-अधिकार का राष्ट्रीय स्तर का कानून पास किया तो लोकतंत्र को सशक्त करने वाले एक महत्त्वपूर्ण कानून के रूप में इसकी सराहना की गई। कई तरह के उतार-चढ़ाव के बाद अंत में भारत में जो राष्ट्रीय स्तर का कानून पास हुआ वह थोड़ी-बहुत कमियों के बावजूद कुल मिलाकर एक अच्छा और मजबूत कानून माना गया है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की दुनिया में लोकतंत्र को विश्व स्तर पर बहुत व्यापक मान्यता प्राप्त हुई। जो देश लोकतांत्रिक नहीं थे उन्होंने भी इसे अपनी कमी के रूप में स्वीकार किया और सीमित लोकतांत्रिक व्यवस्थाएं अपनाने की चेष्टा की। पिछले लगभग दो दशकों में कई देशों में तानाशाहियों को समाप्त कर लोकतांत्रिक सरकारों की स्थापना हुई। पर लोकतंत्र की इस ऊपरी प्रगति के बावजूद बढ़ती संख्या में विचारवान लोगों ने महसूस किया कि लोकतांत्रिक व्यवस्था भीतर ही भीतर खोखली होती जा रही है। इसे सही अथरे में लोगों की भलाई और भागेदारी की व्यवस्था बनाने के लिए इसमें कई महत्त्वपूर्ण सुधारों की जरूरत है। सूचना के जन-अधिकार को भी ऐसे ही एक महत्त्वपूर्ण सुधार के रूप में देखा जा रहा है जो किसी भी लोकतंत्र के लिए आवश्यक है। पर क्या सूचना के अधिकार का कानून बन जाना ही पर्याप्त है? क्या मात्र इससे यह सुनिश्चित हो जाएगा कि सरकार और प्रशासन सही मायने में पारदर्शी हैं और वे लोगों से कुछ छुपाना नहीं चाहते? अमेरिका में बहुत समय से सूचना के अधिकार/स्वतंत्रता का कानून मौजूद है, पर इसके बावजूद सरकार ने अपने सबसे महत्त्वपूर्ण निर्णयों के संदर्भ में (विशेष तौर पर इराक पर हमले और तथाकथित आतंकवाद विरोधी युद्ध के संदर्भ में, सैन्य खर्च तेजी से बढ़ाने के संदर्भ में) पारदर्शिता नहीं अपनाई है। सच बात तो यह है कि पूरी विश्व राजनीति को बेहद प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने वाले इराक पर हमले संबंधी निर्णय बहुत थोड़े से सलाहकारों के एक गुट द्वारा लिए गए और आम लोगों को इनके बारे में बड़े योजनाबद्ध ढंग से गुमराह किया गया। रिंचड क्लार्क, जो दस वर्ष तक अमेरिका के आतंकवाद विरोधी अभियान के मुखिया रहे हैं, ने अपनी पुस्तक अगेंस्ट ऑल इनमीजइ में लिखा है : मुझे संदेह है कि शायद ही किसी को बुश को यह समझाने का अवसर मिला हो कि इराक पर हमला करने से अमेरिका पहले से कम सुरक्षित हो जाएगा और उग्रवादी इस्लामी आंदोलन की ताकत बढ़ जाएगी। इ क्लार्क के अनुसार आतंकवाद पर जॉर्ज बुश की प्रतिक्रिया की खास बात यह थी कि जब उन्हें आतंकवाद को पनाह देने वाले देश को सबक सिखाना था तो उन्होंने ऐसे देश को नहीं चुना जो अमेरिका विरोधी आतंकवाद पनपा रहा था, अपितु इराक को चुना जो अमेरिका विरोधी आतंकवाद फैलाने में नहीं लगा था। जब इतने शीर्ष पद पर रहा व्यक्ति पूरी जिम्मेदारी से यह लिखता है तो स्पष्ट है कि उसमें कोई गहरा दर्द है। वैसे अमेरिकी समाज में सूचना की बाढ़ आई हुई है-किसी भी समाचार को निरंतर देने के लिए सैकड़ों प्रसार माध्यम समाचार पत्र, पत्रिकाएं, टीवी चैनल आदि मौजूद हैं। बाहरी तौर पर प्रेस की अभिव्यक्ति को गजब की स्वतंत्रता है। इसके बावजूद राष्ट्रपति बुश के दूसरे चुनाव के समय अमेरिकी जनता को एक सबसे महत्त्वपूर्ण मुद्दे के बारे में सही सूचना उपलब्ध नहीं थी। विश्व स्तर पर आम तौर पर यह जानकारी पहुंच चुकी थी कि सद्दाम हुसैन सरकार के पास न तो महाविनाशक हथियार थे और न ही उसका अल कायदा से या 9/11 के हमले से कोई संबंध था। पर इतने व्यापक और तथाकथित बेहद स्वतंत्रइ सूचना तंत्र वाले अमेरिका में अधिकांश मतदाता मानते रहे कि सद्दाम हुसैन की सरकार के पास महाविनाशक हथियार थे और उसका 9/11 के हमले से संबंध था। अमेरिकी नागरिकों की यह गलतफहमी कई सव्रेक्षणों में सामने आई। सवाल वाजिब है कि ऐसा तंत्र, जहां सूचना का अधिकार भी है, सब तरह का सूचनाओं के प्रसार की स्वतंत्रता है, बहुत से माध्यम सक्रिय हैं और अरबों डॉलरों का सूचना उद्योग है, वहां सबसे चर्चित मुद्दे पर सही जानकारी लोगों तक क्यों नहीं पंहुचती है?स्पष्ट है कि सूचना के अधिकार का कानून बनाने के लिए तैयार हो जाने का अर्थ यह नहीं है कि किसी सरकार का चरित्र मूल रूप से पारदर्शी और ईमानदार हो गया है। हां, इतना जरूर है कि सूचना के अधिकार का उपयोग सजगता और समझदारी से किया जाए तो इससे सरकार और प्रशासन को अधिक पारदर्शी और जवाबदेह बनाने के अवसर अवश्य उपलब्ध होते हैं। हमें कानून की संभावनाओं और सीमाओं, दोनों के प्रति सचेत रहते हुए मात्र कानून बनने से लक्ष्य प्राप्त हुआ नहीं मान लेना चाहिए। इस कानून से जो अवसर प्राप्त हुए हैं, उनका उपयोग करते हुए पारदर्शिता और लोकतंत्र को सशक्त करने के प्रयास निरंतर जारी रहने चाहिए। यदि नागरिकों ने ऐसी सजगता और सक्रियता नहीं दिखाई तो सरकारें पारदर्शिता का प्रदर्शन अधिक करेंगी पर पारदर्शिता को आत्मसात कम करेंगी। पारदर्शिता केवल किसी सरकार या सरकारी संस्थान के लिए नहीं अपितु सभी सामाजिक संस्थानों-संगठनों और सार्वजनिक जीवन जीने वाले सभी व्यक्तियों के लिए अत्यंत आवश्यक है। इन सब के लिए पारदर्शिता का अर्थ किसी वैधानिक मजबूरी से कहीं अधिक व्यापक होना चाहिए। पारदर्शिता का अर्थ केवल यह नहीं है कि यदि कानून ने हमें कोई सूचना सार्वजनिक करने के लिए कहा है

चुनावी चन्दा बांड की वकालत का मतलब.....

राकेश अचल

आप भी परेशान हैं और एक लेखक के नाते मै भी परेशान हूँ, क्योंकि हर बात अब राजनीति से शुरू होकर राजनीति पर ही समाप्त हो रही है।, जबकि माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी कहते हैं कि- हर बात में राजनीति नहीं देखना चाहिए। मै चाहता हूँ कि मुझे हर दिन मोदी जी का नाम न सुमरना पड़े, लेकिन दुर्भाग्य कि मोदी जी का नाम लिए बिना कोई बात न बनती है और न बिगड़ती है। मोदी यानि 56 इंच का सीना, मोदी जी यानि उलटा चोर कोतवाल को डाटे। पिछले दिनों सुप्रीम कोर्ट द्वारा असंवैधानिक घोषित किये जा चुके चुनावी चन्दा बांड्स को लेकर प्रधानमंत्री मोदी जी गर्व के साथ ही नहीं बल्कि सीना ठोंक कर कह रहे हैं कि जो लोग आज इलेक्टोरल बांड्स को लेकर नाच रहे हैं, वे कल पछतायेंगे। मोदी जी ने बात जिस दमखम से कही है उससे लगता है कि वे सुप्रीम कोर्ट के फैसले को नहीं मानते। उनकी नजर में इलेक्टोरल बांड्स आज भी गंगाजल की तरह पावन हैं। एक टीवी इंटरव्यून के दौरान जब उनसे यह पूछा गया कि- क्या चुनावी बॉण्ड डेटा से सत्तारूढ़ भाजपा को झटका लगा है? तो माननीय मोदी ने कहा, मुझे बताइए कि हमने ऐसा क्या कर दिया कि मैं इसे एक झटके के तौर पर देखूं ! मेरा दृढ़ विश्वास है कि जो इसे (बॉन्डक के विवरण) को लेकर हंगामा कर रहे हैं और इसपर गर्व कर रहे हैं उन्हें पछतावा होगा। देश कि सबसे बड़ी अदालत के फैसले को देश का सबसे बड़ा और जिम्मेदार आदमी ही यदि खारिज करता दिखाई दे तो किसी दूसरे से कोई क्या उम्मीद कर सकता है? उन्होंने जोर देकर कहा कि -कहा कि कोई भी प्रणाली पूरी तरह से सही नहीं है और खामियों को दूर किया जा सकता है। उन्होंने यह भी कहा कि इस विषय पर हंगामा करने वाले लोग पछताएंगे। जाहिर है कि मोदी जी हैं तो, न संविधान बड़ा है और न कोई अदालत। वे सबसे ऊपर थे, हैं और रहेंगे। और ये स्वाभाविक है। यदि उनकी सरकार तीसरी बार बनी तो तय मानिये कि मोदी जी इस असंवैधानिक घोषित किये जा चुके इलेक्टोरल बांड को ससम्मान संवैधानिक बना देंगे, क्योंकि ये बांड उनकी पार्टी के लिए कामधेनु साबित हुए हैं। दरअसल मै मोदी जी का जितना बड़ा और मुखर आलोचक हूँ उतना ही प्रशंसक भी।

वे जिस हिकमत अमली से गलत को सही और सही को गलत साबित करने में माहिर हैं, वैसा देश में आज कोई दूसरा नेता नहीं है। मोदी जी जैसा दमखम पूर्व के किसी प्रधानमंत्री में था ही नहीं। इंदिरा गाँधी में भी नहीं, जबकि वे तो तबकी भाजपा (जनसंघ) के लिए दुर्गा थीं। इंदिरा जी को भाजपा (जनसंघ) ने उदारतापूर्वक 1971 के भारत-पाक संग्राम के बाद बांग्लादेश बनवाने के लिए दुर्गा कहा गया था, कांग्रेससियों को चाहिए कि वो मोदी जी को देश को जबरन विश्वगुरु बनाने के लिए तांडव करने वाला शिव कहकर उऋण हो जाये। मोदी जी ने कांग्रेस द्वारा पिछले साढ़े छह दशक में जितना कुछ किया था, उसे एक दशक में ध्वस्त कर दिया। निर्माण और ध्वंश दो समानांतर क्रियाएं हैं, कोई देश बनाता है तो कोई देश बिगाड़ता है। मोदी जी दोनों काम एक साथ कर रहे हैं। वे अपने सपनों का देश बना रहे हैं, जिसमें उनके अलावा कोई दूसरा सुप्रीम नहीं है। फिल्म निमार्ता मनोज कुमार यदि आज अपनी कोई नई फिल्म बनाते तो उसमें गीत के बोल होते - मै उस देश का वासी हूँ, जिस देश में मोदी होते हैं इस देश को एक मोदी बना रहा है तो दस मोदी बिगाड़ रहे हैं। आज किसी भी राजनीतिक दल में, किसी सामाजिक कार्यकर्ता में इतनी क्षमता नहीं है कि वो इलेक्टोरल बांड के मामले में मोदी जी पैरवी को सुप्रीम कोर्ट कि अवमानना बताने का दुस्साहस कर सके। खुद सुप्रीम कोर्ट भी शायद मोदी जी के वक्तव्य को चुपचाप सुनकर अपमान का घूँट पीकर रह जाएगा। इलेक्टोरल बांड के समर्थन में सीना ठोंककर खड़े होना कोई आसान बात नहीं है। ये वो शौर्य है जिसके लिए मोदी जी को परमवीर चक्र दिया जा सकता है। प्रधानमंत्री श्री मोदी जी ने ने कहा कि उनकी सरकार की चुनावी बॉण्ड योजना के कारण ही चंदे के स्त्रोतों और इसके लाभार्थियों का पता लगाया जा सका।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

सुभाषित

जो दूसरेके धनका हरण, दूसरेकी स्त्रीका संसर्ग तथा सुहृद् मित्रका परित्याग करता है वह निश्चित ही विनाशको प्राप्त हो जाता है। ❐ विदुर नीति

आस्थाका सम्मान

सर्वोच्च न्यायालयने सोमवारको वाराणसीमें ज्ञानवापी स्थित व्यासजीके दक्षिणी तहखानेमें चल रही पूजा-अर्चनापर रोक लगानेसे इनकार कर दिया है। शीर्ष न्यायालयका यह फैसला न केवल स्वागतयोग्य है अपितु यह आस्थाकी भी जीत है। मुस्लिम पक्षने पूजा-अर्चनाकी अनुमतिके इलाहाबाद उच्च न्यायालयके निर्णयको चुनौती दी थी, जिसपर सर्वोच्च न्यायालयने रोक लगानेसे इनकार कर दिया। प्रधान न्यायाधीश न्यायमूर्ति डी.वाई. चन्द्रचूड़की अध्यक्षतावाली तीन सदस्यीय पीठने इस प्रकरणपर लगभग दो घण्टेतक सुनवाईके बाद यह आदेश दिया है। इसके साथ ही शीर्ष न्यायालयने हिन्दू और मुस्लिम दोनों पक्षोंको यथास्थिति बनाये रखनेका भी आदेश दिया है और कहा है कि ज्ञानवापीमें तय स्थानपर नमाज भी जारी रहेगी। शीर्ष न्यायालयने इस मामलेमें इलाहाबाद उच्च न्यायालयके आदेशको बरकरार रखा है। सर्वोच्च न्यायालयने अपने अन्तरिम आदेशमें स्पष्ट कर दिया है कि उसकी अनुमतिके बिना यथास्थितिमें बदलाव नहीं किया जाना चाहिए। शीर्ष न्यायालयने काशी विश्वनाथ मन्दिरके ट्रस्टीके साथ-साथ आचार्य वेद व्यास पीठ मन्दिरके मुख्य पुजारी शैलेन्द्र कुमार पाठक व्यासको नोटिस जारी कर ३० अप्रैलतक इस मामलेमें अपना जवाब दाखिल करनेका निर्देश दिया है। ३१ वर्ष पूर्व १९९३ में दक्षिणी तहखानेमें पूजा रोकी गयी थी लेकिन ३१ जनवरीको न्यायालयने ज्ञानवापीमें व्यासजीके दक्षिणी तहखानेमें पूजा करनेकी अनुमति दी थी और उसीके बाद वहां नियमित रूपसे पूजन-अर्चन शुरू हो गया है। शीर्ष न्यायालयका यह कहना भी पूरी तरहसे उचित है कि तहखानेमें होनेवाली पूजासे नमाजपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इसलिए यथास्थिति जारी रखी जाय। वस्तुत: इस प्रकरणमें शीर्ष न्यायालयने जो व्यवस्था और आदेश दिया है, वह तर्कसंगत है। इसका सम्मान दोनों पक्षोंको करना चाहिए। पूजन-अर्चन रोकनेकी मांग तर्कसंगत नहीं है। इस पूरे प्रकरणको न्याय और तर्कसंगत दृष्टिसे देखनेकी जरूरत है। इनमें पूर्वाग्रहका कोई स्थान नहीं होना चाहिए। न्यायालयने अत्यन्त ही सुविचारित ढंगसे दोनों पक्षोंके साथ न्याय किया है और इसमें पूजर्न-अर्चन और नमाज दोनोंको किसी भी स्तरपर प्रभावित नहीं किया गया है। दोनों ही धार्मिक कृत्य निर्धारित स्थानपर करनेकी व्यवस्था दी गयी है और यथास्थिति बनाये रखनेपर जोर दिया गया है। शीर्ष न्यायालयकी अनुमतिके बिना इसमें ऐसा कोई कार्य नहीं होना चाहिए जिससे न्याय प्रभावित होता है।

दवाओंपर महंगीकी मार

अप्रैल महीनेकी शुरुआतके साथ ही आम आदमीपर महंगीका बोझ बढ़ गया है। एक अप्रैलसे भारतमें तमाम जरूरी जीवनरक्षक दवाओं सहित आठ सौसे अधिक दवाइयोंकी कीमतको बढ़ा दिया गया है। अब मरीजोंको दर्दनिवारक, एण्टीबायोटिक, एण्टी-इन्फेक्टिव और कार्डियक आदि दवाओंकी खरीदपर पिछली कीमतसे १२ प्रतिशत अधिक दाम देना होगा। दरअसल सरकारने दवा कम्पनियोंको एनुअल होलसेल प्राइज इंडेक्सके अनुसार दवाओंके दाम बढ़ानेकी अनुमति दी है। नियमानुसार दवा कम्पनियां दवाओंके दाम एक सालमें दस प्रतिशतका ही इजाफा कर सकती हैं, लेकिन इस बार दो प्रतिशत ज्यादा यानी १२ प्रतिशत रेट बढ़ाये गये हैं, वहीं दवा कम्पनियां दाम बढ़ानेका कारण हर बार यही बताकर पल्ला झाड़ लेती है कि दवाइयोंको बनानेके लिए विदेशसे आनेवाला कच्चा माल या एक्टिव फार्मास्युटिक इंग्रेडिएंट्स महंगा हो गया है। इनकी पैकेजिंग और किरायेके दाम बढ़ गये हैं। ऐसेमें एक तरफ जहां आम आदमीके लिए घर चलाना काफी मुश्किल हो गया है, वहीं दूसरी तरफ दवाओंके दाम इतने अधिक बढ़ रहे हैं कि गरीब और आम लोगोंके लिए इलाज कराना भी मुश्किल हो जायगा। ऐसा भी नहीं है कि दवाओंकी कीमतमें वृद्धि काफी साल बाद हुई हो। दवाओंकी कीमत बढ़ानेका यह सिलसिला कोरोना महामारीके बाद तेजीसे शुरू हुआ है। पिछले कुछ सालोंमें जरूरी दवाओंकी कीमतोंमें १५ से २० प्रतिशतका इजाफा हुआ है। बड़ा सवाल है कि आमजन एक ओर अस्पतालोंका खर्च, डाक्टरोंकी महंगी फीस दे कि महंगी दवा खरीदे। दवा महंगी होती है तो सबसे पहले वह लोग प्रभावित होते हैं, जो महीनेमें पांचसे छह हजार रुपये दवाइयोंपर खर्च करता है। ऐसेमें एक तरीका यह है कि जेनेरिक दवाइयोंका इस्तेमाल करें, जो सस्ती होती हैं। हालांकि डाक्टरोंको ब्राण्डेड कम्पनियोंसे मिलनेवाला कमीशनका नतीजा है कि मरीजोंको जेनेरिक दवाएं नहीं लिखी जाती हैं। इस दिशामें सरकारकी इच्छाशक्तिकी कमी है। सरकारको इसको लेकर ठोस पहल करनी चाहिए और सख्त कानून बनाकर मरीजोंको राहत देनी चाहिए।

लोक संवाद

स्वास्थ्यपर दें ध्यान

महोदय,-गलत-खान पानके कारण इन दिनों कई तरहकी बीमारियोंका कारण बना हुआ है। इसके अलावा एक्सरसाइज न करनेकी आदत भी स्वास्थ्य संबंधी बीमारियोंको बढ़ावा दे रही है। डायबिटीज, हाई कोलेस्ट्रॉल, गठिया, दिल संबंधी बीमारियोंका छोटी उम्रमें ही लोग शिकार हो रहे हैं। इनसे बचनेके लिए अच्छा लाइफस्टाइल फॉलो करना जरूरी है। लोगोंमें स्वास्थ्य संबंधी बीमारियोंका जोखिम कम करने और उन्हें बीमारियोंसे बचानेके लिए हर साल ७ अप्रैलको वर्ल्ड हेल्थ डे मनाया जाता है। ऐसेमें इस दौरान आज आपको कुछ ऐसे टिप्स बताते हैं, जिन्हें अपनाकर आप हमेशाके लिए हेल्दी रह सकते हैं। आइये जानते हैं कैसे।

पर्याप्त नींद लें

अच्छे स्वास्थ्यके लिए पर्याप्त मात्रामें नींद लेना बहुत जरूरी है, जो लोग रातमें अच्छी तरहसे नहीं सो पाते वह किसी न किसी बीमारीसे परेशान रहते हैं। अच्छी नींद न सिर्फ शरीरको स्वस्थ रखती हैं, बल्कि इससे दिमाग भी स्वस्थ रहता है। पूरी नींद लेनेसे बीमार होनेकी सम्भावान भी कम होती है। यदि आपको भी रातमें अच्छी नींद नहीं आती तो कॉफीका सेवन न करें।

एक्सरसाइज करें

फिट और हेल्दी रहनेके सबसे पहला फॉर्मूला है एक्सरसाइज। कई शोधोंमें यह बात साबित हो चुकी है कि जो लोग हफ्तेमें तीन बारसे ज्यादा एक्सरसाइज करते हैं वह हमेशा स्वस्थ और हेल्दी रहते हैं। योग, डांस, एरोबिक्स और रनिंग जैसी एक्सरसाइज आप डेली रुटीनमें शामिल कर सकते हैं।

अच्छी डाइट लें

हेल्दी रहनेके लिए अच्छी डाइट फॉलो करना भी जरूरी है। एक दिनमेंसे कमसे कम तीन हेल्दी और पौष्टिक फूड्स जरूर खायें। वहीं डिनर हमेशा लाइट ही करें। डाइटमें आप खूब सारे फल, सब्जियां, साबुत अनाज, हेल्दी फैट और प्रोटीनसे भरपूर चीजें शामिल कर सकते हैं।

खूब पानी पिएं

शरीरको हाइड्रेटेड रखनेके लिए पर्याप्त मात्रामें पानी पियें। शरीरके अंगोंको अच्छी तरहसे काम करनेके लिए पर्याप्त मात्रामें पानीकी जरूरत होती है। इसके अलावा पानी पीनेसे शरीरसे विषाक्त पदार्थ बाहर निकलते हैं और किसी भी तरहकी इंफेक्शन भी दूर होती है।

नाश्ता न करें स्किप

कुछ लोग वजन कम करनेके लिए नाश्ता स्किप कर देते हैं लेकिन ऐसा बिल्कुल भी न करें। नाश्ता छोड़नेसे आपको ज्यादा भूख लग सकती है जिसके कारण आप ज्यादा खा लेंगे। इसके कारण आपका पाचन खराब हो सकता है।

तनाव न लें

तनाव लेनेके कारण वजन बढ़ना और मानसिक बीमारियोंका खतरा बढ़ता है। ऐसेमें इसे दूर करनेके लिए एक्सरसाइज अवश्य करें। इसके अलावा आप चाहें तो ब्रीदिंग एक्सरसाइज या मेडिटेशनके जरिये भी अपना तनाव कम कर सकते हैं। ध्यान रखें कि अच्छा स्वास्थ्य ही जीवनको खुशहाल रखता है। **-पलक खण्डेलवाल, वाया ईमेल।**

हिन्दी पत्रकारिताके उन्नायक

श्रद्धेय श्री सत्येन्द्र कुमार गुप्तजीका विराट व्यक्तित्व और विलक्षण कृतित्व था। आप जीवनपर्यन्त अपने सिद्धान्तोंपर अडिग रहे और जिस बातका औचित्य स्वीकार करते थे उसका दृढ़तासे प्रतिपादन करते थे। आपने पत्रकारिताकी पवित्र परम्पराको और समृद्ध किया। निस्सन्देह श्रद्धेय गुप्तजीने जो आदर्श प्रस्तुत किया है वह राष्ट्र सेवाके मार्गको सदा आलोकित करता रहेगा। ऐसे महापुरुष चिरस्मरणीय रहेंगे। आपके जन्मतिथिपर कोटिशः नमन्

❐ सुमन द्विवेदी

हिन्दी पत्रकारिताके उन्नयनमें परम श्रद्धेय श्री सत्येन्द्र कुमार गुप्तका विशिष्ट योगदान रहा है। आपने हिन्दी पत्रकारिताके आदर्श और मूल्योंके संरक्षण एवं संवर्धनके साथ राष्ट्रीय नवचेतनाका प्रसार कर उसे नया आयाम दिया। प्रधान सम्पादकके रूपमें अपने 'आज' को नयी ऊंचाई प्रदान की। आप सही अर्थमें सच्चे पत्रकार थे। आप उन राजनीतिक और उद्योगपति पत्र संचालकोंसे पृथक थे जो अपसंचय अथवा सम्पत्तिके साधनके रूपमें समाचारपत्रका इस्तेमाल करते हैं। आपका विश्वास था कि दैनिक समाचारपत्रको समाज और राष्ट्रकी आवाजका शक्तिशाली माध्यम होना चाहिए। इस दिशामें आपने जो अभिनव कार्य किया, वह सदा स्मरणीय रहेगा। श्रद्धेय गुप्तजीने सन् १९४२ से सोलह वर्षोंतक 'आज' का संचालन कुशलतापूर्वक किया और उसके बाद सन् १९५९ में प्रधान सम्पादकका गुरुगम्भीर दायित्व वहन किया। यह ऐसा समय था जब स्वतन्त्रताके बाद राष्ट्रके पुनर्निर्माणकी समस्या सामने खड़ी थी। समाज रूढ़ीवाद, पिछड़ापन, निरक्षरता, दरिद्रता और अशिक्षा जैसी अनेक समस्याओंसे संत्रस्त था। समाचारपत्र भी परिवर्तनके दौरसे गुजर रहे थे। अब उनका स्वरूप वैसा नहीं रहा जैसा स्वतन्त्रतासंग्रामके साथ था। मिशनकी भावनाका लोप हो चुका था। व्यावसायिक मानसिकता और व्यावसायिक वास्तविकताने पत्रोंके स्वरूप और उद्देश्योंको ही बदल दिया था। उद्योग, व्यापार और राजनीतिका नया अर्थ नवीन शक्तिके रूपमें समाजको प्रभावित कर रहा था। ऐसे संक्रमण कालमें श्रद्धेय गुप्तजीने दूरदर्शिता, दृढ़संकल्प और अटूट निष्ठासे 'आज' की गौरवमयी परम्पराकी रक्षा करते हुए उसे नयी दिशा दी।

राष्ट्ररत्न श्री शिवप्रसाद गुप्तने सन् १९२० में जिन महान उद्देश्योंको लेकर 'आज' की स्थापना की थी, उनके लिए श्रद्धेय गुप्तकी प्रतिबद्धता अडिग थी। आपने संसाधनोंके भीषण संकटके बावजूद करवट बदलते युगके अनुरूप 'आज' को नया रूप और नया कलेवर दिया। एक ओर जहां समाचारपत्रोंको लाभ अर्जित करनेका माध्यम बनाया जा रहा था, वहीं आपने सबसे अलग हटकर पत्रको जनसेवा और राष्ट्रीय जागरणका माध्यम बनाये रखा। व्यावसायिक आग्रहके बढ़ते दबावमें सामाजिक दायित्वका निर्वाह कठिन हो गया था किन्तु दोनोंके बीच सन्तुलन स्थापित कर आपने जो आदर्श प्रस्तुत किया वह अनुकरणीय है। पराधीन भारतमें स्थापित समाचारपत्रोंका मुख्य उद्देश्य विदेशी शासकोंको उखाड़ फेंकना था किन्तु स्वतन्त्रताप्राप्तिके बाद पत्रोंका उद्देश्य बदल गया था। 'आज' राष्ट्रके पुनर्निर्माण एवं गौरववर्धनके साथ जनहितको सर्वोपरि रखा, इसका श्रेय श्रद्धेय गुप्तजीको है। परिणामस्वरूप 'आज' का जो महत्व स्वतन्त्रताप्राप्तिसे पूर्व था, वह स्वतन्त्रताके बाद द्विगुणित हुआ। श्रद्धेय गुप्तजी 'आज' के माध्यमसे जनताके कष्टों और उनकी ज्वलन्त समस्याओंके प्रति सरकारका ध्यान आकृष्ट करते थे और उनके समाधानके लिए प्रेरित भी करते थे। पत्रमें प्रकाशित समाचारोंकी चर्चा प्राय: संसदमें होती थी। 'आज' में प्रकाशित समाचारोंके कारण ही जवाहरलाल नेहरूको पूर्वांचलके पिछड़ेपन और गरीबीकी स्थितिके अध्ययन एवं उसके निदानके लिए पटेल समितिका गठन करना पड़ा था। आपने अखबारी कागजके घनघोर संकटके दौरमें भी 'आज' का पृष्ठ विस्तार कर उसे नये भारतकी आवश्यकताके अनुरूप बनाया। पत्रमें देश-विदेशके समाचारको ही नहीं, सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं लोकमंगलसे जुड़ी खबरोंको भी समान रूपसे महत्व दिया जाने लगा। अपने पत्रके माध्यमसे राष्ट्रके नवनिर्माणके प्रति समाजके नवचेतनाका संचार किया। आपने गांवोंकी लुप्त होती लोकसंस्कृतिके पुनरुद्धारका विशेष प्रयास किया। पत्रमें गांवोंके समाचारोंको अधिक स्थान दिया गया। इसके अतिरिक्त गांवोंकी चिट्ठी प्रकाशित होती थी जिसे सभी वर्गके पाठक रुचिसे पढ़ते थे।

समाचारोंकी विश्वसनीयता पत्रकी पूंजी होती है। यही सफलताकी कुंजी होती है जो समाचारपत्रोंकी सार्थकता सिद्ध करती है। श्रद्धेय गुप्तजीने कभी इससे समझौता नहीं किया। यही कारण था कि 'आज' का स्तर अंग्रेजीके उत्तम पत्रोंसे जरा भी कम नहीं था। आप वस्तुनिष्ठताकी कसौटीपर खरे उतरनेमें सतत, सजग एवं सक्रिय रहे। इसीसे 'आज' राष्ट्रका सर्वाधिक लोकप्रिय पत्र बना रहा। आपका मानना था कि लिखे हुए शब्द सत्यनिष्ठ

जन्मतिथि ३ अप्रैल, १९१८ पुण्यतिथि ६ नवम्बर, १९८४

होने चाहिए और यह निर्देश भी था कि सत्यका निरूपण करना व्यर्थ है किन्तु उसकी अभिव्यक्तिकी भी मर्यादा है जिनकी व्यंजना जन-कल्याणकारी भावनासे ही करनी चाहिए।

श्रद्धेय गुप्तजीने हिन्दी पत्रकारिताको अद्यतन रूप प्रदान करनेके साथ हिन्दीके प्रचार-प्रसारमें महत्वपूर्ण योगदान किया है। आपके मातमह राष्ट्ररत्न श्री शिवप्रसाद गुप्त हिन्दीके अनन्य सेवक थे। श्रद्धेय गुप्तजीको हिन्दी प्रेम विरासतके रूपमें प्राप्त हुआ था। आपने विदेशोंमें उच्च शिक्षा प्राप्त की थी फिर भी आपमें भारतीय संस्कार मूर्तिमान थे। आप नये विचारोंका आदर करते थे किन्तु भारतीय मनीषाकी कसौटीपर कसकर ही ग्रहणीय मानते थे। आप हिन्दीको राष्ट्रीयताका प्रतीक मानते थे। जब भी कभी ऐसा अवसर उपस्थित होता और आपको अनुभव होता कि हिन्दीपर किसी प्रकारकी चोट पहुंचनेवाली है, आप सिंहकी भांति तन जाते और पूरी शक्तिके साथ उसका विरोध करते थे। अप्रैल १९६९ की घटना प्रासंगिक है। तत्कालीन केन्द्र शिक्षामंत्री डा. वी.के. आर.वी. रावने एक समारोहमें हिन्दीके स्वरूपपर विचार व्यक्त किया। उनके अनुसार संविधानमें जिस हिन्दीको सम्पर्क भाषाके रूपमें निर्धारित किया गया, उसका अभिप्राय विशुद्ध हिन्दी नहीं, प्रत्युत मिली-जुली हिन्दी है। श्रद्धेय श्रीगुप्तजीने उक्त विचारको असंगत माना और आपने उसपर 'आज' में लिखा कि वस्तुत: केन्द्रीय शिक्षामंत्रीका यह कथन अत्यन्त भ्रामक है। भ्रामक इस अर्थमें कि संविधानमें हिन्दीको देशकी राजभाषा घोषित किया गया है। उसे केवल सम्पर्ककी भाषा कहना उसका असम्मान करना है। जिस भाषाका आरम्भसे राष्ट्रीय भाषाके रूपमें विकास हुआ है, उसके स्वरूपके सम्बन्धमें नित्य एक नयी बात कहकर भ्रम नहीं फैलाया जाना चाहिए। उक्त तीखी टिप्पणी आपके हिन्दी प्रेमका नमूना है। 'आज' का रविवासरीय विशेषांक आपके हिन्दी प्रेम तथा सांस्कृतिक, साहित्यिक पत्रकारिताको प्रोत्साहनका साक्षी रहा है।

श्रद्धेय गुप्तजीका विराट व्यक्तित्व और विलक्षण कृतित्व था। असाधारण प्रतिभा और क्षमताके धनी राष्ट्ररत्न श्री शिवप्रसाद गुप्तने आपको अपना उत्तराधिकारी बनाया। उनकी धरोहरका संवहन सरल एवं सहज नहीं था। आपने न केवल उनको सहेजा अपितु संवर्धित भी किया। आप अपने सिद्धान्तोंपर अडिग रहे और जिस बातका औचित्य स्वीकार करते थे उसका दृढ़तासे प्रतिपादन करते थे। आपने पत्रकारिताकी पवित्र परम्पराको दूषित नहीं होने दिया एवं विवेकका सदैव समादर किया। आप निर्भीकताके साथ अपने विचार प्रस्तुत करते थे। पंडित जवाहरलाल नेहरूके साथ आपके घनिष्ठ पारिवारिक सम्बन्ध थे। इसके बावजूद उनकी कतिपय नीतियोंकी आलोचना करनेसे नहीं हिचकते थे। आपकी विचारधारा मूलत: राष्ट्रवादी थी। बीसवीं सदीके छठें दशकके पूर्वार्धमें समाजवादकी जो लहर चली उसने राष्ट्रीय राजनीतिको प्रभावित किया। राजनीतिक द्वन्द्वोंके इस झंझावातमें आपने अपने राजनीतिक लेखमें उसी मार्गपर चलनेकी सलाह दी, जिससे राष्ट्रकी सर्वांगीण उन्नति हो। वामपंथ एवं दक्षिणपंथके बजाय आप मध्यमार्गके अनुगमनके पक्षधर थे।

'आज' का प्रत्येक अंक अपने सम्पादकके व्यक्तित्वकी उद्घोषणा करता था। दूर-दूरतक फैले लाखों पाठकों तक 'आज' के ताजा समाचार तथा नयी-नयी जानकारियां शीघ्रताशीघ्र पहुंचानेके लिए श्रद्धेय गुप्तजीने आधुनिक मुद्रण यन्त्र स्थापित किये। राष्ट्रीय-अन्तरराष्ट्रीय समाचारोंके साथ राजनीतिक सिंहावलोकन, विभिन्न विषयोंके लेख तथा अन्य पठनीय सामग्रीके प्रकाशनकी व्यवस्था की गयी। प्रत्येक सप्ताह 'जनताका न्यायालय' के स्तम्भके अन्तर्गत ज्वलन्त प्रश्नोंके बारेमें पाठकोंकी राय एवं सुझाव प्रकाशित किये जाते थे। कार्टूनके नियमित प्रकाशनका प्रबन्ध किया गया। विशेष अवसरोंके लिए 'विशेषांक' की श्रृंखला शुरू की गयी। कार्टूनका नियमित प्रकाशन पाठकोंके लिए आकर्षण एवं कौतूहलका विषय ही बन गया था। पाठकोंकी रुचिके अनुसार पत्रमें उपयोगी एवं ज्ञानवर्धक सामग्रीके प्रकाशनका प्रबन्धन किया गया। इन समीकरणोंसे 'आज' सर्वाधिक लोकप्रिय बन गया। निस्सन्देह श्रद्धेय गुप्तजीने जो आदर्श प्रस्तुत किया है वह राष्ट्र सेवाके मार्गको सदा आलोकित करता रहेगा। परम श्रद्धेय गुप्तजीको कभी लहर बांध नहीं सकी और वह सभी प्रकारके वाद-विवादसे परे थे, ऐसे महापुरुषकी १०६वीं जन्मतिथिपर उन्हें शत-शत नमन।

जल संसाधनोंका कुप्रबंधन

यथाशीघ्र हमें पानीके संबंधमें सक्रिय होना आवश्यक है। जलके साथ, हवा, मिट्टी, वन, पहाड़ आदिके लिए भी सचेत होना चाहिए। पानी हमारे प्राणोंसे जुड़ा है। इसके लिए हम सबकी पहल जरूरी है, अन्यथा आनेवाला समय भयावह होगा। जल ही जीवन है। जलके बिना कलकी कल्पना नहींकी जा सकती। जागरूकता ही विकल्प हैं।

❐ डा.वरिंद्र भाटिया

बाइस मार्चको विश्व जल दिवस मनाया गया। खबरोंके अनुसार इस समय दुनियामें बढ़ता जल संकट वैश्विक स्तरपर तनाव और अस्थिरतामें वृद्धि कर रहा है। संयुक्त राष्ट्रने विश्व जल दिवसके मौकेपर जारी एक रिपोर्टमें यह चेतावनी दी है। यूएनकी ओरसे जारी रिपोर्ट यूएन वर्ल्ड वॉटर डेवलपमेंट रिपोर्ट २०२४ की थीम 'शांति और समृद्धिके लिए जल जरूरी' रखी गयी है। रिपोर्टमें कहा गया है कि सभीके लिए स्वच्छ जलकी उपलब्धता दुनियामें शांतिके लिए जरूरी है। रिपोर्टमें कहा गया है कि दुनियामें फिलहाल करीब एक-चौथाई मानवता यानी २.२ अरब लोगोंकी पहुंच स्वच्छ पेयजलतक नहीं है और ३.५ अरब लोग स्वच्छ और साफ स्थितियोंमें जीवनयापन नहीं कर रहे हैं। रिपोर्टमें यह भी कहा गया है कि जल संकटका पहला शिकार बालिकाएं और महिलाएं होती हैं, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रोंमें रहनेवाली महिलाएं, क्योंकि परिवारके लिए पानी लाने और संग्रह करनेकी जिम्मेदारी मुख्य रूपसे उन्हींपर होती है। रिपोर्टके अनुसार लड़कियोंको अस्वच्छ हालातमें दिनके कई घंटे पानी लाने और ले जानेमें बिताने पड़ते हैं। इस कारण उनका स्कूल छूट जाता है। इसे रोकना चाहिए। जल उपलब्धतामें कमीके कारण दुनियामें अराजकताके हालात पैदा हो रहे हैं। जलकी कमी दुनियाभरमें पलायनका प्रमुख कारण है और विस्थापित लोग जिन स्थानोंपर बसते हैं वहां संसाधनोंपर दबाव पड़ता है। यूएनकी रिपोर्टमें सोमालियामें एक अध्ययनका हवाला दिया गया है जिसमें विस्थापित लोगोंके एक समूहके खिलाफ महिला उत्पीड़न और हिंसामें २०० प्रतिशतकी वृद्धि दर्ज की गयी थी।

रिपोर्टके अनुसार दुनियामें कमसे कम दस प्रतिशत वैश्विक पलायन जल संकटसे जुड़ा हुआ है। अब जबकि दुनियामें जलवायुसे जुड़ी अनियमितताएं बढ़ रही हैं, इससे जुड़ा पलायन भी बढ़ना तय है। रिपोर्टके अनुसार जल संकटसे सबसे ज्यादा प्रभावित गरीब देश हैं, जिनके लिए जलवायु परिवर्तनसे अनुकूलनके समुचित साधन नहीं हैं। रिपोर्टमें कहा गया है कि गरीब देशोंमें ८० फीसदी नौकरियां पानीपर निर्भर होती हैं, क्योंकि यहां रोजगार सेक्टरकी निर्भरता कृषिपर होती है, जबकि विकसित देशोंमें रोजगारकी पानीपर निर्भरता ५० फीसदी ही होती है। ऐसेमें गरीब देशोंमें जल संकटसे समूची अर्थव्यवस्थामें संकट और तनाव खड़ा हो जाता है, जो कि दुनियामें अस्थिरताका कारण बनता है। बढ़ती जनसंख्या और पानीकी अधिक खपतकी प्रवृत्तियोंपर गहराईसे नजर डालें तो तो यह पता चल सकता है कि १९०० से वैश्विक तौरपर ताजे जलकी खपत छह गुना क्यों बढ़ गयी है। ताजे जलकी निश्चित मात्राकी बढ़ती मांगसे पानीसे जुड़े कई विवाद पैदा हो रहे हैं। लेकिन अधिकतर जल संबंधी समस्याएं स्थानीय हैं, वैश्विक नहीं। अपने देशमें भी गर्मीके मौसमसे पहले भारतके १५० प्रमुख जलाशयोंमें भंडारण क्षमता उनकी कुल क्षमताका केवल ३८ प्रतिशत है, जो पिछले दशककी इसी अवधिके औसतसे कम है। बेंगलुरू जैसे शहर पहलेसे ही २६०० मिलियन (दस लाख) लीटर प्रतिदिन (एमएलडी) की मांगके मुकाबले लगभग ५०० एमएलडी पानीकी कमीसे जूझ रहे हैं। साल १९४७ में जब भारत स्वतंत्र हुआ था तो प्रति व्यक्ति ५००० क्यूबिक मीटर पानी उपलब्ध था। साल २०२१ से २०३१ के बीच यह १४८६ से गिरकर १३६७ क्यूबिक मीटर हो जायगा। इसका अर्थ यह है कि ऐसी कम उपलब्धताके साथ हम पानीके संकटमें हैं।

चिंताजनक यह भी है कि जितना कम पानी उपलब्ध होगा, उतना ही वह प्रदूषित भी होता चला जायगा। हमें ४००० अरब क्यूबिक मीटर पानी जो बारिशकी कृपासे मिलता है, उसका हम मात्र ११०० क्यूबिक मीटर ही उपयोगमें ला पाते हैं। अपने देशमें ७० फीसदी पानी उपयोगके लिए अयोग्य पाया गया है। यही कारण है कि बोतलबंद पानीका व्यापार लगातार बढ़ता जा रहा है। ध्यान रहे, एक लीटर पानीकी बोतलके पीछे तीन लीटर पानी खराब होता है और बोतलें प्लास्टिक प्रदूषण भी पैदा कर रही हैं। इस समय धरतीपर पानीका संकट लगातार बढ़ता जा रहा है। इसकी चपेटमें भारत समेत दुनियाके कई देश हैं। भारतमें ऐसे शहर हैं, जहां पानीके लिए हाहाकार मच सकता है। इन पांच शहरोंमें दिल्ली, राजस्थानका जयपुर, पंजाबका बठिंडा, मुंबई और चेन्नई शामिल हैं। विशेषज्ञोंका कहना है कि जल संकट एक राष्ट्रव्यापी मुद्दा है। भारतमें दुनियाकी आबादीका १८ प्रतिशत है, लेकिन जल संसाधन केवल चार फीसदी हैं। भारतका जो मुख्य जल भंडार है, वह इस वक्त पांच सालमें अपने सबसे निचले स्तरपर है। नीति आयोगकी एक रिपोर्टके मुताबिक २०३० तक ४० फीसदी भारतीयोंको पीनेका पानी उपलब्ध नहीं होगा। लगभग ६०० मिलियन भारतीय पहलेसे ही गम्भीर जल संकटसे जूझ रहे हैं। रिपोर्टमें चिंताजनक भूजल उपलब्धतावाले २१ शहरोंका उल्लेख किया गया है। इसमें दिल्ली, गुरुग्राम, गांधीनगर, जयपुर, चेन्नई, हैदराबाद, आगरा, इंदौर, अमृतसर, वेल्लोर, चेन्नई एवं लुधियाना शामिल हैं। एक रिपोर्टके अनुसार दिल्लीकी आबादी २.४ करोड़ है। यहां ६०० मिमी प्रति मिनट वर्षा होती है, जो जरूरतसे काफी कम है। दिल्ली ५० फीसदी पानीकी जरूरतोंके लिए हरियाणा, उत्तर प्रदेश और पंजाबपर निर्भर है।

यदि इन राज्योंने इनकार कर दिया तो दिल्ली बर्बादीके कगारपर पहुंच जायगी। इसी तरह मुंबई समुद्रके किनारे बसा है। यहां भारी मात्रामें बारिश होती है। मुंबई अच्छे जल संसाधनोंसे समृद्ध है, लेकिन तेजीसे हो रहे शहरीकरण और जनसंख्या विस्फोटके सामने जल संसाधन प्रबंधन प्रभावी नहीं हैं। इसलिए आनेवाले समयमें यहां भी पानीकी किल्लत हो सकती है। और तो और, भले ही पंजाबमें पांच नदियां हैं, लेकिन इसकी कृषि जल खपत वॉटर रिचार्जकी तुलनामें बहुत अधिक है। नीति आयोगकी रिपोर्टमें पंजाबके कई शहरोंपर जल संकटका खतरा बताया गया है। इसे जांचना होगा। पानीकी कमी एक मानव निर्मित आपदा है, इसलिए जल संसाधनके कुप्रबंधनको ठीक करना जरूरी है। इस बिंदुपर रहीमका एक दोहा याद आता है- रहिमन पानी राखिए बिन पानी सब सून। महान कवि रहीम भी जल संकट की मौजूदा स्थितिको काफी पहले समझ गये थे कि आनेवाले समयमें पानी कितना जरूरी है। उनके इस दोहेका सीधा-सा अर्थ यही है कि पानीके बिना सब सूना है। इसके बिना लोगोंकी जिन्दगी निरर्थक हो जाती है। जिस तरहसे पानी घटता जा रहा है, वह हमें नष्ट कर देगा। हमें यह समझना होगा कि पानीके बारेमें हाथपर हाथ धरे निश्चिंत रहनेका समय बहुत पहले बीत चुका है। अब कोई भी बहाना, लापरवाही या गलती करनेका मौका हमारे पास नहीं है। इसलिए यथाशीघ्र हमें पानीके संबंधमें एकजुट होकर सक्रिय होना आवश्यक है। जलके साथ-साथ हवा, मिट्टी, वन, पहाड़ आदिके लिए भी हमें सचेत होना चाहिए। पानी आवश्यकता ही नहीं, हमारे प्राणोंसे जुड़ा है। इसके लिए हम सबकी पहल जरूरी है, अन्यथा आनेवाले समयमें क्या देश और क्या दुनिया, सभीको प्यासे ही गुजर-बसर करना होगा। जल ही जीवन है। जलके बिना कलकी कल्पना नहीं की जा सकती। जल संरक्षण, वॉटर रिजार्च और जन-जागरूकता ही विकल्प हैं। लोगोंकी भागीदारीके बिना यह संभव नहीं है। जल संरक्षण करना जरूरी है और इसके लिए

शक्तिपीठ

❐ अनन्या मिश्र

भारतमें तमाम प्रसिद्ध दुर्गा मंदिर हैं। वहीं नौ अप्रैलसे चैत्र नवरात्रिकी शुरुआत होने जा रही है। ऐसेमें आप भी मां दुर्गाके इन प्रसिद्ध मंदिरोंमें दर्शनके लिए जा सकते हैं। देखा जाय तो ज्यादातर मंदिर पहाड़ोंपर बसे हुए हैं। इनमेंसे सबसे ज्यादा प्रसिद्ध मंदिर माता वैष्णो देवी कटराको माना जाता है। हालांकि देवी मांके दर्शन करनेके लिए किसी दिन विशेषकी जरूरत नहीं होती है। इसके लिए बस श्रद्धा चाहिए। यदि आप भी मां दुर्गाके मंदिरोंके दर्शन करना चाहते हैं तो यह आर्टिकल आपके लिए है। आज इस आर्टिकलके जरिये हम आपको देवी मांके पांच प्रसिद्ध मंदिरोंके बारेमें बताने जा रहे हैं। जहांपर दर्शन मात्रसे हर भक्तकी मनोकामना पूरी हो जाती है।

कामाख्या मंदिर

भारतके गुवाहाटीमें स्थित कामाख्य देवी मंदिरको प्रमुख शक्तिपीठोंमेंसे एक माना जाता है। कहा जाता है कि जब माता सती पिता द्वारा किये जा रहे यज्ञकुण्डमें समाहित हो गयी तो भगवान शिव अत्यन्त भावुक हुए और उनके शवको लेकर ताण्डव करने लगे। जिससे समस्त देवगण व्याकुल हो गये तब भगवान विष्णुने अपने सुदर्शन चक्रसे माता सतीके अंगोंको बावन खण्डोंमें विभाजित कर दिया। देवीके शरीरके बावन टुकड़े जहां-जहां गिरे वही बावन शक्तिपीठ कहलाये। असमकी पहाड़ियोंमें देवीके शरीरका योनि

आत्मबोध

भाग गिया। इससे यह स्थल अत्यन्त पावन हो गया। तन्त्रकी अधिष्ठात्री देवी कामाख्याको इसीलिए तंत्रोक्त साधनामें उनके निवास स्थलपर जाकर साधना करनेको अत्यन्त आवश्यक माना जाता है। इस मंदिरकी गुफामें एक योनिकी मूर्ति है, जिसे बेहद पवित्र माना जाता है। हर साल दूर-दूरसे भक्त मंदिर दर्शनके लिए आते हैं। वहीं नवरात्रिका पर्व यहांपर जोश और उत्साहके साथ मनाया जाता है।

माता वैष्णो देवी मंदिर

जम्मू-कश्मीरके कटरा जिलेमें मां वैष्णों देवीका मंदिर है। साल भर सैकड़ोंकी संख्यामें श्रद्धालु मंदिरमें दर्शनके लिए पहुंचते हैं। माता वैष्णों देवीका मंदिर १०८ शक्तिपीठोंमेंसे एक है। बता दें कि माता वैष्णो देवीको मां दुर्गाका रूप माना जाता है। मां वैष्णो देवी मंदिरकी पवित्र गुफाके भीतर निवास करती हैं। कटरासे १३ किमी चढ़ाई करनेके बाद वैष्णो धाम पहुंचते हैं।

महाकाली देवी मंदिर

मध्य प्रदेशके शिप्रा नदीके किनारे प्राचीन शहर उज्जैनमें एक छोटी-सी पहाड़ीपर महाकाली देवीका मंदिर बना है। हिन्दू पौराणिक कथाके मुताबिक जब श्रीविष्णुने मां सतीके मृत देहपर सुदर्शन चक्र चलाया था तो देवी सतीका ऊपरी होंठ उस जगह गिरा था, जहांपर वर्तमान समयमें यह मंदिर बना है। इस मंदिरमें महालक्ष्मी, ग्रह कालिका और देवी सरस्वतीकी पूजा की जाती है।

कालीघाट मंदिर

नवरात्रिके दौरान कोलकाताके मंदिरोंमें दुर्गा पूजा काफी धूमधामसे मनाया जाता है। मान्यताके मुताबिक कोलकाताके कालीघाट मंदिरमें मां सतीके दाहिने पैरका अंगूठा गिरा था। बताया जाता है कि यह मंदिर करीब २००० सालसे भी अधिक पुराना है। नवरात्रिके मौकेपर यहां हजारोंकी संख्यामें भक्त दर्शनके लिए आते हैं। यह मंदिर आदि गंगा नामक एक छोटेसे जल निकायके तटपर बना है।

चामुंडेश्वरी मंदिर

चामुंडेश्वरी मंदिर मैसूरमें चामुंडी पहाड़ियोंकी चोटीपर स्थित है। बताया जाता है कि यहांपर मां सतीके बाल गिरे थे। जिसके बाद होयसल शासकोंने १२वीं शताब्दीमें देवीके नामपर एक मंदिर बनवाया। इस मंदिरमें दर्शन करनेके दौरान इसकी भव्य वास्तुकलाका आनन्द जरूर लें।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

गरीबों से सबसे ज्यादा टैक्स वसूली जीएसटी से

केंद्र एवं राज्य सरकारों द्वारा पुरानी विक्रय कर व्यवस्था को समाप्त कर, वर्ष 2017 से जीएसटी वस्तु एवं सेवा कर के रूप में टैक्स की जो नई व्यवस्था शुरू की है। उसमें सबसे ज्यादा टैक्स गरीबों को देना पड़ रहा है। वित्तीय वर्ष 2017-18 में जब यह टैक्स शुरू हुआ था। उस वित्तीय वर्ष में 7.9 लाख करोड़ रुपए जीएसटी से केंद्र एवं राज्य सरकारों को मिले थे। उसके बाद से दायरा निरंतर बढ़ता चला गया। वस्तुओं पर टैक्स के अलावा सेवाओं को जीएसटी के दायरे में लाकर बहुत सारी चीजों को शामिल किया गया। जिसके कारण जीएसटी का कलेक्शन साल दर साल बढ़ता रहा। वस्तुओं की खरीदी के साथ-साथ अब हर किस्म की सेवा में भी जीएसटी का भुगतान गरीब और अमीर सभी को करना पड़ रहा है। जिन सेवाओं पर कभी कोई टैक्स नहीं लगता था, उन सभी को टैक्स के दायरे में लाया गया है। टैक्स की दरें भी बहुत ज्यादा होने के कारण, जीएसटी का बोझ आम आदमी पर बढ़ता ही जा रहा है। सरकार की प्रतिमाह जीएसटी की कमाई लगातार बढ़ रही है। यह टैक्स जनता से ही वसूल किया जा रहा है। 2017-18 में जीएसटी से 7.19 लाख करोड़, 2018-19 में 11.77 लाख करोड़, 2019-20 में 12.22 लाख करोड़, 2020-21 में 11.36 लाख करोड़, इस वित्तीय वर्ष में कोविड के कारण लंबे समय तक लॉकडाउन लगा रहा। 2021-22 में 14.76 लाख करोड़ रुपए की आय सरकार को हुई। उसके बाद केंद्र एवं राज्य सरकारों ने जीएसटी के दायरे में अन्य वस्तुओं और सेवाओं को शामिल किया। इस कारण 2022-23 और 2023-24 में जीएसटी की आय बड़ी तेजी के साथ बढ़ना शुरू हुई। वर्ष 2023 के मुकाबले में वर्ष 2024 में जीएसटी के कलेक्शन में 22 से 23 फ़ीसदी तक की वृद्धि देखी जा रही है। केंद्र सरकार द्वारा जो राज्यवार आंकड़े जारी किए गए हैं, उसमें कर्नाटक राज्य से 26 फ़ीसदी, हरियाणा में 23 फ़ीसदी, महाराष्ट्र में 22 फ़ीसदी, पंजाब राज्य में 20 फ़ीसदी, उत्तर प्रदेश में 19 फ़ीसदी, मध्य प्रदेश में 19 फ़ीसदी, गुजरात में 15 फ़ीसदी, राजस्थान में 15 फ़ीसदी तथा बिहार राज्य में 14 फ़ीसदी की दर से टैक्स कलेक्शन में वृद्धि हुई है।

बिहार की राजनीति का 'चिराग' संभावना का वाहक

आरती कुमारी

खुद को प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का हनुमान बताने वाले युवा नेता चिराग पासवान इन दिनों बिहार की राजनीति में लाइमलाइट में हैं। राजनीतिक कौशल एवं प्रभावी रणनीति के तहत तेजी से अपनी राजनीतिक जमीन को मजबूती देते हुए बिहार की राजनीति का 'चिराग' संभावना का वाहक बन रहा है। चिराग पासवान सक्षम जनप्रतिनिधि के साथ-साथ मौलिक सोच एवं संवेदनाओं के प्रतीक हैं। उन्हें सूक्ष्मदर्शी और दूरदर्शी होकर प्रासंगिक एवं अप्रासंगिक के बीच भेदरेखा बनाने एवं अपनी उपस्थिति का अहसास कराने का छोटी उम्र में बड़ा अनुभव है जो भारतीय राजनीति के लिये शुभता का सूचक है। लोकतंत्र का सच्चा जन-प्रतिनिधि वही है जो अपनी जाति, वर्ग और समाज को मजबूत करने के साथ देश को मजबूत करें। 'बिहार फर्स्ट, बिहारी फर्स्ट' की लड़ाई लड़ने वाले चिराग 14 करोड़ बिहारियों को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने के लिये प्रतिबद्ध है। आगामी लोकसभा चुनाव-2024 चिराग का सशक्त एवं उम्मीदभरा राजनीतिक भविष्य उजागर करते हुए बिहार के शीर्ष नेतृत्व की ओर अग्रसर करे तो कोई आश्चर्य नहीं। इस बात के संकेत इनदिनों की बिहार की राजनीति गतिविधियों से मिलने लगे हैं। गतदिनों भाजपा मुख्यालय से विनोद तावड़े ने बिहार के एनडीए गठबंधन में सीट शेयरिंग का अपना फॉर्मूला सार्वजनिक किया, जिसमें भाजपा को 17 सीटें, जदयू को 16 सीटें तो चिराग पासवान के नेतृत्व वाली लोजपा (रामविलास) के खाते में 5 सीटें गईं। वहीं उपेंद्र कुशवाह और जीतनराम मांझी की पार्टी को एक-एक सीट दी गई। बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के आवास की एक बड़ी तस्वीर सामने आई, जिसमें नीतीश चिराग के कंधे पर हाथ रखे आशीर्वाद की मुद्रा में दिखाई दे रहे हैं। इसी तरह का एक चित्र पहले चर्चित हुआ जिसमें प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी भी चिराग की पीठ थपथपाते हुए दिखाई दे रहे हैं। भारतीय राजनीति में युवाओं की भागीदारी को लेकर अक्सर बड़ी-बड़ी बातें हर किसी मंच से होती रहती हैं लेकिन कोई दल उन्हें प्रतिनिधित्व का मौका नहीं देता क्योंकि उनकी नजर में युवा वोट भर हैं। राजनीतिक दल उनका इस्तेमाल भीड़ और ट्रौलिंग के लिए करते रहते हैं। हालांकि इस मिथक को चिराग ने तोड़ा, 2014 के लोकसभा चुनाव में जमुई सीट पर 80 हजार से ज्यादा मतों से विजयी हुए थे तो एक ही संसदीय दौर में उन्होंने जनता का विश्वास इस कद्र जीता कि 2019 के चुनाव में चिराग ने 5 लाख से ज्यादा वोट हासिल करते हुए लगातार दूसरी बार जीत दर्ज की। करिश्माई व्यक्तित्व वाले चिराग ने आगामी चुनाव में एनडीए को बिहार में 40 में से 40 सीटें मिलने का दावा किया है। इसमें कोई संदेह भी नहीं है क्योंकि 2019 में जब एनडीए में 3 पार्टियां थी, तब 40 में से 39 सीटें जीती थीं और इस बार 5 पार्टियां हैं और लोगों का उत्साह बताता है कि बिहार में 40 सीटों के साथ एनडीए देश में 400 सीटों के लक्ष्य को आसानी से पार कर लेगा। चिराग पासवान एक भारतीय राजनीतिज्ञ तथा लोक जनशक्ति पार्टी के राजनेता है। वे भारतीय राजनीति में सर्वाधिक मतों से जीतने वाले दलितों के शीर्ष नेता एवं लोक जनशक्ति पार्टी (लोजपा) के संस्थापक रामविलास पासवान के पुत्र हैं। चिराग ने न केवल बिहार की राजनीति में बल्कि समूची देश की राजनीति में युवा संभावनाओं को उजागर करने की खनक पैदा की है। यह वह आहट है जो भारत की राजनीति को एक नयी दिशा एवं दृष्टि प्रदत्त करेंगी। क्योंकि चिराग वोट की राजनीति के साथ-साथ सामाजिक उत्थान की नीति के चाणक्य है। वे रोजगार के नाम से एक एनजीओ भी चलाते हुए बिहार के युवाओं को बड़े पैमाने पर रोजगार दिलाने की मुहिम को संभव किया है। 'चिराग का रोजगार' एक मौलिक सोच की निष्पत्ति है और चिराग भारत की राजनीति में एक मौलिक सोच के प्रतीक नेता के रूप में उभर रहे हैं और मौलिकता अपने आप में एक शक्ति होती है, जो व्यक्ति की अपनी रचना होती है एवं उसी का सम्मान होता है। संसार उसी को प्रणाम करता है जो भीड़ में से अपना सिर ऊंचा उठाने की हिम्मत करता है, जो अपने अस्तित्व का भान कराता है। मौलिकता की आज जितनी कीमत है, उतनी ही सदैव रही है। जिस व्यक्ति के पास अपना कोई मौलिक विचार या कार्यक्रम है तो संसार उसके लिए रास्ता छोड़कर एक तरफ हट जाता है और उसे आगे बढ़ने देता है। मौलिक विचार तथा काम के नये तरीके खोज निकालने वाला व्यक्ति ही समाज एवं राष्ट्र की बड़ी रचनात्मक शक्ति होता है अन्यथा ऐसे लोगों से दुनिया भरी पड़ी है जो पीछे-पीछे चलना चाहते हैं और चाहते हैं कि सोचने का काम कोई और ही करे। चिराग ने भारत की राजनीति में युवा पीढ़ी के लिए कुछ नया सोचा है, कुछ मौलिक सोचा है, तो सफलता निश्चित है। वे इसी सोच से प्रदेश की राजनीति से केन्द्र की राजनीति की ओर अग्रसर होकर सफल नेतृत्व देने में सक्षम साबित होंगे, इसमें कोई संदेह नहीं है। लोजपा अब पूरी तरह युवाओं के हाथ में है। चिराग युवा हैं, सक्षम है, प्रखर वक्ता है, कुशल संगठनकार एवं प्रबन्धक हैं और विगत में उन्होंने अनेक अवसरों पर अपनी इन क्षमताओं के साथ-साथ निर्णायकता साबित की है। कई मौकों पर यह बात सामने आई है कि बिहार के साथ-साथ केंद्रीय राजनीति के दांव-पेच और समीकरणों को भी वह अच्छी तरह जानने-समझने लगे हैं। हालांकि उनके सामने सबसे बड़ी चुनौती दलित राजनीति के अगले ध्वजवाहक बनने और अपने लक्षित मतदाता समूह में पिता जैसी स्वीकार्यता पाने की होगी। चिराग नई लकीर खींचने में पारंगत है, वे अपने पिता की प्रतिछाया ही न बनकर कुछ नये प्रतिमान स्थापित करेंगे, राजनीति की नई परिभाषाएं गढ़ंगे। क्योंकि वे विपरीत स्थितियों में सामंजस्य स्थापित करके भरोसा और विश्वास का वातावरण निर्मित करने में दक्ष है। युवापीढ़ी और उनके सपनों का मूर्च्छित होना और उनमें निराशा का वातावरण निर्मित होना- एक सबल एवं सशक्त राष्ट्र के लिये एक बड़ी चुनौती है। चिराग ने यह अनुभव किया, यह उनकी सकारात्मक राजनीति एवं मानवतावादी सोच का ही परिणाम है। चिराग इस मामले में अन्य क्षत्रप या नेता पुत्रों से थोड़ा अलग इसलिए भी हैं कि उनका नजरिया और अंदाज भविष्योन्मुखी और विकासवादी प्रतीत होता है। यही कारण प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी चिराग में राजनीतिक संभावनाओं को गहराई से समझा है। इन सबके बावजूद यक्ष प्रश्न यह है कि क्या चिराग अपने पिता की दलित राजनीति की विरासत को कोई नया आयाम दे पाएंगे। या फिर वह इस विरासत से इतर मुख्यधारा की राजनीति में अपनी काबिलियत दिखाएंगे। चिराग राजनीति की बारीकियों को समझने में माहिर है। राजनीति का मौसम विज्ञान समझने में चिराग ने मोदी की आंधी को भलीभांति भांप लिया है और वह किसी संशय में नहीं है। अपने मतदाता समूह में उनकी मजबूत स्वीकार्यता भी है। हाल के समय में भारतीय राजनीति में नई पीढ़ी के कई नेता पुत्रों ने अभी तक कोई बहुत बड़ी उम्मीद नहीं जगाई है। चाहे राहुल गांधी हों या तेजस्वी यादव, फिलहाल इनके सियासी सितारे डूब-उतर रहे हैं। साथ ही अपने प्रभाव में निरंतरता बरकरार रखने में कहीं न कहीं चूक भी रहे हैं। हालांकि इन नामों की तुलना में चिराग के पास कोई बहुत बड़ी राजनीतिक विरासत तो नहीं है, लेकिन वे अपने होने का अहसास, कुछ अनूठा करने का एवं जनता के दिलों को जीतने का हूनर साबित किया है।

उत्तरप्रदेश चुनाव में छोटे दल दिखा सकते है बड़ा कमाल !

अशोक भाटिया

उत्तरप्रदेश के आगामी लोकसभा चुनाव में जब भी पार्टियों के बारे में समाचार लिखे जाते है तब समाचारों की धुरी बड़े दलों के आस-पास ही घूमती नजर आती है जिनका प्रतिनिधत्व अभी लोक सभा में है पर हम छोटे व स्थानीय दलों को भूल जाते है जिनका थोडा बहुत भी प्रभाव कुछ मतदाताओं पर है और जो किसी भी बड़ी पार्टी का खेल बना सकते है और बिगाड़ भी सकते है । समाजवादी पार्टी के मुखिया अखिलेश यादव ने पिछले दिनों जब यह ऐलान किया कि अपना दल (कमेरावादी) के साथ समाजवादी पार्टी का अब कोई गठबंधन नहीं है। इसके कुछ ही दिन हुए हैं और अब पल्लवी पटेल की पार्टी ने नए मोर्चे का ऐलान कर दिया । पल्लवी पटेल की पार्टी ने असदुद्दीन ओवैसी की पार्टी ऑल इंडिया मजलिस-ए-इत्तेहादुल मुस्लिमीन (एआईएमआईएम) से हाथ मिला लिया है। इस नए मोर्चे में बाबूराम पाल की राष्ट्रीय उदय पार्टी, प्रेमचंद बिंद की प्रगतिशील मानव समाज पार्टी भी शामिल है। इसे नाम दिया गया है पीडीएम न्याय मोर्चा यानि पिछड़ा दलित मुस्लिम न्याय मोर्चा। सवाल उठ रहे हैं कि यह नया मोर्चा लोकसभा चुनाव में किसका खेल बनाएगा या बिगाड़ेगा? नए मोर्चे का नाम और ऐलान के मौके पर कही गई बात, दोनों पर गौर करें तो निशाने पर भारतीय जनता पार्टी से ज्यादा अखिलेश की समाजवादी पार्टी लग रही है। अखिलेश पिछले कुछ समय से पीडीए (पिछड़ा, दलित और अल्पसंख्यक) की बात करते आए हैं। पीडीए को ही आधार बनाकर राज्यसभा चुनाव के समय तेवर दिखाते हुए पल्लवी ने दो टूक कह दिया था कि किसी बच्चन-रंजन को वोट नहीं दूंगी। अब पल्लवी के नेतृत्व में बने इस मोर्चे का नाम ही पीडीएम रख दिया गया है जो यह बताने के लिए पर्याप्त है कि फोकस किस मतदाता वर्ग पर रहने वाला है। पल्लवी ने कहा भी कि पीडीए के ए में बड़ी कन्फ्यूजन है। कहीं ये अल्पसंख्यक रहता है तो कहीं अगड़ा, कहीं आदिवासी बन जाता है। पल्लवी और ओवैसी की रणनीति पिछड़ा और मुस्लिम वोटों का नया समीकरण गढ़ने की है। अगर यह रणनीति तनिक भी सफल होती है तो रामपुर, मुरादाबाद, आजमगढ़ जैसी कई ऐसी सीटों पर सपा का खेल बिगाड़ सकती है जहां ओबीसी और मुस्लिम मतदाता ही जीत-हार का निर्धारण करते हैं। ओवैसी की पार्टी मुस्लिम पॉलिटिक्स की पिच पर महाराष्ट्र से बिहार तक दम दिखा चुकी है लेकिन उत्तरप्रदेश यह वोटर अधिकतर सपा के साथ ही रहा है। ओवैसी ने खुद कहा भी कि 2022 के उत्तरप्रदेश चुनाव में 90 फीसदी मुस्लिम वोटर्स ने सपा को वोट किया था। सपा मुस्लिमों के साथ क्या कर रही है, यह सबने देखा है। मुरादाबाद में एसटी हसन के साथ क्या हुआ, किसी से छिपा नहीं है। अब असदुद्दीन ओवैसी अगर मुस्लिमों के साथ सपा के व्यवहार का जिक्र कर रहे हैं, एसटी हसन की बात कर रहे हैं तो इसके पीछे भी सियासी रणनीति है। आजम खान, इरफान सोलंकी के खिलाफ कानूनी कार्रवाइयों को लेकर मुस्लिम वर्ग में सपा से नाराजगी की बातें होती रही हैं। कहा जाता है कि मुस्लिमों को सपा से नाराजगी की वजह यह है कि इन कार्रवाइयों का सपा जिस तरह का विरोध कर सकती थी, वैसा नहीं किया। अब ओवैसी और पल्लवी की कोशिश मुस्लिमों की नाराजगी को हवा देकर उसे वोट में कैश कराने की है।राजनीतिक विश्लेषक बताते है कि उत्तरप्रदेश मेंभाजपा का वोट इंटैक्ट है। इस मोर्चे के आने से एंटी इनकम्बेंसी के वोट बंटेंगे और जिसका नुकसान विपक्ष को होगा। नीतीश कुमार एक सीट पर एक उम्मीदवार के जिस फॉर्मूले की बात कर रहे थे, उसका आधार यही था कि सत्ता विरोधी वोट एकमुश्त पड़ें। इनमें बंटवारा न हो। उत्तरप्रदेश में पहले ही बसपा अलग चुनाव लड़ रही है, अब नए मोर्चे के आने से भी विपक्ष का गणित ही गड़बड़ होगा। इस मोर्चे के उम्मीदवार चुनाव जीतें या नहीं लेकिन सपा-कांग्रेस गठबंधन के उम्मीदवारों की संभावनाओं को नुकसान जरूर पहुंचा सकते हैं।

पल्लवी की पार्टी का बेस वोटर कुर्मी हैं लेकिन 2014 और इसके बाद हुए चुनावों के नतीजे देखें तो इस समाज पर अपना दल (कमेरावादी) या कृष्णा पटेल के मुकाबले अपना दल (सोनेलाल) और अनुप्रिया पटेल की पकड़ अधिक मजबूत नजर आती है। अनुप्रिया केंद्र सरकार में मंत्री हैं, अपनी पार्टी से दो बार की सांसद हैं।भाजपा में भी स्वतंत्र देव सिंह जैसे मजबूत नेता हैं जिनकी अपने समाज में मजबूत पैठ रखते हैं। सर्वे रिपोर्ट्स के मुताबिकभाजपा और अपना दल (सोनेलाल) के गठबंधन को 2022 के उत्तरप्रदेश चुनाव में कुर्मी बिरादरी के करीब 90 फीसदी वोट मिले थे। ऐसे में अगर पल्लवी अपने समाज के एक छोटे वोटर वर्ग को भी तोड़ पाती हैं तो येभाजपा के लिए झटका होगा। अनुमानों के मुताबिक उत्तरप्रदेश की कुल आबादी में कुर्मी समाज की भागीदारी 6 फीसदी के करीब है। मुस्लिम भी करीब 20 फीसदी हैं। पूर्वांचल की मिर्जापुर, वाराणसी जैसी लोकसभा सीटों पर कुर्मी समाज प्रभावशाली तादाद में है तो दर्जनभर से अधिक सीटों पर मुस्लिम। वोटिंग पैटर्न की बात करें तो कुर्मी जहांभाजपा को अधिक वोट करते रहे हैं तो वहीं मुस्लिम समाज ज्यादातर सपा के साथ रहा है। अब नया मोर्चा उत्तरप्रदेश की सियासत में किस कदर नया विकल्प बन पाता है, ये देखने वाली बात होगी। अब बताया तो यह भी जाता है कि ओवैसी-पल्लवी में अलायंस बनने के बाद भी उत्तरप्रदेश में अलायंस करने के बाद भी AIMIM चुनाव नहीं लड़ रही है। चुनाव से पहले 20 सीटों पर लड़ने की बात हो रही थी। लेकिन अचानक से मुरादाबाद लोकसभा सीट से AIMIM नेता वकी रशीद ने निर्दलीय नामांकन भरने के बाद वापस ले लिया। उत्तरप्रदेश AIMIM ने 20 सीटों की लिस्ट भेजी थी लेकिन ओवैसी ने हां-ना कुछ नहीं किया। ओवैसी की पार्टनर पल्लवी पटेल पहले ही अपने उम्मीदवार उतार चुकी हैं। अब सवाल उठेंगे कि, जब चुनाव लड़ना नहीं था तो हैदराबाद से आकर उन्होंने ऐसी पार्टी से अलायंस क्यों किया जिसका दायरा ही फूलपुर, मिर्जापुर, वाराणसी के आसपास तक सीमित है। हालांकि इसके पीछे ओवैसी कह रहे हैं कि,हमारा मकसद बड़ा है।

राष्ट्रीय लोकदल की बात करें तो वह इस समय एनडीए के साथ है । देखा जय तो कभी 'अजगर' (अहीर, जाट, गुर्जर और राजपूत) और फिर 'मजगर' (मुस्लिम, जाट, गुर्जर और राजपूत) समीकरण के तहत पश्चिमी उत्तरप्रदेश में धाक जमाने वाली रालोद वर्तमान में जाटों की पार्टी मानी जाती है। बागपत, बिजनौर, मुजफ्फरनगर, कैराना, नगीना, गाजियाबाद, मेरठ, नोएडा, अलीगढ़, आगरा, मथुरा और बुलंदशहर लोकसभा सीटों पर रालोद का मजबूत वोट बैंक माना जाता है। पिछले दो लोकसभा सभाओं के चुनावों में रालोद का खाता भी नहीं खुला था। लेकिन 16वीं लोकसभा के अंतिम दौर में कैराना लोकसभा सीट पर हुए उपचुनाव में रालोद प्रत्याशी तबस्सुम हसन सपा के सहयोग से जीती थी। वर्तमान में रालोद एनडीए के साथ है। नए गठबंधन के तहत रालोद को आगामी लोकसभा चुनावों में बागपत और बिजनौर की सीटें भी मिली हैं। अपना दल (सोनेलाल) की बात करें तो वह गैर यादव पिछड़ा वर्ग की कई जातियों की राजनीति करता है। कुर्मियों में अपना दल एस की संयोजक अनुप्रिया पटेल की मजबूत पकड़ मानी जाती है। इस वोट बैंक के जरिए अपना दल(एस) का मीरजापुर, सोनभद्र और उसके आस-पास की कई लोकसभा सीटों पर दबदबा है। उत्तरप्रदेश में पार्टी एनडीए सरकार का प्रमुख घटक है। पार्टी की संयोजक अनुप्रिया पटेल केंद्रीय मंत्री हैं। उनके पति आशीष सिंह पटेल उत्तरप्रदेश सरकार में मंत्री हैं। एनडीए के गठबंधन में अपना दल एस 2014 और 2019 में दो-दो लोकसभा सीटों पर चुनाव लड़ा और जीता है। हालांकि, इस बार अभी तक अपना दल एस की सीटें घोषित नहीं हुई हैं। लेकिन, माना जा रहा है कि भाजपा उन्हें दो ही सीटें देने की तैयारी में हैं। सुहेलदेव भारतीय समाज पार्टी (सुभासपा) के मुखिया और अति पिछड़ों की राजनीति करने वाले ओम प्रकाश राजभर पूर्वांचल की गाजीपुर, बलिया, आजमगढ़, लालगंज, संत कबीर नगर, अंबेडकर नगर, जौनपुर, घोसी, चंदौली और मछलीशहर सीटों पर असर डालने की स्थिति में हैं। 2022 के विधानसभा चुनाव में सपा के साथ मिल कर लड़ी सुभासपा ने छह सीटें जीती थी। लेकिन, चुनाव के तुरंत बाद राजभर ने सपा का साथ छोड़ दिया और एक बार फिर एनडीए के साथ आ गए। एनडीए में शामिल होने के साथ ही राजभर को योगी मंत्रिमंडल में जगह मिली और लोकसभा चुनाव में भी एनडीए ने सुभासपा को घोसी लोकसभा सीट दी है। निषाद पार्टी इस बार कमल के निशान पर अपना चेहरा लेकर आने वाली है । देखा जाय तो घाघरा के किनारों से लेकर गंगा और यमुना के कछार तक की करीब तीन दर्जन लोकसभा सीटों पर निषाद और उससे जुड़ी हुई जातियों का वोटबैंक नतीजों की दिशा तय करने में सक्षम है। गोरखपुर, बांसगांव, चंदौली, मीरजापुर, भदोही, इलाहाबाद, जालौन, बांदा, फैजाबाद, संतकबीर नगर जैसी सीटों पर इनकी संख्या प्रभावी है। इन वोटों की राजनीति करने वाली निषाद पार्टी एनडीए का हिस्सा है। 2019 की तरह भाजपा ने निषाद पार्टी के नेता प्रवीण निषाद संतकबीर नगर सीट से भाजपा के सिंबल पर उतारा है। हालांकि, निषाद पार्टी की अपेक्षा अधिक की थी। प्रदेश के अन्य छोटे दल भी किसी न किसी के साथ चुनावी गठजोड़ की कवायद में जुटे हैं। प्रतापगढ़, कौशांबी में असर रखने वाले रघुराज प्रताप सिंह उर्फ राजा भैया को भाजपा का करीब माना जाता है। लेकिन, अभी तक उनकी पार्टी जनसत्ता दल लोकतांत्रिक ने चुनाव को लेकर अपने पत्ते नहीं खोले हैं। रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (ए) उत्तरप्रदेश में गठबंधन के तहत टिकट न मिलने से चुनाव में एनडीए प्रत्याशियों का समर्थन करेगी। स्वामी प्रसाद मौर्य ने भी अपनी नवगठित पार्टी के बैनर तले अकेले चुनाव लड़ने का ऐलान किया है। आजाद समाज पार्टी के मुखिया चंद्रशेखर भी नगीना से चुनाव लड़ रहे हैं। महान दल ने बसपा के समर्थन का ऐलान किया है तो जनवादी पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष संजय चौहान ने सपा प्रमुख पर वादा न निभाने का आरोप लगाते हुए पिछले दिनों अपने बल पर 11 लोकसभा चुनाव लड़ने का ऐलान किया है।

मेष : मेल-मिलाप से काम बनाने की कोशिश सफल होगी। कामकाज में आ रहा अवरोध दूर होकर प्रगति का रास्ता मिल जाएगा। अपने काम में सुविधा मिल जाने से प्रगति होगी। समाज में मान-सम्मान बढ़ेगा। नवीन जिम्मेदारी बढ़ने के आसार रहेंगे। अपने काम को प्राथमिकता से करें। शुभांक-6-8-9

वृष : आत्मविश्वास बढ़ेगा। कारोबारी काम में बाधा उभरने से मानसिक अशांति बनी रहेगी। यात्रा का दूरगामी परिणाम मिल जाएगा। सुविधा और समन्वय बना रहने से कामकाज में प्रगति बन जाएगी। आर्थिक हित के काम को साधने में मदद मिल जाएगी। मांगलिक कार्यक्रमों का आयोजन होगा। शुभांक-2-5-8

मिथुन : विरोधी नुकसान पहुंचाने की कोशिश करेगा। स्वास्थ्य लाभ में समय और धन व्यय होगा। मध्याह्न पूर्व समय आपके पक्ष का बना रहेगा। कारोबारी काम में प्रगति बनती रहेगी। लेन-देन में आ रही बाधा दूर करने का प्रयास होंगे। परिश्रम प्रयास से काम बनाने की कोशिश लाभ देगी। शुभांक-5-7-8

कर्क : पर-प्रपंच में ना पड़कर अपने काम पर ध्यान दीजिए। कल का परिश्रम आज लाभ देगा। आलस्य का त्याग करें। कारोबारी काम में नवीन तालमेल और समन्वय बन जाएगा। यार-दोस्तों के साथ साझे में किए जा रहे काम में लाभ मिल जाएगा। पूर्व नियोजित कार्यक्रम सरलता से संपन्न हो जाएंग। शुभांक-4-5-7

सिंह : कार्यक्षेत्र में संतोषजनक सफलता मिलेगी। अपनों का सहयोग प्राप्त होगा। पत्नी व संतान पक्ष से थोड़ी चिंता रहेगी। शिक्षा में आशानुकूल कार्य होने में संदेह है। व्यापार व व्यवसाय में स्थिति उत्तम रहेगी। नौकरी में पदोन्नति की संभावना है। मित्रों से सावधान रहें तो ज्यादा उत्तम है। शुभांक-1-3-6

कन्या : पठन-पाठन में स्थिति कमजोर रहेगी। खान-पान में सावधानी रखें। कामकाज में आ रहा अवरोध दूर होकर प्रगति का रास्ता मिल जाएगा। मान-सम्मान में वृद्धि होगी। अच्छे कार्य के लिए रास्ते बना लेंगें। स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। निष्ठा से किया गया कार्य पराक्रम व आत्मविश्वास बढ़ाने वाला होगा। शुभांक-2-4-6

तुला : शारीरिक सुख के लिए व्यसनों का त्याग करें। संतान पक्ष की समस्या समाप्त होगी। खान-पान में सावधानी रखें। व्यापार में प्रगति होगी। अपने अधीनस्थ लोगों से कम सहयोग मिलेगा। भ्रातृपक्ष में विरोध होने की संभावना है। शिक्षा में आशानुकूल कार्य होने में संदेह है। स्वास्थ्य मध्यम रहेगा। शुभांक-5-7-8

वृश्चिक : जीवनसाथी का परामर्श लाभदायक रहेगा। व्यापार व नौकरी में स्थिति अच्छी रहेगी। पुरुषार्थ का सहारा लें। कार्यसिद्धि होने में देर नहीं लगेगी। आर्थिक लाभ उत्तम रहेगा। शैक्षणिक कार्यों में रुचि बढ़ेगी। परिवार में किसी मांगलिक कार्य पर वार्ता होगी। स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। लेन-देन में अस्पष्टता ठीक नही। शुभांक-3-5-7

धनु : धार्मिक कार्य में समय और धन व्यय होगा। अपना काम दूसरों के सहयोग से पूरा होगा। मध्याह्न पूर्व समय आपके पक्ष का बना रहेगा। कारोबारी काम में प्रगति बनती रहेगी। लेन-देन में आ रही बाधा दूर करने का प्रयास होंगे। पुराने मित्र से मिलन होगा। स्वविवेक से कार्य करें। शुभांक-4-6-8

मकर : समय नकारात्मक परिणाम देने वाला बन रहा है। अपने हितैषी समझे जाने वाले ही पीठ पीछे नुकसान पहुंचाने की कोशिश करेंगे। परिवारजन का सहयोग व समन्वय काम को बनाना आसान करेगा। कारोबारी काम में नवीन तालमेल और समन्वय बन जाएगा। स्वविवेक से कार्य कर। शुभांक-3-6-9

कुंभ : हित के काम में आ रही बाधा मध्याह्न पश्चात दूर हो जाएगी। अपने काम आसानी से बनते चले जाएंगे। साथ ही आगे के लिए रास्ता भी बन जाएगा। यात्रा का योग। जीवन साथी अथवा यार- दोस्तों के साथ साझे में किए जा रहे काम में लाभ मिल जाएगा। पूंजी निवेश सोच-समझकर करें। शुभांक-2-4-6

मीन : कहीं रुका हुआ पैसा वसूलने में मदद मिल जाएगी। व्यर्थ प्रपंच में समय नहीं गंवाकर अपने काम पर ध्यान दीजिए। कार्यक्षेत्र में आगे बढ़ने में रुकावट का एहसास होगा। विरोधियों के सक्रिय होने की संभावना है। शत्रुहानि की आशंका रहेगी। आय के योग बनेंगे। किसी की सफलता से प्रेरित होंगे। शुभांक-1-3-5

शब्द पहेली - 8086

बाएँ से दाएँ

1. आस्तिक, अनुगामी, पूजक-2
2. रख-रखाव-2,3
6. देह, बदन-2
7. कारण-3
8. तपस्या-2
9. बंदूकधारी(अंग्रेजी-3)
11. पति की बहन-3
12. प्रतिज्ञा, वचन-3
14. पिता, डैडी-2
16. मन मोहने वाला-5
18. आनंदित-2
19. लवण, खार-3
21. बख्तरबंद, आवरण-3
23. पासों से भविष्य जानना-3
25. आमिर व काजोल की फिल्म-2
27. मुलायम, कोमल-3
28. उस समय-2
29. भ्रमण, घूमना-3,
30. कोलाहल-2

ऊपर से नीचे

1. खतरनाक-4
2. सनम, बालम-3
3. रहने का तरीका-3,3
4. चावल-2
5. बिजली का कौंधना-5
6. कौवा, काग-2
10. सांभर जैसा खाद्य पदार्थ-3
13. मन को भाने वाला-5
15. सहयात्री-5
17. कटि-3
20. निम्न, न्यूनतम-4
22. उत्कर्ष-3
24. अधर, होठ-2
26. संबोधन-2

शब्द पहेली - 8085 का हल

Jagrutidaur.com, Bangalore

सम्पादकीय

देश को बेवकूफ बनाने वालों के लिए गलती करो माफी मांग लो ये स्वीकार्य नहीं होना चाहिए

सुप्रीम कोर्ट इंडियन मेडिकल एसोसिएशन की ओर से 17 अगस्त 2022 को दायर की गई याचिका पर सुनवाई कर रही थी। इसमें कहा गया है कि पतंजलि ने कोविड वैक्सीनेशन और एलोपैथी के खिलाफ निगेटिव प्रचार किया। वहीं खुद की आयुर्वेदिक दवाओं से कुछ बीमारियों के इलाज का झूठा दावा किया। ये मामला निचली अदालत से सुप्रीम कोर्ट तक पहुंचा है। मजेदारी बात ये है कि भ्रामक विज्ञापन देकर देश को बेवकूफ बनाने वाले बाबा रामदेव और बालकृष्ण ने छोटी अदालतों के सम्मान की तो परवाह ही नहीं की। ऐसे में मंगलवार को सुप्रीम कोर्ट सख्ती से पेश आया और रामदेव द्वारा माफी मांगने पर भी उसे स्वीकार नहीं किया। सही है। देश को बेवकूफ बनाने वाले और सत्ता के दम पर न्यायालयों को भी कुछ नहीं समझने वाले लोगों के साथ ऐसा ही होना चाहिए। इससे भी सख्त रवैया इस मामले में न्यायालय अपनाए तो अधिक अच्छा है। भ्रामक विज्ञापन केस में सुप्रीम कोर्ट ने मंगलवार को बाबा रामदेव और पतंजलि आयुर्वेद के मैनेजिंग डायरेक्टर आचार्य बालकृष्ण को जवाब दाखिल करने के लिए आखिरी मौका दिया। अदालत ने कहा कि एक हफ्ते में जवाब दाखिल कीजिए। अगली सुनवाई 10 अप्रैल को होगी। अदालत ने कहा कि सुनवाई पर रामदेव और बालकृष्ण मौजूद रहें। सुनवाई के दौरान रामदेव के वकील बलवीर सिंह ने कोर्ट से कहा कि योगगुरु माफी मांगने के लिए यहां मौजूद हैं। भीड़ की वजह से कोर्टरूम नहीं आ पाए। अदालत ने एफिडेविट देखने के बाद फटकार लगाई और कहा कि यह प्रॉपर एफिडेविट नहीं है। जब बलवीर सिंह ने माफीनामा पढ़ा तो अदालत ने कहा कि ऐसे मामलों में आदेशों का उल्लंघन करने वाला माफी मांगता है। हमें रामदेव के वकील का माफीनामा नहीं सुनना। जस्टिस हिमा कोहली और जस्टिस अमानतुल्लाह की बेंच ने कहा, हम दोनों के खिलाफ झूठी बयानबाजी का केस चलाने का निर्देश रजिस्ट्रार को देते हैं। अदालत ने बलबीर सिंह से कहा- आप तैयार रहिएगा। सुप्रीम कोर्ट की फटकार के बाद रामदेव और बालकृष्ण कोर्ट रूम पहुंचे और रामदेव ने बिना शर्त माफी मांगी। बेंच ने कहा केवल सुप्रीम कोर्ट नहीं, देश की हर अदालत के आदेश का सम्मान होना चाहिए। आपको अदालत के निर्देशों का पालन करना था और आपने हर सीमा लांघी। अदालत ने कहा कि जब पतंजलि हर कस्बे में जाकर कह रही थी कि एलोपैथी से कोविड में कोई राहत नहीं मिलती तो केंद्र ने अपनी आंखें क्यों बंद कर रखी थीं।

उत्तरप्रदेश चुनाव में छोटे दल दिखा सकते है बड़ा कमाल !

राजनीतिक विश्लेषक बताते है कि उत्तरप्रदेश मेंभाजपा का वोट इंटैक्ट है। इस मोर्चे के आने से एंटी इनकम्बेंसी के वोट बंटेंगे और जिसका नुकसान विपक्ष को होगा। नीतीश कुमार एक सीट पर एक उम्मीदवार के जिस फॉर्मूले की बात कर रहे थे, उसका आधार यही था कि सत्ता विरोधी वोट एकमुश्त पड़ें। इनमें बंटवारा न हो। उत्तरप्रदेश में पहले ही बसपा अलग चुनाव लड़ रही है, अब नए मोर्चे के आने से भी विपक्ष का गणित ही गड़बड़ होगा। इस मोर्चे के उम्मीदवार चुनाव जीतें या नहीं लेकिन सपा-कांग्रेस गठबंधन के उम्मीदवारों की संभावनाओं को नुकसान जरूर पहुंचा सकते हैं। पल्लवी की पार्टी का बेस वोटर कुर्मी हैं लेकिन 2014 और इसके बाद हुए चुनावों के नतीजे देखें तो इस समाज पर अपना दल (कमेरावादी) या कृष्णा पटेल के मुकाबले अपना दल (सोनेलाल) और अनुप्रिया पटेल की पकड़ अधिक मजबूत नजर आती है। अनुप्रिया केंद्र सरकार में मंत्री हैं, अपनी पार्टी से दो बार की सांसद हैं।भाजपा में भी स्वतंत्र देव सिंह जैसे मजबूत नेता हैं जिनकी अपने समाज में मजबूत पैठ रखते हैं। सर्वे रिपोर्ट्स के मुताबिकभाजपा और अपना दल (सोनेलाल) के गठबंधन को 2022 के उत्तरप्रदेश चुनाव में कुर्मी बिरादरी के करीब 90 फीसदी वोट मिले थे।

अशोक भाटिया

उत्तरप्रदेश के आगामी लोकसभा चुनाव में जब भी पार्टियों के बारे में समाचार लिखे जाते है तब समाचारों की धुरी बड़े दलों के आस-पास ही घूमती नजर आती है जिनका प्रतिनिधत्व अभी लोक सभा में है पर हम छोटे व स्थानीय दलों को भूल जाते है जिनका थोडा बहुत भी प्रभाव कुछ मतदाताओं पर है और जो किसी भी बड़ी पार्टी का खेल बना सकते है और बिगाड़ भी सकते है । समाजवादी पार्टी के मुखिया अखिलेश यादव ने पिछले दिनों जब यह ऐलान किया कि अपना दल (कमेरावादी) के साथ समाजवादी पार्टी का अब कोई गठबंधन नहीं है। इसके कुछ ही दिन हुए हैं और अब पल्लवी पटेल की पार्टी ने नए मोर्चे का ऐलान कर दिया । पल्लवी पटेल की पार्टी ने असदुद्दीन ओवैसी की पार्टी ऑल इंडिया मजलिस-ए-इत्तेहादुल मुस्लिमीन (एआईएमआईएम) से हाथ मिला लिया है।

इस नए मोर्चे में बाबूराम पाल की राष्ट्रीय उदय पार्टी, प्रेमचंद बिंद की प्रगतिशील मानव समाज पार्टी भी शामिल है। इसे नाम दिया गया है पीडीएम न्याय मोर्चा यानि पिछड़ा दलित मुस्लिम न्याय मोर्चा। सवाल उठ रहे हैं कि यह नया मोर्चा लोकसभा चुनाव में किसका खेल बनाएगा या बिगाड़ेगा? नए मोर्चे का नाम और ऐलान के मौके पर कही गई बात, दोनों पर गौर करें तो निशाने पर भारतीय जनता पार्टी से ज्यादा अखिलेश की समाजवादी पार्टी लग रही है। अखिलेश पिछले कुछ समय से पीडीए (पिछड़ा, दलित और अल्पसंख्यक) की बात करते आए हैं। पीडीए को ही आधार बनाकर राज्यसभा चुनाव के समय तेवर दिखाते हुए पल्लवी ने दो टूक कह दिया था कि किसी बच्चन-रंजन को वोट नहीं दूंगी। अब पल्लवी के नेतृत्व में बने इस मोर्चे का नाम ही पीडीएम रख दिया गया है जो यह बताने के लिए पर्याप्त है कि फोकस किस मतदाता वर्ग पर रहने वाला है। पल्लवी ने कहा भी कि पीडीए के ए में बड़ी कन्फ्यूजन है। कहीं ये अल्पसंख्यक रहता है तो कहीं अगड़ा, कहीं आदिवासी बन जाता है। पल्लवी और ओवैसी की रणनीति पिछड़ा और मुस्लिम वोटों का नया समीकरण गढ़ने की है। अगर यह रणनीति तनिक भी सफल होती है तो रामपुर, मुरादाबाद, आजमगढ़ जैसी कई ऐसी सीटों पर सपा का खेल बिगाड़ सकती है जहां ओबीसी और मुस्लिम मतदाता ही जीत-हार का निर्धारण करते हैं। ओवैसी की पार्टी मुस्लिम पॉलिटिक्स की पिच पर महाराष्ट्र से बिहार तक दम दिखा चुकी है लेकिन उत्तरप्रदेश यह वोटर अधिकतर सपा के साथ ही रहा है। ओवैसी ने खुद कहा भी कि 2022 के उत्तरप्रदेश चुनाव में 90 फीसदी मुस्लिम वोटर्स ने सपा को वोट किया था। सपा मुस्लिमों के साथ क्या कर रही है, यह सबने देखा है। मुरादाबाद में एसटी हसन के साथ क्या हुआ, किसी से छिपा नहीं है। अब असदुद्दीन ओवैसी अगर मुस्लिमों के साथ सपा के व्यवहार का जिक्र कर रहे हैं, एसटी हसन की बात कर रहे हैं तो इसके पीछे भी सियासी रणनीति है। आजम खान, इरफान सोलंकी के खिलाफ कानूनी कार्रवाइयों को लेकर मुस्लिम वर्ग में सपा से नाराजगी की बातें होती रही हैं। कहा जाता है कि मुस्लिमों को सपा से नाराजगी की वजह यह है कि इन कार्रवाइयों का सपा जिस तरह का विरोध कर सकती थी, वैसा नहीं किया। अब ओवैसी और पल्लवी की कोशिश मुस्लिमों की नाराजगी को हवा देकर उसे वोट में कैश कराने की है।

राजनीतिक विश्लेषक बताते है कि उत्तरप्रदेश मेंभाजपा का वोट इंटैक्ट है। इस मोर्चे के आने से एंटी इनकम्बेंसी के वोट बंटेंगे और जिसका नुकसान विपक्ष को होगा। नीतीश कुमार एक सीट पर एक उम्मीदवार के जिस फॉर्मूले की बात कर रहे थे, उसका आधार यही था कि सत्ता विरोधी वोट एकमुश्त पड़ें। इनमें बंटवारा न हो। उत्तरप्रदेश में पहले ही बसपा अलग चुनाव लड़ रही है, अब नए मोर्चे के आने से भी विपक्ष का गणित ही गड़बड़ होगा। इस मोर्चे के उम्मीदवार चुनाव जीतें या नहीं लेकिन सपा-कांग्रेस गठबंधन के उम्मीदवारों की संभावनाओं को नुकसान जरूर पहुंचा सकते हैं।

पल्लवी की पार्टी का बेस वोटर कुर्मी हैं लेकिन 2014 और इसके बाद हुए चुनावों के नतीजे देखें तो इस समाज पर अपना दल (कमेरावादी) या कृष्णा पटेल के मुकाबले अपना दल (सोनेलाल) और अनुप्रिया पटेल की पकड़ अधिक मजबूत नजर आती है। अनुप्रिया केंद्र सरकार में मंत्री हैं, अपनी पार्टी से दो बार की सांसद हैं।भाजपा में भी स्वतंत्र देव सिंह जैसे मजबूत नेता हैं जिनकी अपने समाज में मजबूत पैठ रखते हैं। सर्वे रिपोर्ट्स के मुताबिकभाजपा और अपना दल (सोनेलाल) के गठबंधन को 2022 के उत्तरप्रदेश चुनाव में कुर्मी बिरादरी के करीब 90 फीसदी वोट मिले थे। ऐसे में अगर पल्लवी अपने समाज के एक छोटे वोटर वर्ग को भी तोड़ पाती हैं तो येभाजपा के लिए झटका होगा।

अनुमानों के मुताबिक उत्तरप्रदेश की कुल आबादी में कुर्मी समाज की भागीदारी 6 फीसदी के करीब है। मुस्लिम भी करीब 20 फीसदी हैं। पूर्वांचल की मिर्जापुर, वाराणसी जैसी लोकसभा सीटों पर कुर्मी समाज प्रभावशाली तादाद में है तो दर्जनभर से अधिक सीटों पर मुस्लिम। वोटिंग पैटर्न की बात करें तो कुर्मी जहांभाजपा को अधिक वोट करते रहे हैं तो वहीं मुस्लिम समाज ज्यादातर सपा के साथ रहा है। अब नया मोर्चा उत्तरप्रदेश की सियासत में किस कदर नया विकल्प बन पाता है, ये देखने वाली बात होगी।

आज का इतिहास

3 अप्रैल की महत्त्वपूर्ण घटनाएँ

- 1885 - हाई-स्पीड पेट्रोल इंजन निर्माता गोटलीप डिमेला को इंजन डिजाइन के लिए पेटेंट प्राप्त हुआ।
- 1895 - ऑस्कर वाइल्ड मानहानि का मुकदमा शुरू। वाइल्ड को गे होने के कारण जेल भेजा गया था।
- 1922 - जोसेफ स्टालिन को सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति का महासचिव नियुक्त किया गया।
- 1927 - डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने पाक्षिक निर्वासित भारत की शुरुआत की।
- 1933 - पहले विमान ने एवरेस्ट से उड़ान भरी।
- 1973 - मोटोरोला के मार्टिन कूपर ने अपने पहले मोबाइल फोन से बेल लैब्स को पहली कॉल की।
- 1975 - अनातोली कारपोव से लड़ने के लिए बॉबी फिशर के इनकार ने कारपोव को विश्व चैंपियन बना दिया।
- 1981 - सैन फ्रांसिस्को में पहले पोर्टेबल कंप्यूटर का अनावरण किया गया।
- 1984 - भारत के पहले अंतरिक्ष यात्री राकेश वर्मा ने अंतरिक्ष यात्रा शुरू की।
- 1998 - सैमसोनाइट की ट्रैवल बैग बनाने वाली पहली भारतीय परियोजना का उद्घाटन।
- 2017 - रूस के सेंट पीटर्सबर्ग शहर के भूमिगत मेट्रो में हुए विस्फोट में कम से कम दस लोग मारे गए और लगभग पचास लोग घायल हो गए।
- 2017 - उत्तराखण्ड की राजधानी देहरादून के वन अनुसंधान संस्थान में 19वां राष्ट्रमंडल वानिकी सम्मेलन शुरू हुआ।
- 2017 - भारत में शैक्षिक संस्थानों की जारी की गई रैंकिंग- (2017) में इंजीनियरिंग श्रेणी में आई आई टी मद्रास ने पहला स्थान प्राप्त किया है, दूसरा स?थान आई आई टी बम्बई और तीसरा स्थान खड़गपुर को मिला है। प्रबंधन श्रेणी में भारतीय प्रबंधन संस्थान-आई आई एम, अहमदाबाद को पहला स्थान मिला है। विश्वविद्यालय श्रेणी में भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलौर शीर्ष पर रहा है। दूसरे स्थान पर जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय रहा। फॉर्मेसी संस्थानों में दिल्ली के जामिया हमदर्द ने पहला स्थान पाया है।भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान आई आई टी पटना को तिरासीवां स्थान मिला है।
- 2017 - बंबई शेयर बाजार का सेंसेक्स अब तक के सबसे उच्चतम स्तर 29 हजार 910 पर जा पहुंचा, जबकी नेशनल स्टॉक एक्सचेंज का निफ्टी भी नौ हजार 238 के अब तक के सबसे उच्चतम स्तर पर पहुंच गया।

3 अप्रैल को जन्मे व्यक्ति

- 1367 - हेनरी चतुर्थ, इंग्लैंड के राजा
- 1529 - माइकल निएंडर, जर्मन गणितज्ञ और खगोलशास्त्री।
- 1593 - जॉर्ज हर्बर्ट, अंग्रेजी कवि
- 1781 - स्वामीनारायण, भारतीय धार्मिक नेता।
- 1881 - इटली के प्रधान मंत्री एल्केड डि गैस्पेरी

1882 - द्वारकानाथ माधव पिटाले उर्फ 'नाथमाधव' - सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यासकार। उनके उपन्यास वीरधवल, रायक्लब या सोनेरी टोली ने सचमुच पाठकों को पागल कर दिया।

विशेष आलेख

चुनावी बॉन्ड से चंदे पर शेयरधारक क्यों अंधेरे में?

देवाशिष बसु।

भारतीय स्टेट बैंक (एसबीआई) ने पिछले दिनों चुनावी बॉन्ड पर दो दस्तावेज में जानकारियां सौंपी। चुनावी बॉन्ड खरीदना पूरी तरह कंपनियों एवं उद्यमियों की इच्छा पर निर्भर था मगर प्रश्न यह है कि कोई कंपनी या इकाई अपनी मेहनत की कमाई स्वार्थ सिद्धि करने वाले राजनीतिज्ञों को क्यों दे? कंपनियां तभी ऐसा करती हैं जब उन पर दबाव डाला जाता है या कोई विशेष प्रोत्साहन दिया जाता है। चुनावी बॉन्ड के जरिये आया स्वैच्छिक चंदा अधिक नहीं माना जा सकता। ऐसा इसलिए भी कहा जा सकता है कि बड़ी कंपनियों के नाम चंदा देने वाली इकाइयों की सूची से नदारद थे। इन दिनों भारत के उद्योग जगत की ज्यादातर बड़ी कंपनियां शेयर बाजार में सूचीबद्ध हैं। मगर कुछ क्षेत्रों की लगभग 100 कंपनियों ने चुनावी बॉन्ड के जरिये राजनीतिक दलों को चंदा दिया। चंदा देने वाली कंपनियों की सूची में कुछ ही बड़ी कंपनियां (निफ्टी 200 शेयर) शामिल थीं। दानकर्ता कंपनियों की सूची में वेदांत (400 करोड़ रुपये से अधिक), भारती एयरटेल (198 करोड़ रुपये), टॉरंट पावर (106 करोड़ रुपये) और यूनाइटेड फॉस्फोरस (60 करोड़ रुपये) शामिल हैं। मगर इसमें शामिल ज्यादातर कंपनियों ने अपने मुनाफे की तुलना में काफी कम रकम चंदे के तौर पर दी है। उदाहरण के लिए सन फार्मास्युटिकल्स ने पिछले साल 8,900 करोड़ रुपये शुद्ध मुनाफा अर्जित किया था मगर उसने मात्र 31.50 करोड़ रुपये (महज 0.3 प्रतिशत) राजनीतिक दलों को चुनावी बॉन्ड के जरिये दिए। महिंद्रा ऐंड महिंद्रा ने लगभग इतनी ही रकम (25 करोड़ रुपये) चंदे के रूप में दी।

अन्य कंपनियों में बजाज फाइनैंस (20 करोड़ रुपये), बजाज ऑटो (18 करोड़ रुपये), हीरो मोटर्स (20 करोड़ रुपये), टीवीएस मोटर्स (26 करोड़ रुपये), अल्ट्राटेक (35 करोड़ रुपये), मारुति सुजूकी (20 करोड़ रुपये) और पीरामल एंटरप्राइजेज (48 करोड़ रुपये) के नाम सूची में दर्शाए गए हैं। इससे अधिक दिलचस्प बात यह है कि सूचीबद्ध बड़ी कंपनियों में एक बड़ी संख्या उनकी है जिन्होंने चुनावी बॉन्ड के जरिये चंदा नहीं दिया। इनमें रिलायंस इंडस्ट्रीज, आईसीआईसीआई बैंक, एचडीएफसी बैंक, कोटक बैंक, टाटा मोटर्स, टाटा स्टील, टाइटन और टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेस (टीसीएस), इन्फोसिस, एचसीएल टेक्नोलॉजीज, विप्रो जैसी कंपनियां शामिल हैं। इस सूची में किसी भी बहुराष्ट्रीय कंपनी का नाम नहीं है और न ही निर्माण क्षेत्र की दिग्गज कंपनी लार्सन ऐंड टुब्रो दिखाई देती है। यह अलग बात है कि निर्माण क्षेत्र की कुछ कंपनियों ने चुनावी बॉन्ड के जरिये चंदा दिया है। एक और प्रश्न यह है कि जिन कंपनियों ने चंदा दिया है उन्होंने शेयरधारकों को इसकी स्पष्ट जानकारी दी है या नहीं? मौजूदा समय में बाजार नियामक और स्टॉक एक्सचेंज अधिक से अधिक पारदर्शिता पर जोर दे रहे हैं जिसे देखते हुए चंदा देने वाली कंपनियों को स्पष्टीकरण के साथ इससे जुड़ी जानकारी अनिवार्य रूप से अपने शेयरधारकों को देनी चाहिए। महिंद्रा ऐंड महिंद्रा, सिप्ला, भारती एयरटेल, पीरामल एंटरप्राइजेज जैसी बड़ी कंपनियों की वित्त वर्ष 2022-23 की सालाना रिपोर्ट का विश्लेषण करें तो इनमें चुनावी बॉन्ड का कहीं जिक्र नहीं है। वेदांत ने चंदे में दी रकम को 'अन्य व्यय' में दिखाया है मगर एक फुटनोट लिखा है जिससे यह पता चलता है कि रकम चुनावी बॉन्ड खरीदने पर खर्च की गई है। शेयरधारकों के समक्ष पूरी पारदर्शिता बरतना उन कंपनियों के मामले में और भी आवश्यक हो जाता है जो आरोपों या किसी जांच का सामना कर रही हैं। कई बड़ी कंपनियों के नाम चंदा देने वाली इकाइयों की सूची में नहीं हैं मगर दिलचस्प है कि सभी सूचीबद्ध दवा कंपनियां और कई अन्य गैर-सूचीबद्ध कंपनियां के नाम सूची में शामिल हैं। इनमें कई कंपनियां कर वंचना, खराब गुणवत्ता वाली दवाओं या अधिक कीमत वसूलने के लिए कार्रवाई (कुछ वाजिब तो कुछ कथित रूप से गैर-वाजिब) का सामना कर रही हैं। चुनावी बॉन्ड से चंदा देने वाले बड़े नामों में दिवीज लैबोरेट्रीज (55 करोड़ रुपये), सिप्ला (39.20 करोड़ रुपये), एल्केम लैबोरेटरीज (15 करोड़ रुपये), डॉ. रेड्डीज (84 करोड़ रुपये), सन फार्मा और मैनकाइंड फार्मा (24 करोड़ रुपये) शामिल हैं। इनमें किसी भी कंपनी ने चुनावी बॉन्ड के बारे में अपने शेयरधारकों के समक्ष बड़े खुलासे नहीं किए हैं। चुनावी बॉन्ड के गहन विश्लेषण से पता चलता है कि कंपनियां डर या किसी तरह के फायदे-प्रोत्साहन (ठेका, परियोजना या ऑर्डर मिलने में सहूलियत) के लिए चंदा दे रही हैं।

इसमें कोई शक नहीं कि राजनीतिक दलों और कंपनियों के बीच अव्यवस्थित बातचीत की वजह से यह आसानी से पता नहीं चलता कि चंदा दबाव या प्रोत्साहन के कारण दिया गया है। कारण जो भी हो किसी भी सूरत में शेयरधारक और नागरिक दोनों ही अंधेरे में रखे जाते हैं। उदाहरण के लिए सरकार के पूंजीगत व्यय पर विचार करते हैं। केंद्र सरकार सड़क, पुल, स्वच्छता, पेयजल, रेल आधुनिकीकरण और ऊर्जा पर भारी भरकम पूंजीगत व्यय कर रही है।

टीकाकरण अभियान में अवरोध से बढ़ता संक्रामक बीमारियों का खतरा

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा।

लैसेंट ग्लोबल हेल्थ में हालिया प्रकाशित रिपोर्ट इस मायने में चिंतनीय और महत्वपूर्ण है कि विश्वव्यापी टीकाकरण अभियान में अवरोध का असर सामने आने लगा है। दुनिया के देशों के सामने खसरा, हेजा, हेपेटाइटिस सहित 14 से अधिक बीमारियों के फैलने का संकट उभरने लगा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की हालिया रिपोर्ट के अनुसार दुनिया के देशों में हैजा के कारण मौत का आंकड़ा लगभग दो गुणा हो गया है।

तपेदिक नए वेरिएंट में आने लगी है जिसमें लगातार खांसी नहीं होने के कारण तपेदिक का पता लगने तक काफी देरी होने लगी है। दरअसल कोरोना अपना साइड इफेक्ट इस हद तक छोड़ गया है कि उसका असर हमें प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से आने वाले कई सालों तक देखने का मिलेगा। कोरोना के कारण दुनिया के देशों में टीकाकरण अभियान पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। 2019 के अंतिम त्रैमास से 2020 तक कोरोना त्रासदी और उसके बाद कोरोना के नित नए वेरिएंट के कारण स्वास्थ्य को लेकर चल रहे विभिन्न अभियानों पर सीधा असर पड़ा है। उसका असर अब दिखाई देने लगा है।

इंपीरियल कॉलेज लंदन के शोधार्थियों ने भारत सहित 112 देशों में किए गए अध्ययन में यह पाया है कि टीकाकरण में कोरोना काल में टीकाकरण अभियान प्रभावित होने के कारण 2030 तक दुनिया के देशों में खसरा सहित 14 बीमारियों के फैलने के कारण अतिरिक्त मौत होगी। एक अनुमान के कारण अकेले खसरा के कारण ही 40 हजार से अधिक जान जाने का अनुमान है। हैजा के कारण होने वाली मौतों के आंकड़े सामने आये हैं। करीब करीब दोगुनी गति से हैजा के मामले सामने आने लगे हैं। 2023 में सात लाख के करीब मामले सामने आये हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इसीलिए चिंता जताई है। दरअसल टीकाकरण अभियान प्रभावित होने के लिए किसी को दोष भी नहीं दिया जा सकता। कोरोना 2019 के हालात ही ऐसे थे कि उस समय केवल और केवल कोरोना संक्रमण को फैलने से रोकने और लोगों की जान बचाना एकमात्र प्राथमिकता रह गई थी। सबकुछ ठहर जाने और दुनिया के किसी भी कोने पर नजर डालो, चारों ओर मौत का तांडव दिखाई देता था। सारी दुनिया का ध्यान इस त्रासदी से एक -एक जान बचाना बड़ी प्राथमिकता थी। इस दौरान टीकाकरण अभियान तो जोर-शोर से चला पर वह अन्य बीमारियों के स्थान पर कोरोना से बचाव के वैक्सीनेशन और उसकी पहली और दूसरी डोज पर ही केन्द्रित रहा।

आज का राशिफल

हमारे अनुभवी ज्योतिषियों की टीम के अनुसार आप कई विविध लक्ष्यों को पूरा करेंगे। क्या आप यह जानना चाहते है कि आपके जीवन के ऐसे कौनसे क्षेत्र है, जहां आपके सितारे बुलंद रहेंगे और दूसरी तरफ, आपको किस बातों से सावधान रहना चाहिए। हम न सिर्फ हमारे काम में और जटिल मुद्दों को सुलझाते वक्त सकारात्मक ऊर्जा को महसूस करेंगे, बल्कि पारम्परिक संबंधों में भी, जहां यह स्थानान्तरण हमें संताप और बातचीत में लाभ प्रदान करेगा

मेष
परिजनों के साथ कोई विवाद हो सकता है। आपका आज का दिन मध्यम फलदायी रहेगा। दिन की शुरुआत में स्फूर्ति और आनंद का अनुभव होगा। आपकी रचनात्मकता से आप कठिन काम भी आसानी से बना पाएंगे।

वृष
कार्यालय या व्यवसाय में काम अधूरा रहने से मन निराश रहेगा। यात्रा में विघ्न आ सकता है। आध्यात्मिकता और ईश्वर भक्ति से मन प्रसन्न रहेगा। हालांकि आप के काम योजनानुसार पूरे होंगे। अधूरे काम पूरे होंगे। धन लाभ की संभावना है।

मिथुन
आपका आज का दिन मिश्रित फलदायी है। आज आप चिंता से घिरे रहेंगे और शारीरिक स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं रहेगा। परिवार में भी किसी से मतभेद रहेगा, लेकिन दोपहर के बाद आप सभी कामों में अनुकूलता का अनुभव करेंगे।

कर्क
आज नए काम का आरंभ करने के लिए समय अनुकूल नहीं है। अधिक कार्य से आलस्य और मानसिक चिंता का अनुभव करेंगे। यात्रा आज लाभदायी नहीं है, परंतु दोपहर के बाद आपको कुछ नया करने की प्रेरणा मिलेगी। धार्मिक काम होंगे। काम का उत्साह बना रहेगा।

सिंह
परिजनों के साथ सम्बंध मधुर होंगे। हेल्थ आज अच्छी रहेगी। हालांकि बाहर खाने-पीने से बचें। दोपहर के बाद अधूरे काम पूरे हो सकते हैं। अस्वस्थ व्यक्तियों को स्वास्थ्य लाभ होगा। आर्थिक लाभ की पूरी संभावना है।

कन्या
विदेश जाने के इच्छुक लोग आज सकारात्मक प्रयास कर सकते हैं। दोपहर के बाद नया काम या टारगेट मिल सकता है। कोई अधूरा काम आज पूरा हो सकेगा। व्यापार में बढोतरी की संभावना हैं। गृहस्थ जीवन में मधुरता छाई रहेगी। मायके से अच्छे समाचार मिलेंगे।

तुला
आपको काम पूरा होने का उत्साह बना रहेगा। परिवार का वातावरण भी परिवर्तित होगा। आर्थिक लाभ की भी संभावना है। आज का दिन पारिवारिक तथा व्यावसायिक क्षेत्र में लाभ का अवसर लाया है।

वृश्चिक
किसी प्रिय मित्र या रिश्तेदार से बातचीत करके मन प्रसन्न रहेगा। व्यापार में आर्थिक लाभ होगा। सुबह के समय आप शारीरिक रूप से स्वस्थ और मन से खुश रहेंगे। परिजनों और मित्रों के साथ कहीं बाहर जाने का कार्यक्रम बन सकता है।

धनु
स्वास्थ्य का ध्यान रखें। आज का दिन आनंदपूर्वक गुजरेगा। व्यापार करने वालों के लिए आज का दिन लाभदायी है। परिजनों तथा मित्रों के साथ अच्छे पलों को गुजारेंगे। किसी तरह का आर्थिक लाभ आपको हो सकता है।

मकर
गृहस्थ जीवन में मधुरता बनी रहेगी। आकस्मिक धन लाभ के योग हैं। किसी छोटी यात्रा का आयोजन कर पाएंगे। व्यापार में वृद्धि होगी। विदेश में रहने वाले रिश्तेदारों से शुभ समाचार मिलेंगे। परिश्रम की अपेक्षा फल कम मिलेगा।

कुंभ
दिन की शुरुआत में आप थोड़े कन्फ्यूज रहेंगे। आज आप अपना जिद्दी व्यवहार छोड़ दें। वाणी मधुर बनाए रखें, इससे कोई भी काम आसानी से बना पाएंगे, हालांकि किसी तरह के नए काम आज शुरू ना करें।

मीन
संतान की ओर से भी अच्छे समाचार मिलेंगे। किसी मीटिंग के लिए छोटी यात्रा हो सकती है। नए काम शुरू करने के लिए आज का दिन अनुकुल है। आज आप कुछ धार्मिक बने रहेंगे। कार्यालय या व्यावसायिक स्थल पर काम का भार अधिक रहेगा।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

बिहार की राजनीति का चिराग संभावना का वाहक

-ललित गर्ग

खुद को प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का हनुमान बताने वाले युवा नेता चिराग पासवान इन दिनों बिहार की राजनीति में लाइमलाइट में हैं। राजनीतिक कौशल एवं प्रभावी रणनीति के तहत तेजी से अपनी राजनीतिक जमीन को मजबूती देते हुए बिहार की राजनीति का चिराग संभावना का वाहक बन रहा है। चिराग पासवान सक्षम जनप्रतिनिधि के साथ-साथ मौलिक सोच एवं संवेदनाओं के प्रतीक हैं। उन्हें सूक्ष्मदर्शी और दूरदर्शी होकर प्रासंगिक एवं अप्रासंगिक के बीच भेदरेखा बनाने एवं अपनी उपस्थिति का अहसास कराने का छोटी उम्र में बड़ा अनुभव है जो भारतीय राजनीति के लिये शुभता का सूचक है। लोकतंत्र का सच्चा जन-प्रतिनिधि वही है जो अपनी जाति, वर्ग और समाज को मजबूत करने के साथ देश को मजबूत करें। बिहार फर्स्ट, बिहारी फर्स्ट की लड़ाई लड़ने वाले चिराग 14 करोड़ बिहारियों को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने के लिये प्रतिबद्ध है।

आगामी लोकसभा चुनाव-2024 चिराग का सशक्त एवं उम्मीदभरा राजनीतिक भविष्य उजागर करते हुए बिहार के शीर्ष नेतृत्व की ओर अग्रसर करे तो कोई आश्चर्य नहीं। इस बात के संकेत इनदिनों की बिहार की राजनीति गतिविधियों से मिलने लगे हैं। गतदिनों भाजपा मुख्यालय से विनोद तावड़े ने बिहार के एनडीए गठबंधन में सीट शेयरिंग का अपना फॉमूर्ला सार्वजनिक किया, जिसमें भाजपा को 17 सीटें, जदयू को 16 सीटें तो चिराग पासवान के नेतृत्व वाली लोजपा (रामविलास) के खाते में 5 सीटें गईं। वहीं उपेंद्र कुशवाह और जीतनराम मांझी की पार्टी को एक-एक सीट दी गई। बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के आवास की एक बड़ी तस्वीर सामने आई, जिसमें नीतीश चिराग के कंधे पर हाथ रखे आशीर्वाद की मुद्रा में दिखाई दे रहे हैं। इसी तरह का एक चित्र पहले चर्चित हुआ जिसमें प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी भी चिराग की पीठ थपथपाते हुए दिखाई दे रहे हैं।

भारतीय राजनीति में युवाओं की भागीदारी को लेकर अक्सर बड़ी-बड़ी बातें हर किसी मंच से होती रहती हैं लेकिन कोई दल उन्हें प्रतिनिधित्व का मौका नहीं देता क्योंकि उनकी नजर में युवा वोट भर हैं। राजनीतिक दल उनका इस्तेमाल भीड़ और ट्रौलिंग के लिए करते रहते हैं। हालांकि इस

मिथक को चिराग ने तोड़ा, 2014 के लोकसभा चुनाव में जमुई सीट पर 80 हजार से ज्यादा मतों से विजयी हुए थे तो एक ही संसदीय दौर में उन्होंने जनता का विश्वास इस कद्र जीता कि 2019 के चुनाव में चिराग ने 5 लाख से ज्यादा वोट हासिल करते हुए लगातार दूसरी बार जीत दर्ज की। करिश्माई व्यक्तित्व वाले चिराग ने आगामी चुनाव में एनडीए को बिहार में 40 में से 40 सीटें मिलने का दावा किया है। इसमें कोई संदेह भी नहीं है क्योंकि 2019 में जब एनडीए में 3 पार्टियां थी, तब 40 में से 39 सीटें जीती थीं और इस बार 5 पार्टियां हैं और लोगों का उत्साह बताता है कि बिहार में 40 सीटों के साथ एनडीए देश में 400 सीटों के लक्ष्य को आसानी से पार कर लेगा।

चिराग पासवान एक भारतीय राजनीतिज्ञ तथा लोक जनशक्ति पार्टी के राजनेता है। वे भारतीय राजनीति में सर्वाधिक मतों से जीतने वाले दलितों के शीर्ष नेता एवं लोक जनशक्ति पार्टी (लोजपा) के संस्थापक रामविलास पासवान के पुत्र हैं। चिराग ने न केवल बिहार की राजनीति में बल्कि समूची देश की राजनीति में युवा संभावनाओं को उजागर करने की खनक पैदा की है। यह वह आहट है जो भारत की राजनीति को एक नयी दिशा एवं दृष्टि प्रदत्त करेंगी। क्योंकि चिराग वोट की राजनीति के साथ-साथ सामाजिक उत्थान की नीति के चाणक्य है। वे रोजगार के नाम से एक एनजीओ भी चलाते हुए बिहार के युवाओं को बडे.पैमाने पर रोजगार दिलाने की मुहिम को संभव किया है। चिराग का रोजगार एक मौलिक सोच की निष्पत्ति है और चिराग भारत की राजनीति में एक मौलिक सोच के प्रतीक नेता के रूप में उभर रहे हैं और मौलिकता अपने आप में एक शक्ति होती है, जो व्यक्ति की अपनी रचना होती है एवं उसी का सम्मान होता है। संसार उसी को प्रणाम करता है जो भीड़ में से अपना सिर ऊंचा उठाने की हिम्मत करता है, जो अपने अस्तित्व का भान कराता है। मौलिकता की आज जितनी कीमत है, उतनी ही सदैव रही है। जिस व्यक्ति के पास अपना कोई मौलिक विचार या कार्यक्रम है तो संसार उसके लिए रास्ता छोड़कर एक तरफ हट जाता है और उसे आगे बढ़ने देता है। मौलिक विचार तथा काम के नये तरीके खोज निकालने वाला व्यक्ति ही समाज एवं राष्ट्र की बड़ी रचनात्मक शक्ति होता है अन्यथा ऐसे लोगों से दुनिया भरी पड़ी है जो पीछे-पीछे चलना चाहते हैं और चाहते हैं कि सोचने का काम कोई और ही करे। चिराग ने भारत की राजनीति में युवा पीढ़ी के लिए कुछ नया सोचा है, कुछ मौलिक सोचा है, तो सफलता निश्चित है। वे इसी सोच से प्रदेश की राजनीति से केन्द्र की राजनीति की ओर अग्रसर होकर सफल नेतृत्व देने में सक्षम साबित होंगे, इसमें कोई संदेह नहीं है।

लोजपा अब पूरी तरह युवाओं के हाथ में है। चिराग युवा हैं, सक्षम है, प्रखर वक्ता है, कुशल संगठनकार एवं प्रबन्धक हैं और विगत में उन्होंने अनेक अवसरों पर अपनी इन क्षमताओं के साथ-साथ निर्णायकता साबित की है। कई मौकों पर यह बात सामने आई है कि बिहार के साथ-साथ केंद्रीय राजनीति के दांव-पेच और समीकरणों को भी वह अच्छी तरह जानने-समझने लगे हैं। हालांकि उनके सामने सबसे बड़ी चुनौती दलित राजनीति के अगले ध्वजवाहक बनने और अपने लक्षित मतदाता समूह में पिता जैसी स्वीकार्यता पाने की होगी। चिराग नई लकीर खींचने में पारंगत है, वे अपने पिता की प्रतिछाया ही न बनकर कुछ नये प्रतिमान स्थापित करेंगे, राजनीति की नई परिभाषाएं गढ़ंगे। क्योंकि वे विपरीत स्थितियों में सामंजस्य स्थापित करके भरोसा और विश्वास का वातावरण निर्मित करने में दक्ष है।

युवापीढ़ी और उनके सपनों का मूर्च्छित होना और उनमें निराशा का वातावरण निर्मित होना- एक सबल एवं सशक्त राष्ट्र के लिये एक बड़ी चुनौती है। चिराग ने यह अनुभव किया, यह उनकी सकारात्मक राजनीति एवं मानवतावादी सोच का ही परिणाम है। चिराग इस मामले में अन्य क्षत्रप या नेता पुत्रों से थोड़ा अलग इसलिए भी हैं कि उनका नजरिया और अंदाज भविष्योन्मुखी और विकासवादी प्रतीत होता है। यही कारण प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी चिराग में राजनीतिक संभावनाओं को गहराई से समझा है। इन सबके बावजूद यक्ष प्रश्न यह है कि क्या चिराग अपने पिता की दलित राजनीति की विरासत को कोई नया आयाम दे पाएंगे। या फिर वह इस विरासत से इतर मुख्यधारा की राजनीति में अपनी काबिलियत दिखाएंगे। चिराग राजनीति की बारीकियों को समझने में माहिर है। राजनीति का मौसम विज्ञान समझने में चिराग ने मोदी की आंधी को भलीभांति भांप लिया है और वह किसी संशय में नहीं है। अपने मतदाता समूह में उनकी मजबूत स्वीकार्यता भी है। हाल के समय में भारतीय राजनीति में नई पीढ़ी के कई नेता पुत्रों ने अभी तक कोई बहुत बड़ी उम्मीद नहीं जगाई है। चाहे राहुल गांधी हों या तेजस्वी यादव, फिलहाल इनके सियासी सितारे डूब-उतर रहे हैं। साथ ही अपने प्रभाव में निरंतरता बरकरार रखने में कहीं न कहीं चूक भी रहे हैं। हालांकि इन नामों की तुलना में चिराग के पास कोई बहुत बड़ी राजनीतिक विरासत तो नहीं है, लेकिन वे अपने होने का अहसास, कुछ अनूठा करने का एवं जनता के दिलों को जीतने का हूनर साबित किया है।

उत्तरप्रदेश चुनाव में छोटे दल दिखा सकते है बड़ा कमाल!

अशोक भाटिया

उत्तरप्रदेश के आगामी लोकसभा चुनाव में जब भी पार्टियों के बारे में समाचार लिखे जाते है तब समाचारों की धुरी बड़े दलों के आस-पास ही घूमती नजर आती है जिनका प्रतिनिधत्व अभी लोक सभा में है पर हम छोटे व स्थानीय दलों को भूल जाते है जिनका थोडा बहुत भी प्रभाव कुछ मतदाताओं पर है और जो किसी भी बड़ी पार्टी का खेल बना सकते है और बिगाड़ भी सकते है । समाजवादी पार्टी के मुखिया अखिलेश यादव ने पिछले दिनों जब यह ऐलान किया कि अपना दल (कमेरावादी) के साथ समाजवादी पार्टी का अब कोई गठबंधन नहीं है। इसके कुछ ही दिन हुए हैं और अब पल्लवी पटेल की पार्टी ने नए मोर्चे का ऐलान कर दिया । पल्लवी पटेल की पार्टी ने असदुद्दीन ओवैसी की पार्टी ऑल इंडिया मजलिस-ए-इत्तेहादुल मुस्लिमीन (एआईएमआईएम) से हाथ मिला लिया है।

इस नए मोर्चे में बाबूराम पाल की राष्ट्रीय उदय पार्टी, प्रेमचंद बिंद की प्रगतिशील मानव समाज पार्टी भी शामिल है। इसे नाम दिया गया है पीडीएम न्याय मोर्चा यानि पिछड़ा दलित मुस्लिम न्याय मोर्चा। सवाल उठ रहे हैं कि यह नया मोर्चा लोकसभा चुनाव में किसका खेल बनाएगा या बिगाड़ेगा?

नए मोर्चे का नाम और ऐलान के मौके पर कही गई बात, दोनों पर गौर करें तो निशाने पर भारतीय जनता पार्टी से ज्यादा अखिलेश की समाजवादी पार्टी लग रही है। अखिलेश पिछले कुछ समय से पीडीए (पिछड़ा, दलित और अल्पसंख्यक) की बात करते आए हैं। पीडीए को ही आधार बनाकर राज्यसभा चुनाव के समय तेवर दिखाते हुए पल्लवी ने दो टूक कह दिया था कि किसी बच्चन-रंजन को वोट नहीं दूंगी। अब पल्लवी के नेतृत्व में बने इस मोर्चे का नाम ही पीडीएम रख दिया गया है जो यह बताने के लिए पर्याप्त है कि फोकस किस मतदाता वर्ग पर रहने वाला है।

पल्लवी ने कहा भी कि पीडीए के ए में बड़ी कन्फ्यूजन है। कहीं ये अल्पसंख्यक रहता है तो कहीं अगड़ा, कहीं आदिवासी बन जाता है। पल्लवी और ओवैसी की रणनीति पिछड़ा और मुस्लिम वोटों का नया समीकरण गढ़ने की है। अगर यह रणनीति तनिक भी सफल होती है तो रामपुर, मुरादाबाद, आजमगढ़ जैसी कई ऐसी सीटों पर सपा का खेल बिगाड़ सकती है जहां ओबीसी और मुस्लिम मतदाता ही जीत-हार का निर्धारण करते हैं।

ओवैसी की पार्टी मुस्लिम पॉलिटिक्स की पिच पर महाराष्ट्र से बिहार तक दम दिखा चुकी है लेकिन उत्तरप्रदेश यह वोटर अधिकतर सपा के साथ ही रहा है। ओवैसी ने खुद कहा भी कि 2022 के उत्तरप्रदेश चुनाव में 90 फीसदी मुस्लिम वोटर्स ने सपा को वोट किया था। सपा मुस्लिमों के साथ क्या कर रही है, यह सबने देखा है। मुरादाबाद में एसटी हसन के साथ क्या हुआ, किसी से छिपा नहीं है।

अब असदुद्दीन ओवैसी अगर मुस्लिमों के साथ सपा के व्यवहार का जिक्र कर रहे हैं, एसटी हसन की बात कर रहे हैं तो इसके पीछे भी सियासी रणनीति है। आजम खान, इरफान सोलंकी के खिलाफ कानूनी कार्रवाइयों को लेकर मुस्लिम वर्ग में सपा से नाराजगी की बातें होती रही हैं। कहा जाता है कि मुस्लिमों को सपा से नाराजगी की वजह यह है कि इन कार्रवाइयों का सपा जिस तरह का विरोध कर सकती थी, वैसा नहीं किया। अब ओवैसी और पल्लवी की कोशिश मुस्लिमों की नाराजगी को हवा देकर उसे वोट में कैश कराने की है।

राजनीतिक विश्लेषक बताते है कि उत्तरप्रदेश मेंभाजपा का वोट इंटैक्ट है। इस मोर्चे के आने से एंटी इनकम्बेंसी के वोट बंटेंगे और जिसका नुकसान विपक्ष को होगा। नीतीश कुमार एक सीट पर एक उम्मीदवार के जिस फॉमूर्ले की बात कर रहे थे, उसका आधार यही था कि सत्ता विरोधी वोट एकमुश्त पड़ें। इनमें बंटवारा न हो। उत्तरप्रदेश में पहले ही बसपा अलग चुनाव लड़ रही है, अब नए मोर्चे के आने से भी विपक्ष का गणित ही गड़बड़ होगा। इस मोर्चे के उम्मीदवार चुनाव जीतें या नहीं लेकिन सपा-कांग्रेस गठबंधन के उम्मीदवारों की संभावनाओं को नुकसान जरूर पहुंचा सकते हैं।

पल्लवी की पार्टी का बेस वोटर कुर्मी हैं लेकिन 2014 और इसके बाद हुए चुनावों के नतीजे देखें तो इस समाज पर अपना दल (कमेरावादी) या कृष्णा पटेल के मुकाबले अपना दल (सोनेलाल) और अनुप्रिया पटेल की पकड़ अधिक मजबूत नजर आती है। अनुप्रिया केंद्र सरकार में मंत्री हैं, अपनी पार्टी से दो बार की सांसद हैं।भाजपा में भी स्वतंत्र देव सिंह जैसे मजबूत नेता हैं जिनकी अपने समाज में मजबूत पैठ रखते हैं। सर्वे रिपोर्ट्स के मुताबिकभाजपा और अपना दल (सोनेलाल) के गठबंधन को 2022 के उत्तरप्रदेश चुनाव में कुर्मी बिरादरी के करीब 90 फीसदी वोट मिले थे। ऐसे में अगर पल्लवी अपने समाज के एक छोटे वोटर वर्ग को भी तोड़ पाती हैं तो येभाजपा के लिए झटका होगा।

अनुमानों के मुताबिक उत्तरप्रदेश की कुल आबादी में कुर्मी समाज की भागीदारी 6 फीसदी के करीब है। मुस्लिम भी करीब 20 फीसदी हैं। पूर्वांचल की मिजार्पुर, वाराणसी जैसी लोकसभा सीटों पर कुर्मी समाज प्रभावशाली तादाद में है तो दर्जनभर से अधिक सीटों पर मुस्लिम। वोटिंग पैटर्न की बात करें तो कुर्मी जहांभाजपा को अधिक वोट करते रहे हैं तो वहीं मुस्लिम समाज ज्यादातर सपा के साथ रहा है। अब नया मोर्चा उत्तरप्रदेश की सियासत में किस कदर नया विकल्प बन पाता है, ये देखने वाली बात होगी।

अब बताया तो यह भी जाता है कि ओवैसी-पल्लवी में अलायंस बनने के बाद भी उत्तरप्रदेश में अलायंस करने के बाद भी एआईएमआईएम चुनाव नहीं लड़ रही है। चुनाव से पहले 20 सीटों पर लड़ने की बात हो रही थी। लेकिन अचानक से मुरादाबाद लोकसभा सीट से एआईएमआईएम नेता वकी रशीद ने निर्दलीय नामांकन भरने के बाद वापस ले लिया। उत्तरप्रदेश एआईएमआईएम ने 20 सीटों की लिस्ट भेजी थी लेकिन ओवैसी ने हां-ना कुछ नहीं किया। ओवैसी की पार्टनर पल्लवी पटेल पहले ही अपने उम्मीदवार उतार चुकी हैं। अब सवाल उठेंगे कि, जब चुनाव लड़ना नहीं था तो हैदराबाद से आकर उन्होंने ऐसी पार्टी से अलायंस क्यों किया जिसका दायरा ही फूलपुर, मिजार्पुर, वाराणसी के आसपास तक सीमित है। हालांकि इसके पीछे ओवैसी कह रहे हैं कि,हमारा मकसद बड़ा है।

राष्ट्रीय लोकदल की बात करें तो वह इस समय एनडीए के साथ है । देखा जय तो कभी अजगर (अहीर, जाट, गुर्जर और राजपूत) और फिर मजगर (मुस्लिम, जाट, गुर्जर और राजपूत) समीकरण के तहत पश्चिमी उत्तरप्रदेश में धाक जमाने वाली रालोद वर्तमान में जाटों की पार्टी मानी जाती है। बागपत, बिजनौर, मुजफ्फरनगर, कैराना, नगीना, गाजियाबाद, मेरठ, नोएडा, अलीगढ़, आगरा, मथुरा और बुलंदशहर लोकसभा सीटों पर रालोद का मजबूत वोट बैंक माना जाता है। पिछले दो लोकसभा सभाओं के चुनावों में रालोद का खाता भी नहीं खुला था। लेकिन 16वीं लोकसभा के अंतिम दौर में कैराना लोकसभा सीट पर हुए उपचुनाव में रालोद प्रत्याशी तबस्सुम हसन सपा के सहयोग से जीती थी। वर्तमान में रालोद एनडीए के साथ है। नए गठबंधन के तहत रालोद को आगामी लोकसभा चुनावों में बागपत और बिजनौर की सीटें भी मिली हैं।

अपना दल (सोनेलाल) की बात करें तो वह गैर यादव पिछड़ा वर्ग की कई जातियों की राजनीति करता है। कुर्मियों में अपना दल एस की संयोजक अनुप्रिया पटेल की मजबूत पकड़ मानी जाती है। इस वोट बैंक के जरिए अपना दल(एस) का मीरजापुर, सोनभद्र और उसके आस-पास की कई लोकसभा सीटों पर दबदबा है। उत्तरप्रदेश में पार्टी एनडीए सरकार का प्रमुख घटक है। पार्टी की संयोजक अनुप्रिया पटेल केंद्रीय मंत्री हैं। उनके पति आशीष सिंह पटेल उत्तरप्रदेश सरकार में मंत्री हैं। एनडीए के गठबंधन में अपना दल एस 2014 और 2019 में दो-दो लोकसभा सीटों पर चुनाव लड़ा और जीता है। हालांकि, इस बार अभी तक अपना दल एस की सीटें घोषित नहीं हुई हैं। लेकिन, माना जा रहा है कि भाजपा उन्हें दो ही सीटें देने की तैयारी में हैं।

सुहेलदेव भारतीय समाज पार्टी (सुभासपा) के मुखिया और अति पिछड़ों की राजनीति करने वाले ओम प्रकाश राजभर पूर्वांचल की गाजीपुर, बलिया, आजमगढ़, लालगंज, संत कबीर नगर, अंबेडकर नगर, जौनपुर, घोसी, चंदौली और मछलीशहर सीटों पर असर डालने की स्थिति में हैं। 2022 के विधानसभा चुनाव में सपा के साथ मिल कर लड़ी सुभासपा ने छह सीटें जीती थी। लेकिन, चुनाव के तुरंत बाद राजभर ने सपा का साथ छोड़ दिया और एक बार फिर एनडीए के साथ आ गए। एनडीए में शामिल होने के साथ ही राजभर को योगी मंत्रिमंडल में जगह मिली और लोकसभा चुनाव में भी एनडीए ने सुभासपा को घोसी लोकसभा सीट दी है। निषाद पार्टी इस बार कमल के निशान पर अपना चेहरा लेकर आने वाली है । देखा जाय तो घाघरा के किनारों से लेकर गंगा और यमुना के कछार तक की करीब तीन दर्जन लोकसभा सीटों पर निषाद और उससे जुड़ी हुई जातियों का वोटबैंक नतीजों की दिशा तय करने में सक्षम है। गोरखपुर, बांसगांव, चंदौली, मीरजापुर, भदोही, इलाहाबाद, जालौन, बांदा, फैजाबाद, संतकबीर नगर जैसी सीटों पर इनकी संख्या प्रभावी है। इन वोटों की राजनीति करने वाली निषाद पार्टी एनडीए का हिस्सा है। 2019 की तरह भाजपा ने निषाद पार्टी के नेता प्रवीण निषाद संतकबीर नगर सीट से भाजपा के सिंबल पर उतारा है। हालांकि, निषाद पार्टी की अपेक्षा अधिक की थी।

प्रदेश के अन्य छोटे दल भी किसी न किसी के साथ चुनावी गठजोड़ की कवायद में जुटे हैं। प्रतापगढ़, कौशांबी में असर रखने वाले रघुराज प्रताप सिंह उर्फ राजा भैया को भाजपा का करीब माना जाता है। लेकिन, अभी तक उनकी पार्टी जनसत्ता दल लोकतांत्रिक ने चुनाव को लेकर अपने पत्ते नहीं खोले हैं। रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (ए) उत्तरप्रदेश में गठबंधन के तहत टिकट न मिलने से चुनाव में एनडीए प्रत्याशियों का समर्थन करेगी। स्वामी प्रसाद मौर्य ने भी अपनी नवगठित पार्टी के बैनर तले अकेले चुनाव लड़ने का ऐलान किया है। आजाद समाज पार्टी के मुखिया चंद्रशेखर भी नगीना से चुनाव लड़ रहे हैं। महान दल ने बसपा के समर्थन का ऐलान किया है तो जनवादी पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष संजय चौहान ने सपा प्रमुख पर वादा न निभाने का आरोप लगाते हुए पिछले दिनों अपने बल पर 11 लोकसभा चुनाव लड़ने का ऐलान किया है।

जनता हो राजनीतिक दलों के चुनावी चंदे का स्रोत

(-सुरेश गांधी)

अस्सी के दशक से पहले कांग्रेस को छोड़ दें तो राजनीतिक दलों के चुनावी चंदे का स्रोत आम जनमानस ही थे। उस दौर में पार्टियों के पास एक रसीद बुक हुआ करती थी. इस बुक को लेकर कार्यकर्ता घर-घर जाते थे और लोगों से चंदा वसूलते थे. तो वर्तमान में राजनीतिक दलों को चंदे के लिए जनता के पास क्यों नहीं जाना चाहिए? जबकि सच तो यह है कि जनता खुलकर उनकी मदद करेगी. मतलब साफ है पार्टी के सदस्यों और उन लोगों को चंदा देना चाहिए, जो संबंधित पार्टी की विचारधारा से प्रभावित या सहानुभूति रखते हैं। कंपनियां मुनाफा कमाने के लिए होती हैं तो वो अपना पैसा राजनीतिक दलों को क्यों दें? और फिर उससे राजनीति में भी गंदगी आती है. इसकी बड़ी वजह यह है कि जब कोई कारोबारी (कॉर्पोरेट घराने) अपने कंपनियों के शेयर होल्डर्स का पैसा राजनीतिक दलों को चंदे के तौर पर देंगे, तो उनसे लाभ भी लेना ही चाहेंगे। इसकी पहल भाजपा को ही करनी होगी। देखा जाएं तो जनसंघकाल में भी उसके नेता लोगों के घर-घर जाकर चुनाव चिह्न दीपक बताते हुए उनसे वोट देने के साथ चंदा भी लेते थे

हालांकि, इससे पहले भी चुनावी चंदे को लेकर विवाद रहा है. आंकड़े बताते हैं कि जो पार्टी सत्ता में रही है, उसे सबसे ज्यादा चुनावी चंदा मिला है. जब इलेक्टोरल बॉन्ड नहीं थे, तब भी सत्ता पक्ष ही चंदे पाने के मामले में सबसे आगे रहता था या फिर जिस दल की सत्ता में आने की संभावना सबसे ज्यादा होती थी, उस पर कॉर्पोरेट घराने सबसे ज्यादा मेहरबान होते थे. 60 के दशक में जनसंघ बहुत बड़ी पार्टी नहीं बन पाई थी और उसे पैसे की कमी से जूझना पड़ रहा था, क्योंकि ज्यादातर उद्योगपति सिर्फ सत्तारूढ़ कांग्रेस पार्टी को ही चंदा देते थे. तब वाजपेयी अगस्त 1962 में राज्यसभा में एक प्राइवेट मेंबर बिल लेकर आए. इस बिल में कंपनीज एक्ट, 1956 के तहत बदलाव (संशोधन) का सुझाव रखा गया था. बिल में कहा गया था कि कंपनियों को राजनीतिक दलों को चंदे देने पर रोक लगानी चाहिए. क्योंकि कंपनियों को अपने शेयर होल्डर्स का पैसा राजनीतिक दलों को चंदे के तौर पर देने का नैतिक अधिकार नहीं है. क्योंकि शेयरधारक कंपनी के विचारों से सहमत नहीं हो सकते हैं. वाजपेयी ने सवाल किया कि कंपनियां मुनाफा कमाने के लिए होती हैं तो वो अपना पैसा राजनीतिक दलों को क्यों दें? और फिर उससे राजनीति में भी गंदगी आती है. वाजपेयी का कहना था कि राजनीतिक दलों को चंदे के लिए जनता के पास जाना चाहिए, जनता उनकी मदद करे. इस बिल पर संसद में जबरदस्त बहस हुई. इस विधेयक को सभी राजनीतिक दलों का समर्थन मिला. लेकिन संसद में कांग्रेस के पास भारी बहुमत था. लिहाजा, यह बिल पास नहीं हो पाया था.

वाजपेयी ने राज्यसभा में इस विधेयक पेश करने का उद्देश्य समझाया था. उन्होंने कहा था, राजनीतिक जीवन में धन के प्रभाव को कम करने की जरूरत है. विधेयक में इस बात पर जोर दिया गया था कि पार्टी के सदस्यों और उन लोगों को चंदा देना चाहिए, जो संबंधित पार्टी की विचारधारा से प्रभावित या सहानुभूति रखते हैं. इस मुद्दे पर तीन दिन तक लंबी बहस चली. अंत में वाजपेयी ने कहा था, ऐसा कोई भी कारोबारी नहीं होगा जो कांग्रेस को चंदा सिर्फ इसलिए देगा, क्योंकि वो कांग्रेस की नीतियों से प्रभावित या सहमत हो. वे (कॉर्पोरेट घराने) ऐसा किसी खास विचारधारा को फलते-फूलते देखने के लिए नहीं, बल्कि अपने हितों को आगे बढ़ाने के लिए करते हैं. हालांकि इस समय देश में भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व वाली सरकार केंद्र और कई राज्यों में है. बीजेपी अब देश की सबसे ताकतवर पार्टी है. यही वजह है कि उसे सबसे ज्यादा इलेक्टोरल बांड के जरिए चंदा मिला। हालांकि अन्य पार्टियों को भी उनकी सदस्यता व हिस्सेदारी के अनुपात में ज्यादा चंदा मिला है। हाल ही में सुप्रीम कोर्ट में भी याचिकाकर्ता ने यह तर्क दिया है. जबकि सरकार का कहना है कि पारदर्शिता लाने के लिए इलेक्टोरल बॉन्ड लेकर आए थे. ताकि कोई भी पार्टी अपने आय और व्यय को साफ रखे और चुनाव आयोग को जानकारी देने के लिए बाध्य हो. दरअसल, याचिकाकर्ता का कहना था कि सत्तारूढ़ दल या सत्ता में आने वाले पार्टी को बहुत ज्यादा पैसा मिलता है. क्योंकि कॉरपोरेट घराने उनको पैसा देते हैं और सत्ता में आने पर अपने हित से जुड़े काम करवाते हैं और मदद लेते हैं. चंदा लेने वाली पार्टी उनके एहसान के तले दबी रहती है. लिहाजा उनके अनुसार काम करती है और गैरकानूनी काम को भी कानूनी अमलीजामा पहनाने से पीछे नहीं हटती है.

हालांकि इलेक्टोरल बॉन्ड रद्द हो जाने के बाद पार्टियों के पास और भी रास्ते हैं जहां से वो कमाई कर सकतीं हैं. इनमें डोनेशन, क्राउड फंडिंग और मेंबरशिप से आने वाली रकम शामिल है. इसके अलावा कॉर्पोरेट डोनेशन से भी पार्टियों की कमाई होती है. इसमें बड़े कारोबारी पार्टियों को डोनेशन देते हैं. फिरहाल, देश में इलेक्टोरल बॉन्ड चर्चा में है. चुनावी चंदे पर विपक्ष मुखर है. सुप्रीम कोर्ट ने भी पारदर्शिता पर जोर दिया है और इस योजना को ही रद्द कर दिया है. जबकि सरकार का दावा है कि इलेक्टोरल बॉन्ड पॉलिसी की वजह से ही चंदे की सही जानकारी मिल पा रही है. प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी चुनावी चंदे पर प्रतिक्रिया दी. पीएम मोदी ने कहा, 2014 से पहले जब चुनाव हुए तो कौन सी एजेंसी बता सकती है कि पैसा कहां से आया और कहां गया? हम चुनावी बॉन्ड लेकर आए, इसलिए आज आप बता पा रहे हैं कि किसने किसको कितना दिया और कैसे दिया, वरना यह पता ही नहीं चल पाता. उन्होंने कहा कि जो लोग इसको लेकर आज नाच रहे हैं या गर्व कर रहे हैं, वो पछताने वाले हैं. 2014 से पहले जितने चुनाव हुए उनमें खर्चा तो हुआ ही होगा, ऐसी कौन सी एजेंसी है जो बता पाएं कि पैसा कहां से आया था और कहां गया और किसने कितना खर्च किया. मोदी ने इलेक्टोरल बॉन्ड बनाया था, इसके कारण आप ढूंढ पा रहे हो कि पैसा कहां से आया, किसने दिया, वरना पहले तो यह पता ही नहीं लग पाता था. कोई व्यवस्था पूरी नहीं होती, उसमें कमियां हो सकती है और कमियों को सुधारा जा सकता है. बता दें, चुनावी बॉन्ड योजना से पहले पार्टियों को चंदा अधिकतर नगदी के तौर पर मिलता था, जिससे राजनीतिक दलों और चुनावी प्रक्रिया में काले धन को बढ़ावा मिलता था. किसी पार्टी को चंदा देने वालों को अक्सर विरोधी पार्टी से निशाना बनाए जाने की आशंका रहती थी. चंदे में दी गई राशि की पूरी जानकारी उनके एनुअल अकाउंट में होती थी. जबकि राजनीतिक पार्टियां चुनाव आयोग को चंदा देने वाले का नाम और प्राप्त राशि की जानकारी देती थीं. ऐसी स्थिति में आमतौर पर कॉरपोरेट चेक के जरिए बड़ी रकम का चंदा देने से बच जाता था, क्योंकि इसकी पूरी जानकारी आयोग को देनी होती थी. नवंबर 2023 में केंद्र ने सुप्रीम कोर्ट को बताया था कि वित्त वर्ष 2004-05 से 2014-15 के बीच 11 साल की अवधि के दौरान राजनीतिक दलों की कुल आय का 69 फीसदी हिस्सा ह्यअज्ञात स्रोतोंह्व से प्राप्त हुआ था. सॉलिसिटर जनरल तुषार मेहता ने कोर्ट को बताया था कि इस अवधि के दौरान, ह्यअज्ञात स्रोतोंह्व से राष्ट्रीय पार्टियों की आय 6,612.42 करोड़ रुपये और क्षेत्रीय पार्टियों की आय 1,220.56 करोड़ रुपये थी. अज्ञात स्रोत का अर्थ हुआ कि ऐसे राजनीतिक चंदे का कोई लेखा जोखा नहीं था. ऐसे में राजनीतिक चंदे कैश में दिए जाते हैं और बैंकिंग सिस्टम से बाहर रहते हैं. इस कारण ऐसे चंदे को ब्लैक मनी माना जा सकता है.

पहले कैसे घपला करतीं थी पार्टियां?

इलेक्टोरल बॉन्ड से पहले की स्थिति को देखें तो सभी राजनीतिक दलों के लिए आयकर रिटर्न दाखिल करते समय पार्टी फंड में 20 हजार रुपये से अधिक का योगदान देने वाले दानकताओं के नाम और अन्य विवरण रिपोर्ट करना अनिवार्य था. 20 हजार से कम राशि दान करने वालों की जानकारी नहीं मांगी जाती थी, इस दान को अज्ञात स्रोतों से आमदनी के रूप में घोषित किया जाता था और ऐसे दानदाताओं के विवरण सार्वजनिक डोमेन में उपलब्ध नहीं होते थे. एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेट रिफॉर्म्स यानी एडीआर ने 2017 में एक अध्ययन के जरिए पाया कि 2004-5 और 2014-15 के बीच भारत में राजनीतिक दलों की कुल आय 11 हजार 367 करोड़ रुपये थी, जिसमें 20 हजार से कम दान वाले दान से प्राप्त आमदनी कुल आय का 69 प्रतिशत हिस्सा थी. यानी 7833 करोड़ रुपये अज्ञात स्रोतों से आए थे, जबकि राजनीतिक दलों की कुल आय का केवल 16 प्रतिशत हिस्सा ही ज्ञात दानदाताओं से था.

पहले पता ही नहीं चलता था कहां से हुई फंडिंग

2004 के बाद से 2015 तक 6 राष्ट्रीय पार्टियों (कांग्रेस, बीजेपी, बीएसपी, एनसीपी, सीपीआई, सीपीएम) और 51 क्षेत्रीय पार्टियों को कुल आय 11,367.34 करोड़ रुपये में से अज्ञात स्रोतों से आय 7,832.98 करोड़ रुपये थी. इसमें राष्ट्रीय पार्टियों को 71 फीसदी फंडिंग अज्ञात स्रोतों से हुई और क्षेत्रीय पार्टियों के लिए यह 58 फीसदी थी. 11 साल में कांग्रेस की 83 फीसदी फंडिंग, बीजेपी की 65 फीसदी, एसपी की 95 फीसदी और शिरोमणि अकाली दल की 86 फीसदी फंडिंग का पता नहीं चला पाया था कि किसने उनको यह रकम दी है. इस कार्यकाल में राष्ट्रीय पार्टियों को अज्ञात स्रोतों से मिलने वाली फंडिंग में 313 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई जबकि क्षेत्रीय पार्टियों की फंडिंग में 652 प्रतिशत की बढ़ोतरी देखी गई. संयोग से बसपा एकमात्र ऐसी पार्टी है, जो लगातार घोषणा करती है कि उसे 20,000 रुपये से अधिक का चंदा नहीं मिला. बसपा का कहना था कि उसे अज्ञात स्रोतों से 100 प्रतिशत दान मिला है और पिछले 11 वर्षों में कुल आय में 2057 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई थी. तब दलों को 20 हजार रुपये से कम के चंदे का विवरण न बताने की छूट थी। इसके चलते कई दल यह बताते थे कि उन्हें करोड़ों का चंदा मिला तो लेकिन वह सब 20-20 हजार रुपये से कम का यानी फुटकर ही था। कांग्रेस जैसी बड़ी पार्टी के पास सारा काला धन आता था। यह सर्वविदित है कि खर्चीले चुनाव राजनीति में भ्रष्टाचार का एक बहुत बड़ा कारण हैं. चुनाव लड़ने के लिए धन की जरूरत पड़ती है. आजादी के बाद भारतीय राजनीति और उसमें सक्रिय राजनीतिक दलों का जिस तरह से विकास हुआ है, उसमें अब पार्टियां जनता से मिलने वाले चंदे या आर्थिक मदद पर निर्भर नहीं रह गयी हैं. वे लगभग पूरी तरह बड़े कॉरपोरेट घरानों से मिलने वाले धन और सत्ता प्राप्त करने के बाद किए गए भ्रष्टाचार से कमाए धन पर निर्भर हैं.

इलेक्टोरल बॉन्ड पर सुप्रीम कोर्ट ने क्या कहा?

राजनैतिक दलों को चंदा देने के लिए 2018 से लागू की गई इलेक्टोरल बॉन्ड योजना को सुप्रीम कोर्ट की संविधान पीठ ने 15 फरवरी को असंवैधानिक करार दे दिया. जस्टिस डीवाई चंद्रचूड़ की अध्यक्षता वाली पांच जजों की संविधान पीठ ने एक राय से अपने फैसले में कहा कि राजनीतिक दलों को गुमनाम चंदे वाली चुनावी बांड योजना संविधान के अनुच्छेद 191ए के तहत मतदाताओं के सूचना के अधिकार का उल्लंघन करती है. व्यक्तिगत चंदे से ज्यादा परेशानी कंपनियों द्वारा दिए जाने वाले चंदे से है. कोर्ट ने कहा कि इस बात की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता कि चंदा लेने वाले राजनीतिक दल और कंपनियों के बीच एक तरह का गठजोड़ पैदा हो जाएगा. संविधान पीठ ने कहा कि यह योजना राजनीतिक प्रक्रिया में आम वोटर के बजाय बड़ी कॉरपोरेट कंपनियों के गैर-वाजिब दखल को बढ़ावा देती है. यह एक, व्यक्ति एक वोट के राजनीतिक समानता के बुनियादी सिद्धांत और स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावी प्रक्रिया में बाधा डालने वाली योजना है. जबकि सरकार का कहना है कि इसके दुरुपयोग को रोकने के लिए कई प्रावधान किए गए थे जैसे सिर्फ वही पार्टी इलेक्टोरल बॉन्ड ले सकती थी, जिसे पिछले आम चुनाव में कम से कम 1 प्रतिशत वोट हासिल हुए हो, केवल वही व्यक्ति या कंपनी बॉन्ड खरीद सकते थे जिनका केवाईसी पूरा हो यानी जिनकी पहचान बैंक स्थापित कर चुका हो, बॉन्ड का इस्तेमाल अवैध लेनदेन में ना हो इसके लिए 15 दिन के भीतर ही इनको भुनाना जरूरी किया गया था. अगर 15 दिनों में बॉन्ड को कैश नहीं कराया जाता है तो इसका पैसा प्रधानमंत्री राहत कोष में ट्रांसफर हो जाता था. हालांकि कोर्ट ने चंदा देने वाले की निजता और एक नागरिक के राजनीतिक दल की फंडिंग को जानने के अधिकार में संतुलन को चुनावी प्रक्रिया में पारदर्शिता के लिए जरूरी बताया. इस व्यवस्था को लाते समय सरकार की ओर से यह तर्क दिया गया था कि चुनावी बॉन्ड के इस सुधार से राजनीतिक फंडिंग के क्षेत्र में पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ने की उम्मीद है. साथ ही भविष्य में अवैध फंड की गतिविधि को भी रोका जा सकेगा. चुनावी बॉन्ड योजना की घोषणा तत्कालीन वित्त मंत्री अरुण जेटली ने 2017-18 के अपने बजट भाषण में की थी और इसे राजनीतिक वित्त पोषण में पारदर्शिता लाने के प्रयासों के तहत राजनीतिक दलों को दिए जाने वाले नकद चंदे के विकल्प के रूप में पेश किया था.

चुनावी बॉन्ड से कितना-कितना मिला पैसा

इसमें देश के 25 राजनीतिक दलों को 127 अरब 69 करोड़ 8 लाख 93 हजार रुपए मिले हैं। पांच मूल्य वर्ग में बॉन्ड खरीद गए हैं। इसमें न्यूनतम ट्रांजक्शन 1 हजार और अधिकतम 1 करोड़ रुपए का है। बाकी 10 हजार, 1 लाख और 10 लाख रुपए के मूल्यवर्ग में बॉन्ड खरीदे गए। राजनीतिक दलों में सबसे ज्यादा पैसा करीब 60.60 अरब रुपए बीजेपी को मिला है। जबकि दूसरे नम्बर पर ऑन इंडिया तृणमूल कांग्रेस पार्टी है, जिसे 16.09 अरब रुपए मिले। वहीं, कांग्रेस के खाते में 14.21 अरब रुपए गए है। तृणमूल कांग्रेस पार्टी तो कांग्रेस से भी आगे निकल गई।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

दैनिक इबादत
सम्पादकीय

स्वराज से रामराज्य की ओर बढ़ता भारत

ऋषियों के प्रताप से मेरा देश सांस्कृतिक भारत, आध्यात्मिक भारत, संस्कारित भारत, सनातनी भारत, प्राचीन भारत, अद्वितीय भारत, विश्वगुरु भारत सहित अनेक नामों से प्रतिष्ठित है। केवल अध्यात्म ही नहीं, विज्ञान सहित हर क्षेत्र में दुनिया को बहुत कुछ देने वाला भारत ही है। विश्व के अनेक यात्रियों ने आज से सैंकड़ों-हजारों वर्ष पूर्व भारत का दौरा कर इसे धरती पर स्वर्ग कहा तो किसी ने इसे सोने की चिड़िया कहा। इसीलिए ज्ञान की चाह में भारत आने वालों से अधिक सोने की चिड़िया के पंख नोंचने वाले यहां आये। इन दुष्टों ने सोमनाथ के मंदिर सहित अनेक स्थानों पर लूटपाट तो की ही, हमारी श्रद्धा के केन्द्रों को भी नष्ट-भ्रष्ट किया। अयोध्या, मथुरा, काशी ही नहीं देश के भिन्न भागों में ऐसे असंख्य स्थान मौजूद हैं जो आक्रांताओं के अमानुष होने के प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। देश की राजधानी दिल्ली में भी कुतुबमीनार परिसर में बनी कुव्वत उल इस्लाम मस्जिद के खण्डहर आज भी आक्रांताओं के पाप की गवाही देते हैं। मेरा भारत केवल अपने मंदिरों की वास्तुकला के लिए ही प्रसिद्ध नहीं है। सत्य, श्रम, सेवा, साहस, शौर्य हमारी पहचान है इसीलिए भारतीय जीवन दर्शन पूरे विश्व को आकर्षित करता रहा है। महात्मा चाणक्य के शिष्य चन्द्रगुप्त मौर्य ने बार-बार आने वाले आक्रांताओं से भारत की सीमाओं को सुरक्षित किया। महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी ने अपने अद्वितीय शौर्य से जन-जन के हृदय में स्वराज्य का भाव पैदा किया तो गुरु तेगबहादर जी स्वधर्म के लिए बलिदान की प्रेरणा दी। दुर्भाग्य यह कि आक्रांताओं की वर्तमान पीढ़ी भी भारत को अभारत बनाने के लिए कुछ भी करने पर आमादा है तो दूसरी ओर भारतपुत्र अपने पूर्वजों की पुण्यधरा की प्रतिष्ठा बहाल करने के लिए प्राण-प्रण से संकल्पित है। उनके हृदय में यहां रामराज्य स्थापित करने की इच्छा हिलोरे ले रही है। भारतीयता के पर्याय हिन्दुत्व में राष्ट्र भक्ति सर्वोपरि है। राष्ट्र को स्वाभिमान, स्वाधीनता, स्वावलंबन तथा संस्कृति को स्थिरता एवं सुदृढ़ता प्रदान करने वाले आचार्य चाणक्य जैसे अनन्त ऋषि हमारे प्रेरणा स्रोत रहे हैं तो भगवा युगों-युगों से हमारी पहचान है। 'वयं पंचाधिक शतम्' सदियों से हमारी नीति है। जब भी समाज संगठित होकर खड़ा हुआ, सेल्युकस जैसे आक्रांता को भी भारत के समक्ष मस्तक झुकाना पड़ा। यह सत्य है कि स्वराज प्राप्त करना भी सरल न था परंतु स्वराज को सुराज अर्थात रामराज्य बनाना एक चुनौती है। आज भारत को अभारत बनाने के लिए उत्पात मचाने को आतुर शक्तियों को उनकी औकात दिखानी है, वहीं सज्जन शक्ति का सम्वर्धन भी करना है। स्वराज को रामराज्य बनाने की प्रथम और अनिवार्य शर्त सामाजिक समरसता है।

समाज की एकता है। यह कार्य केवल और समाज की एकता से ही संभव है। अतः हम सबको हर प्रकार के मतभेद, मनभेद, ऊंच-नीच की भावना हमेशा के लिए भुलाकर एक समान भारतपुत्र के रूप में व्यवहार करना पड़ेगा। अपेक्षा रूपी सपनों को साकार करने के लिए हम सबको कड़ी मेहनत, दूरदृष्टि, आपसी सौहार्द को अपनी जीवनशैली का अनिवार्य अंग बनाना पड़ेगा।

इंडिया की लोकतंत्र बचाओ महारैली के बेसूरे स्वर

इंडिया गठबंधन की चोटी से लेकर प्रांत स्तर पर,समाज स्तर पर तेजस्वी और खरे नेतृत्व का नितान्त अभाव है। यह सोच का दिवालियापन ही है कि दिखते हुए भ्रष्टाचार के बावजूद उसका विरोध नहीं करके,ऐसे भ्रष्टाचारियों को बचाने के लिये लोकतंत्र बचाओ रैली का आयोजन हो रहे हैं। राजनीतिक भ्रष्टाचार एक कड़वी सच्चाई है,लेकिन वह भी उतना सच है कि इस मामले में कोई भी दल दूध का धुला नहीं है।

– ललित गर्ग –

दिल्ली के रामलीला मैदान में विपक्षी गठबंधन इंडिया की लोकतंत्र बचाओं महारैली में जुटे 28 दलों के नेता आगामी लोकसभा चुनाव की दृष्टि से कोई प्रभावी संदेश देने में नाकाम रहे हैं। भले ही चुनाव के ठीक पहले विपक्षी दलों ने इसके जरिए अपनी एकजुटता प्रदर्शित करने में कामयाबी हासिल की हो। लेकिन यह एकजुटता भ्रष्ट नेताओं को बचाने की एक मुहिम ही बनकर सामने आयी है। इसमें स्पष्ट रूप से केन्द्र सरकार की भ्रष्टाचार पर गई कार्रवाई की बौखलाहट झलक रही थी। इस रैली में सभी दलों के नेताओं ने देश विकास के मुद्दों, सिद्धान्तों एवं नैतिक तकाजे की बजाय मोटे तौर पर सत्ता पक्ष की भ्रष्टाचार के खिलाफ की जा रही कार्रवाई को लोकतंत्र पर हमला बताते हुए इसी के इर्दगिर्द ही अपनी बातें रखीं। लोकतंत्र बचाओ रैली से उपजे विचारों ने किन्हीं पवित्र उद्देश्यों के बजाय सत्ता हासिल करने की लालसा को ही उजागर किया, यह निराश करने वाली रैली किसी बड़े बदलाव की वाहक बनती हुई नजर नहीं आयी। इस रैली में भारतीय जनता पार्टी एवं प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की शानदार जीत की संभावना से बौखलाए नेताओं की खींच ही ज्यादा सामने आयी है। यही कारण है कि रैली में जो मुद्दा जोरशोर से उठा, वह यह रहा कि यदि भाजपा फिर से सत्ता में आ गई तो लोकतंत्र भी खत्म हो जाएगा और संविधान भी। यह समझना कठिन है कि कोई दल लगातार तीसरी बार सत्ता हासिल करता है तो उससे लोकतंत्र और संविधान कैसे खत्म हो जाएगा। आम जनता के मतों से जीत हासिल करने वाला दल किस तरह से लोकतंत्र को ध्वस्त करने वाला हो सकता है। विपक्षी एकता का यह महाकुंभ मोदी को कोसने की बजाय किन्हीं ठोस मुद्दों के सहारे कोई प्रभावशाली विमर्श खड़ा करने की कोशिश करता तो वह आम जनता को आकर्षित करता और यही स्वस्थ राजनीतिक परिपक्वता का परिचायक होता। लेकिन ऐसा न होना समूचे देश के विपक्षी दलों की नाकामी, उद्देश्यहीनता एवं राजनीतिक अपरिपक्वता का द्योतक हैं। इस रैली में अनेक मुद्दे उठे, जिनमें प्रमुख रहा केंद्रीय एजेंसियों का कथित दुरुपयोग और राजनीतिक भ्रष्टाचार। प्रियंका गांधी ने इस रैली में सरकार के सामने पाँच माँगें रखीं। इनमें प्रमुख दो हैं जिनमें चुनाव आयोग से माँग की गई है कि विपक्षी नेताओं पर छापों की कार्रवाई रोकी जाए। दूसरी और महत्वपूर्ण माँग ये है कि गिरफ्तार हेमंत सोरेन और अरविंद केजरीवाल को तुरंत रिहा किया जाए। इस रिहाई की माँग के पीछे कांग्रेस का उद्देश्य बचे-खुचे संगठनों या पार्टियों को इंडिया गठबंधन से जोड़े रखना है। नीतीश कुमार और ममता बेनर्जी जैसे मज़बूत खम्भे पहले ही उखड़ चुके हैं इसलिए जो कुछ बचा है उसे कांग्रेस समेटे रखना चाहती है, यही उसकी विवशता है। वैसे, इंडिया गठबंधन के घटक दलों के आपसी अंतर्विरोध की छाया भी इस रैली दिखी। कांग्रेस की तरफ से कहा गया कि विरोध किसी खास व्यक्ति से जुड़ा नहीं बल्कि मौजूदा सरकार की तानाशाही के खिलाफ केंद्रित है। जबकि इस रैली का मकसद आम आदमी पार्टी की तरफ से दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल की गिरफ्तारी का विरोध करना बताया गया। यहां आम आदमी पार्टी एवं कांग्रेस के बीच के अन्तर्विरोध को सहज ही समझा जा सकता है। यह रैली भले ही अठाइस दलों का जमावड़ा बनी, इसे विपक्षी दलों की एकजुटता का प्रदर्शन भी कहा गया है। लेकिन जबसे इंडिया गठबंधन बना है, तब से उसमें टूट एवं बिखराव के स्वर सुनाई दे रहे हैं। विचारभेद के साथ मनभेद भी सामने आये हैं। महाराष्ट्र से लेकर बिहार तक तमाम राज्यों में टिकट बंटवारे के सवाल पर इंडिया गठबंधन से जुड़े दलों की आपसी खटपट की खबरें भी आ रही थीं। भले ही ये विवाद गिनी-चुनी सीटों को लेकर थे, लेकिन संदेश स्पष्ट था कि चुनाव सिर पर आने के बाद भी इंडिया गठबंधन से जुड़े दल एकजुट नहीं हो पा रहे। रामलीला मैदान की रैली के जरिए इन दलों ने यह संदेश देने का प्रयास किया है कि मोदी विरोध एवं भाजपा को सत्ता से दूर करने के मुद्दों पर वे एक स्वर में बोल सकते हैं और लगातार बोलते भी रहे हैं, फिर उसके लिये इस महारैली की क्या जरूरत? निश्चित ही एकजुटता के ये स्वर बेसूरे, असहज एवं बनावटी है, इंडिया गठबंधन के राजनैतिक क्षितिज पर जो वरिष्ठ राजनेता हैं उनकी आवाज व किरदार भारतीय जीवन को प्रभावित नहीं कर रहा है। इंडिया गठबंधन से जुड़े दलों की केन्द्र एवं प्रांतों की सरकारों के शासन-काल में तो अपराध, भ्रष्टाचार और साम्प्रदायिकता के जबड़े फैलाए, आतंकवाद, प्रांतवाद, जातिवाद की जीभ निकाले, मगरमच्छ सब कुछ निगलता रहा है। सब अपनी जातियों और ग्रुपों को मजबूत करते रहे हैं- - देश को नहीं। प्रथम पंक्ति का नेता ही नहीं है जिसे मोदी के मुकाबले में खड़ा किया जा सके। भारत के लोग केवल बुराइयों से लड़ते नहीं रह सकते, वे व्यक्तिगत एवं सामूहिक, निश्चित सकारात्मक लक्ष्य के साथ जीना चाहते हैं। अन्यथा जीवन की सार्थकता नष्ट हो जाएगी।

दो तरह के नेता होते हैं- एक वे जो कुछ करना चाहते हैं, दूसरे वे जो कुछ होना चाहते हैं। असली नेता को सूक्ष्मदर्शी और दूरदर्शी होकर, प्रासंगिक और अप्रासंगिक के बीच भेदरेखा बनानी होती है। संयुक्त रूप से कार्य करें तो आज भी वे भारत को विकास की नई ऊंचाइयां दे सकते हैं। लेकिन उन्होंने सहचिन्तन को शायद कमजोरी मान रखा है। नेतृत्व के नीचे शून्य तो सदैव खतरनाक होता ही है पर यहां तो ऊपर-नीचे शून्य ही शून्य है। इंडिया गठबंधन की चोटी से लेकर प्रांत स्तर पर, समाज स्तर पर तेजस्वी और खरे नेतृत्व का नितान्त अभाव है। यह सोच का दिवालियापन ही है कि दिखते हुए भ्रष्टाचार के बावजूद उसका विरोध नहीं करके, ऐसे भ्रष्टाचारियों को बचाने के लिये लोकतंत्र बचाओ रैली का आयोजन हो रहे हैं। राजनीतिक भ्रष्टाचार एक कड़वी सच्चाई है, लेकिन वह भी उतना सच है कि इस मामले में कोई भी दल दूध का धुला नहीं है। राजनीति के हमाम में सब नंगे हैं। विपक्षी दल कुछ भी दावा करें, सच्चाई यह है कि राजनीतिक भ्रष्टाचार की समस्या का समाधान उनके पास भी नहीं है। राजनीति में काले धन का इस्तेमाल होता रहा है और कोई भी यह दावे के साथ कहने की स्थिति में नहीं कि भविष्य में ऐसा नहीं होगा। जो विपक्षी नेता भ्रष्टाचार के आरोप में केंद्रीय एजेंसियों की जांच का सामना कर रहे हैं अथवा उन्हें जेल जाना पड़ा है, उनके बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने कहीं कुछ गलत नहीं किया। प्रधानमंत्री ने मेरठ में चुनावी महासंग्राम की शुरुआत करते हुए कहा कि अगर विपक्षी नेता पाक-साफ़ हैं तो सुप्रीम कोर्ट उन्हें छोड़ क्यों नहीं रहा है? कुछ तो गड़बड़ होगी ही। कुल मिलाकर बयानों का तीखापन यहाँ- वहाँ आने लगा है। लोकसभा चुनाव के प्रचार में धार आ गई है। यह धार दिन ब दिन और पैनी होती जाएगी। भारत के केनवास पर शांति, प्रेम, ईमानदारी, विकास और सह-अस्तित्व के रंगों की जरूरत है, पर आज इंडिया गठबंधन इन रंगों को भरने की पात्रता खोकर नायकविहीन है। रंगमंच पर नायक अभिनय करता है, राजनीतिक मंच पर नायक के चरित्र को जीना पड़ता है, कथनी-करनी में समानता, दृढ़ मनोबल, इच्छा शक्ति और संयमशीलता के साथ। लेकिन भारतीय लोकतंत्र की यह एक बड़ी विडम्बना है कि यहां विपक्षी दलों में नायक कम, खलनायक अधिक है। तभी एक मोदी अठाइस दलों के नेताओं पर भारी पड़ रहा है। देखना यह है कि विपक्षी दलों ने राजनीतिक भ्रष्टाचार का मामला उठाकर मोदी सरकार को घेरने की जो कोशिश की, उससे देश की जनता कितनी प्रभावित होगी और इसकी आवश्यकता महसूस करेगी या नहीं कि इस गठबंधन को सत्ता में लाना आवश्यक है। विपक्षी दलों ने जो मुद्दे उठाये, वे प्रभाव पैदा नहीं कर पाये। चुनावी बांड का ही मुद्दा ले, इसमें संदेह नहीं कि चुनावी बांड से दिए जाने वाले चंदे का जो विवरण सामने आया है, उससे अनेक गंभीर सवाल खड़े हुए हैं, लेकिन इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि जिन कंपनियों का नाम लेकर यह कहा जा रहा है कि मोदी सरकार ने उन पर अनुचित दबाव डालकर चंदा हासिल किया, उनमें से अनेक ने विपक्षी दलों को भी अच्छा-खासा चंदा दिया है।

(लेखक, पत्रकार, स्तंभकार, ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट 25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-92)

बिकती है आत्मा, बेचने वाला चाहिए

– रामविलास जांगिड़

अंतर आत्मा की आवाज जाने कैसे, कौन, कब, कहां सुन ले कुछ कहा नहीं जाता। अंतर आत्मा की बात कौन नेता कब, कैसे अपने पक्ष में गुन ले कुछ कहा नहीं जाता। चुनाव काल में नेताओं की अंतर आत्मा जागती है। उनकी आत्मा एक पार्टी से दूसरी पार्टी की ओर भागती है। किसका दूध किसकी मलाई! चतुर सुजान मत कर ढिलाई! दल दलांतर दलातुर दलाभिमुखी भटकती आत्मा समझे कुर्सी हित में ही अपनी भलाई! इतने दिन अंतर आत्मा सोई पड़ी थी। बुद्धि खोई पड़ी थी। बेचारी जनता तो रोई पड़ी थी। जनता ने अंतर आत्मा को जगाने के लिए खूब उपाय किए।

सच्चाई के खूब वास्ते दिए। कुर्सी पर बैठकर सत्ता मद में आत्मा हरगिज न जागी। कुर्सी छिनने के डर से आत्मा इस पार्टी से निकलकर उस पार्टी की ओर भागी। पहले थे दागी, अब बन गए हैं रागी। भागती हुई अंतर आत्मा एक दूसरे पर झूठ के बम डालती है। विचारधारा को बड़े-बड़े कूड़ेदानों में डालती है। सत्ता में बने रहने के लिए आत्मा चाटुकार बन कुत्ते पालती है। इन दिनों बंगाली नेताओं की आत्मा भरपूर जाग रही है। सब जगह की आत्मा कुल-बुला रही है। जहां-जहां भी चुनाव की ऋतु आती है, बुरे-बुरों की आत्मा भी जाग जाती है। एक पार्टी में हाथ, दूसरी में टांग और तीसरी में सशरीर भाग जाती है। दल बदल रहे हैं। दल दल-दल हो रहे हैं। हर एक आस्तीन में नए नाग पल रहे हैं। नए दल का दुपट्टा ओढ़ने के लिए गले मचल रहे हैं।

शास्त्रों में कहा गया है कि आत्मा अजर अमर है। न इसे काटा जा सकता है और ना ही इसे बांटा जा सकता है। लेकिन आत्मा को बेचा-खरीदा जरूर जा सकता है। राजनीति की मंडी में आत्माएं बेची-खरीदी जाती है। मैं भी सोच रहा हूं कि मेरी आत्मा को बेच दूं। इधर अच्छा मोलभाव कर रहा हूं। जैसे ही कोई ढंग का रोकड़ा मिलेगा आत्मा को बेच डालूंगा। छोटे लोगों की छोटी आत्मा और छोटा मोल भाव! बड़े लोगों की बड़ी आत्मा और बड़ा-बड़ा भाव! बड़ी-बड़ी आत्माएं नीलाम होने के लिए सज-संवर चुकी है। मार्केट में उसने अपना मूल्य निर्धारित कर दिया है। इस कुर्सी से उस कुर्सी, उस पद से इस पद तक बिकती आत्माएं! सांप नाथ जी ने कहा की अंतरराष्ट्रीय नाग बचाओ रैली में आपको अपनी आत्मा बेचनी है, भाव बताइए! मैंने एक कचोरी चाय और 100 रुपए में अपनी आत्मा बेच दी। मेहनत मजदूरी और पेट पालने के लिए यह बुरा सौदा नहीं है। मैंने कचोरी खाई डकार ली। यह जो अभी अपान वायु चल रही है; बिकी आत्मा के बदले खाई कचोरी का ही पुण्य प्रताप है। इसीलिए सांप नाथ जी के बताए नारों की हुंकार भरी। रैली का रेला चल निकला। रेला बन गया मेला और फिर हो गया झमेला! बिकती है आत्मा, बेचने वाला चाहिए! तुन्नन-तुन्ना, झक झक जुन्ना! तुन्नन-तुन्ना, झक झक जुन्ना! अंतर आत्मा की असली आवाज यही होती है- 'हे अपार्थ! उठ! इस नीति, ज्ञान और विवेक के चक्कर में मत उलझ! अब मन में किसी तरह का कोई संशय मत पाल! उठ और मुझे बेच डाल! खरीददार बैठे हैं राजनीति की हर एक डाल! मंडरा रहे हैं आत्मा के दलाल!'

(उत्तम नगर, घूघरा, अजमेर)

कविता

पृथ्वी का बचा रहना कितना अहम

मैं चाहता हूं पृथ्वी
बची रहे
और बची रहे मिट्टी
आग
नदिया
चिड़िया
झरने
पहाड़
हरे हरे पेड़
रोटी
चावल
मक्का
बाजरा
समंदर
पुस्तकें
मनुष्य के लिए
जी बची रहे
पृथ्वी भी
मनुष्य के लिए
बचा रहे मनुष्य
मनुष्य के लिए
बची रहे
स्त्री की कोख
नन्हीं बच्चियों
के लिए जो
आने वाली
कई पीढ़ियों को
बचा सके
मनुष्य के लिए
पृथ्वी के लिए,
और बची रहे
मानवता
नन्ही बच्चियों
चिड़ियों
फूल पत्तियों
और कलियों
के लिए।

संजीव ठाकुर
(रायपुर छत्तीसगढ़)

भ्रष्टाचार और लोकतंत्र पर गगनभेदी नारे

– बाल मुकुन्द ओझा

1977 के लोकसभा चुनाव में लोकनायक जय प्रकाश नारायण ने लोकतंत्र और तानाशाही का नारा बुलंद कर देशवासियों से वोट मांगे थे। इसी भांति 2024 के चुनाव में भ्रष्टाचार और तानाशाही प्रमुख मुद्दा बनता जा रहा है। भारतीय राजनीति के लिहाज से 2024 का लोकसभा चुनाव काफी महत्वपूर्ण होने वाला है। इस चुनाव पर दुनियाभर की निगाहें टिकी है। देश में लोकसभा चुनाव का शंखनाद होने के साथ ही चुनाव प्रचार में तेजी देखने को मिल रही है। पक्ष और विपक्ष में घमासान छिड़ गया है। आरोपों की नई नई बानगी देखने को मिल रही है। देश में भ्रष्टाचार के आरोपों में ईडी की हिरासत में लिए अरविन्द केजरीवाल को लेकर अमेरिका और जर्मनी की गैर जरूरी टिप्पणियां भी देखने को मिल रही है। यह भी सुनने को मिल रहा है कि मोदी जीत गया तो यह देश का आखिरी चुनाव होगा। कांग्रेस के नेता आरोप लगा रहे है मोदी जीता तो रूस और चीन बन जायेगा भारत। मोदी कह रहे है भ्रष्टाचारियों को किसी स्थिति में नहीं छोड़ेंगे। इसी के साथ एक दूसरे के खिलाफ तीखे आरोप प्रत्यारोप शुरू हो गए है। सियासत के नए समीकरण बन रहे हैं और सभी सियासी दल अपने फायदे को देखकर एक दूसरे से गठबंधन कर अपनी ताकत बढ़ाने में जुटे हैं। भाजपा विरोधी दलों ने इंडिया गठबंधन के नाम से मोदी को चुनौती दी है। एनडीए अपने करिश्माई नेता नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में इस बार 400 पार के नारे के साथ आगे बढ़ रहा है। इंडि गठबंधन से अनेक नेता निकलकर एनडीए में शामिल हो गए हैं वहीँ इंडि गठबंधन में आपसी फूट चौक चौराहों पर देखने को मिल रही है। लोगों में मोदी की गारंटी का क्रेज देखने को मिल रहा है। दोनों पक्ष अपनी गारंटियां दे रहा है मगर लोग मोदी की गारंटी पर अधिक विश्वास कर रहे है। मोदी विरोधी दलों में पीएम के नाम पर कोई सर्व सम्मति नहीं बनी है। इंडिया गठबंधन के रचियता बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार फिर एनडीए के पाले में आ चुके है। बंगाल की मुख्यमंत्री ममता दीदी ने बंगाल में कांग्रेस को छिटक दिया है। यूपी में जयंत चौधरी अपनी पार्टी रालोद को इंडिया से निकालकर एनडीए में ले आये है। मायावती की बसपा अकेले चुनावी संघर्ष में कूद गई है, जिसका सीधा नुक्सान इंडिया गठबंधन को उठाना होगा। केरल में इंडिया के घटक आपस में ही टकरा रहे है।

लोकसभा चुनाव में विपक्ष में पूरी तरह एका नहीं होने के कारण आधे राज्यों में बहुकोणीय चुनावी संघर्ष की सम्भावना बलवती हो गई है। वर्तमान राजनीतिक हालातों को देखते हुए उत्तर प्रदेश, आंध्र, प बंगाल ,हरियाणा, उड़ीसा, पंजाब, तेलंगाना ,तमिलनाडु और केरल जैसे राज्यों में जहाँ लोकसभा की 200 से अधिक सीटें है बहुकोणीय मुकाबले के आसार है। वहीं गुजरात, मध्य प्रदेश, छतीसगढ़, कर्नाटक, महाराष्ट्र, उत्तराखंड, हिमाचल और राजस्थान में सीधा मुकाबला है। देश के सब से बड़े और 80 सीटों वाले राज्य उत्तर प्रदेश में भाजपा के खिलाफ समाजवादी पार्टी और कांग्रेस ने महा गठबंधन बना कर चुनौती दी है। इस महा गठबंधन में बसपा शामिल नहीं है। सीटों के हिसाब से देश के दूसरे सब से बड़े राज्य महाराष्ट्र में लोकसभा की 48 सीटें है। यहाँ एनडीए और इंडिया गठजोड़ का लगभग सीधा मुकाबला है। तीसरे और चौथे बड़े राज्य आंध्र प्रदेश और प बंगाल में भी विपक्ष महा गठबंधन बनाने में सफल नहीं हुआ है। आंध्र में कांग्रेस, वाईएसआर कांग्रेस और एनडीए ने अलग अलग राह पकड़ी है। इस राज्य में भी बहुकोणीय संघर्ष की सम्भावना है। चौथा बड़ा राज्य प बंगाल है जहाँ भी लोकसभा की 42 सीटें है। यहां ममता की पार्टी का कांग्रेस से गठजोड़ नहीं हुआ है। बंगाल में तृणमूल और भाजपा में सीधा मुकाबला है। यहाँ भी बहुकोणीय संघर्ष होने की सम्भावना है। इसके बाद तमिलनाडु में लोकसभा की 39 और कर्नाटक में 28 सीटें है। तमिलनाडु में द्रमुक शक्तिशाली पार्टी है। कर्नाटक में भाजपा और देवेगौड़ा की पार्टी ने मिलकर चुनाव लड़ने का फैसला किया है। यहाँ भाजपा और कांग्रेस में सीधा मुकाबला है। गुजरात, मध्य प्रदेश, छतीसगढ़, हिमाचल, उत्तराखंड और राजस्थान में भाजपा और कांग्रेस में सीधा मुकाबला है। पिछले चुनाव में गुजरात की सभी 26, हिमाचल की सभी चार, उत्तराखंड की पांचों और राजस्थान की सभी 25 सीटों सहित दिल्ली की सभी सातों सीटें भाजपा को मिली थी। वहीँ मध्य प्रदेश और छतीस गढ़ दोनों राज्यों की लगभग सभी सीटों पर भाजपा ने कब्जा कर लिया था। बिहार में 40 सीटें है। यहाँ एनडीए और इंडिया में सीधा मुकाबला है। पिछले चुनाव में एनडीए ने 39 सीटें जीत कर विरोधियों को धूल चटा दी थी। पूर्वोत्तर सहित देश के अन्य राज्यों यथा उड़ीसा, पंजाब, केरल, तेलंगाना आदि में कहीं सीधा तो कहीं बहुकोणीय मुकाबला है। पिछले दो लोक सभा चुनाव में भाजपा ने नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में 30 साल का रेकॉर्ड तोड़ते हुए अपने दम पर बहुमत हासिल कर लिया था। इस बार मोदी ने 400 पार का नारा दिया है।

(वरिष्ठ लेखक एवं पत्रकार, मॉडल टाउन, मालवीय नगर, जयपुर)

पर्यावरण के क्षेत्र में काम कर रहे विशेषज्ञों का कहना था कि प्रदूषण की वजह से लोगों की जिंदगी को भारी नुकसान पहुंच रहा है। लोग बीमार पड़ते हैं,इससे न सिर्फ उनका स्वास्थ्य खराब होता है,बल्कि उन्हें भारी आर्थिक नुकसान भी होता है। ऐसे में राजनीतिक दलों के साथ साथ सिविल सोसायटी की भी जिम्मेदारी बनती है कि 'पर्यावरण' को एक राजनीतिक मुद्दा बनाने के लिए जमीनी स्तर पर पर्यावरण संरक्षण और जलवायु परिवर्तन के साथ विकास के संतुलन के संदेश को लेकर जाये।

आम चुनाव - 'पर्यावरण' का मुद्दा कोई 'वोट बैंक' नहीं !

– कुमार सिद्धार्थ

साल 2024 में 'मतदाता' फिर केंद्र में आ गया है। देश में लोकसभा चुनाव की प्रक्रिया शुरू हो गई है। राजनीतिक दल अपने वादे, दावे और नये संकल्पों को बुनने में लगे है। राजनीतिक दलों के घोषणा पत्र भी सामने आने लगे है। लेकिन आजादी के 76 साल बीत जाने के बाद भी चुनावी समर में कोई नयापन दिखाई नहीं दे रहा है। भारतीय सामाजिक व राजनीतिक परिदृश्य में 'पर्यावरण' मुद्दा नहीं होता है, क्योंकि राजनीतिक तंत्र को इसमें 'वोट बैंक' नजर नहीं आता है। इस चुनाव में राजनीतिक दलों के तो वहीं मुद्दे होंगे, जिनसे उन्हें 'वोट' मिल सकें। जल, जंगल, जमीन, प्रदूषण जैसी समस्याओं से कोई सरोकार ही नहीं दिखता है। चुनावी वर्ष में यह सवाल फिर उभरने लगा है कि क्या चुनावी विमर्श और बहस में प्रकृति और पर्यावरण के मुद्दों को कोई स्थान मिल पाएगा? क्या पर्यावरण के मुद्दे 2024 के चुनाव अभियान का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होंगे? क्या पार्टियां जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए नई नीतियों को पेश करेंगी? अब तक के अनुभव बताते है कि वर्तमान परिस्थिति में बाजारवाद इतना हावी हो गया है कि पर्यावरण से जुड़े महत्वपूर्ण मुद्दे 'गौण' से हो गए हैं। कई बडे - छोटे राजनीतिक दलों ने पिछले चुनावों में अपने घोषणापत्रों में 'जलवायु परिवर्तन' को मुद्दा बनाया थी, इसमें टिकाऊ कृषि, पर्यावरण-पर्यटन और नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा देने जैसे मुद्दों पर ध्यान केंद्रित किया गया था । हम सब की चिंताओं में है कि दुनिया में जलवायु परिवर्तन का संकट लगातार गहराता जा रहा है और लोगों के जन-जीवन एवं आजीविका पर इसका बहुत ही मारक प्रभाव पड़ रहा है। आंकड़े देखें तो पता चलता हैं कि देश के 9 शहर प्रदूषण के मामले में दुनिया के शीर्ष 10 शहरों में शामिल हैं। वहीं विश्व के शीर्ष 50 प्रदूषित शहरों में से 43 शहर तो भारत के ही हैं। प्रदूषण की स्थिति को लेकर हम दुनिया में 9वें नंबर पर हैं। देश में बढ़ती आबादी के साथ तेजी से जल संकट बढ़ रहा है। कई बड़ी नदियां मौजूदा समय में अबतक के सबसे खराब हालात से गुजर रही हैं। देश भर के प्रमुख शहरों और नदियों में प्रदूषण की बड़ी चिंताएं बनी हुई हैं। पानी की कमी जलवायु परिवर्तन की मार झेल रहा है। दूसरी ओर विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट बताती है कि अकेले प्रदूषण से भारत में हर साल लगभग 15 लाख लोगों की मौतें होती हैं। अकेले दिल्ली के 50 फीसदी बच्चों के फेफड़े प्रदूषण के कारण प्रभावित हो रहे हैं जिससे न सिर्फ उनकी पढ़ने-लिखने की क्षमता प्रभावित हो रही है, बल्कि वे खतरनाक बीमारियों के शिकार भी हो रहे हैं। ऐसे तमात आंकड़े डराते हैं। आखिर हम किस प्रकार के 'विकास' की दिशा में बढ़ रहे हैं? यह भी सही है कि प्रकृति और पर्यावरण के प्रति उदासीनता के लिए राजनीतिक दलों के साथ आम जन भी बराबर के भागीदार प्रतीत होते है। सच यह है कि समाज भी आज प्रकृति और पर्यावरण के मुद्दों से परे हटकर अन्य मुद्दों को ज्यादा महत्वपूर्ण मानता है। इसीलिए राजनैतिक दलों के घोषणापत्रों में पर्यावरण के मुद्दों को तवज्जो नहीं दी जाती है। जब तक आम जनता प्रदूषण, जंगल, बांध, विस्थापन आदि के प्रति जागरूक नहीं होगी, तब तक पर्यावरण के मुद्दे चुनावी मुद्दे नहीं बन सकते। इसी संदर्भ में लोकसभा चुनाव 2024 से पहले कई राज्यों की सैकड़ों पर्यावरण संस्थाओं ने घोषणा पत्र बनाकर मांग पत्र (डिमांड चार्टर) जारी किया है। ताकि, हिमालय के पारिस्थिकी (इकोलॉजी) को बचाया जा सके। इसके लिए पीपल फॉर हिमालय अभियान शुरू किया गया है, जिसके तहत आपदा मुक्त हिमालय की दिशा में मांग पत्र जारी किया गया है।

हाल ही में लद्दाख में सोनम वांगचुक के 21 दिन की भूख हड़ताल ने पूरे देशभर के पर्यावरणविदों और पर्यावरण से जुड़ी समाज सेवी संस्थाओं का ध्यान खींचा है। उत्तराखंड में भी लगातार लंबे समय से जोशीमठ बचाओ संघर्ष समिति और यूथ फॉर हिमालय इस तरह के अभियान चलाते आ रहे हैं तो वहीं, अब अलग-अलग हिमालय राज्यों में एक तरह की समस्याओं का सामना कर रहे सभी लोग एकजुट होकर अपनी आवाज मजबूत कर रहे हैं। यह सभी संस्थाएं 'पीपल फॉर हिमालय अभियान' के तहत अपनी मांगों को लोकसभा चुनाव से पहले सभी राजनीतिक दलों के सामने रख रहे हैं। यह सही है कि अब पर्यावरण के प्रति सजग होना समय की मांग है। जनता के बीच से गिने-चुने लोग ही पर्यावरण की बात उठाते हैं। सत्ता की धुंध ने आमजनों के मस्तिष्क को इतना प्रदूषित कर दिया है कि लोगों को अब वास्तविक बिगड़ते पर्यावरण के पहलु नजर ही नहीं आ रहे है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जल, जंगल, जमीन ही जीवन का आधार हैं। कहीं-कहीं चुनावों में राजनीतिक दल अपने घोषणा पत्रों में पर्यावरण संरक्षण को शामिल तो करते हैं, लेकिन कोई चुनाव ऐसा नहीं रहा, जब पर्यावरण के मुद्दे पर वोट मांगे गए हों। असल में पर्यावरण से जुड़े तीन सबसे अहम बिंदु हवा, मिट्टी व पानी प्रकृति की देन हैं। इनकी बिगड़ती सेहत को लेकर मुट्ठीभर लोग आवाज तो उठाते हैं, आंदोलन करते है, लेकिन जनता की आवाज आज भी चुनावी मुद्दे का रूप नहीं ले पाती है। वर्तमान में हम सभी पर्यावरणीय संकट का सामना कर रहे हैं। कभी भी हमारी हवा और पानी इतने खराब नहीं हुए, जितने आज हैं। पर्यावरण के क्षेत्र में काम कर रहे विशेषज्ञों का कहना था कि प्रदूषण की वजह से लोगों की जिंदगी को भारी नुकसान पहुंच रहा है। लोग बीमार पड़ते हैं, इससे न सिर्फ उनका स्वास्थ्य खराब होता है, बल्कि उन्हें भारी आर्थिक नुकसान भी होता है। ऐसे में राजनीतिक दलों के साथ साथ सिविल सोसायटी की भी जिम्मेदारी बनती है कि 'पर्यावरण' को एक राजनीतिक मुद्दा बनाने के लिए जमीनी स्तर पर पर्यावरण संरक्षण और जलवायु परिवर्तन के साथ विकास के संतुलन के संदेश को लेकर जाये। लोगों को अब स्वच्छ

सांसों के लिए प्रदूषण के खिलाफ जागरूक होना होगा। देश में राजनीतिक नेतृत्व को न केवल अपने घोषणापत्रों और कार्यों में सामान्य उपायों को मजबूत करने की जरूरत है, बल्कि लोगों के सामने आ रही दुशवारियों को भी को कम करने के लिए जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन और लचीलेपन पर भी निर्माण लेने की जरूरत है। शुद्ध हवा, पानी व भोजन की जरूरत इस समय हर किसी की जरूरत है। सभी राजनीतिक पार्टियों को मुफ्त सुविधाएं देने के बजाय पर्यावरण जैसे संवेदनशील मुद्दे पर गंभीर होना चाहिए। आमजन को चाहिए कि राजनीतिक दलों की पहल का इंतजार न कर स्थानीय स्तर पर पर्यावरण से जुडे पहलुओं को चुनावी मुद्दा बनाया जाए, तभी सभी में पर्यावरण संरक्षण के प्रति नई ऊर्जा का संचार होगा।

(इंदौर, मध्यप्रदेश)

https://t.me/AllNewsPaperPaid

राष्ट्रीय सहारा
नई दिल्ली ● बुधवार ● 3 अप्रैल ● 2024
www.rashtriyasahara.com

चुनाव में कच्चातिवु

दक्षिण भारत के तमिलनाडु में अपना राजनीतिक जनाधार बढ़ाने के लिए भारतीय जनता पार्टी और प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने कच्चातिवु द्वीप को बड़ा चुनावी मुद्दा बना दिया है। 1974 और 1976 में तबकी भारतीय प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी और श्रीलंका की राष्ट्रपति सिरिमाओ भंडारनायके के बीच समुद्री सीमा पर समझौते हुए थे जिसके तहत भारत ने यह द्वीप श्रीलंका को सौंप दिया था। कच्चातिवु दोनों देशों के बीच 258 एकड़ क्षेत्र में फैला हुआ एक निर्जन द्वीप है। इस समझौते के पहले भारतीय मछुआरे भी इस द्वीप का इस्तेमाल किया करते थे। प्रधानमंत्री मोदी ने राज्य में सत्तारूढ़ द्रमुक पर आरोप लगाया है कि समझौते के समय द्रमुक नेता एम. करुणानिधि राज्य के मुख्यमंत्री थे और उन्होंने इस समझौते का समर्थन किया था। कच्चातिवु का मुद्दा नया नहीं है। राजनीतिक पार्टियां समय-समय पर इस मुद्दे को उठाती रहती हैं। भाजपा का प्रादेशिक नेतृत्व इस द्वीप को भारत में वापस लाने की जब बात करती है तो यह काफी संवेदनशील मुद्दा बन जाता है। हालांकि इसमें संबंधित मामला सर्वोच्च न्यायालय में विचाराधीन है। 2023 में जब केंद्र में यूपीए की सरकार थी तब कांग्रेस ने साफ तौर पर कहा था कि यह द्वीप श्रीलंका को सौंप दिया गया है, इसलिए इसे वापस लेने की बात पर विचार ही नहीं किया जा सकता है। वस्तुतः भारतीय मछुआरे मछली पकड़ने के दौरान इस द्वीप में पहुंच जाते हैं परिणामस्वरूप श्रीलंका के नौसैनिक इन्हें गिरफ्तार कर लेते हैं। विदेश मंत्री एस. जयशंकर ने कहा है कि पिछले 20 वर्षों में 6,185 मछुआरों को कच्चातिवु के पास मछली पकड़ने के आरोप में हिरासत में लिया गया है। इसी तरह 1175 नौकाएं जब्त की गई हैं। जाहिर है इंदिरा गांधी के समय हुए इस समझौते में भारतीय मछुआरों के हितों को नुकसान पहुंचा है। भाजपा का मानना है कि कच्चातिवु द्वीप को श्रीलंका को सौंप कर कांग्रेस और द्रमुक दोनों ने देश के राष्ट्रीय हितों को ठेस पहुंचाया है। लेकिन अहम सवाल यह है कि क्या चुनावी फायदे के लिए इस तरह के विवादास्पद मुद्दे उछालना स्वस्थ लोकतंत्र के प्रतिमान हो सकते हैं। हालांकि देश की चुनावी राजनीति में जितनी गिरावट आती जा रही है उसमें इसी तरह की नकारात्मक प्रवृत्तियों को ही उभरने के अवसर मिलेंगे। फिर भी अतीत के ऐसे मुद्दों का राजनीतिकरण करने से बचने की कोशिश की जानी चाहिए जिससे पड़ोसी देशों के साथ रिश्ते प्रभावित होने की आशंकाएं रहती हैं।

सामने से सरकार

अरविंद केजरीवाल दिल्ली के मुख्यमंत्री रहते हुए भ्रष्टाचार के मामले में जेल में हैं। वे देश के ऐसे पहले मुख्यमंत्री हैं, जिनकी पद पर रहते गिरफ्तारी हुई और फिर जेल। वे चाहते तो इस्तीफा देकर एक नैतिक उदाहरण पेश कर सकते थे। झारखंड के मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन इसके हालिया नजीर हैं। लेकिन 'अभियानी' केजरीवाल जेल से ही सरकार चलाने की बात कर रहे थे। अभी 'इंडिया' की रैली में भी उनकी पार्टी आप के नेतागण यही दोहरा रहे थे। खुद मुख्यमंत्री की पत्नी सुनीता केजरीवाल भी उनके इस्तीफा नहीं देने पर जनता से अनुमोदन ले रही थी। जेल से सरकार चलाने पर रोक का कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं है। पर इसमें आड़े आने वाली व्यावहारिक कठिनाइयां और प्रशासनिक नियम-कायदे, जिनमें जेल मैन्युल भी शामिल हैं, वे इतने शिकस्त हैं कि जेल से शासन संभव ही नहीं है। एक मुख्यमंत्री के रूप में उन्हें केंद्र सरकार और उपराज्यपाल के बीच कड़ी के रूप में काम करना होता है। सार्वजनिक मसलों पर मंत्रिमंडल के सहयोगियों से राय-विचार करने की जरूरत होती है। फाइलों पर दस्तखत के पहले या इसके दौरान कई बार फोन से काम नहीं चलता है, उपराज्यपाल एवं सचिवों के साथ कई बार बैठक करनी पड़ती है। और एक विचाराधीन कैदी के रूप में केजरीवाल के कानूनी अधिकार बस अपनी न्यायिक पैरवी के कागजात पर दस्तखत ही सीमित हैं। उपराज्यपाल की अनुमति के बिना फाइलें भी जेल में नहीं जा सकती हैं। यह अनुमति न तो उन्हें मिल सकती है और न ही दी जानी चाहिए। इससे एक गलत नजीर बनेगी। ऐसे हालात में उपराज्यपाल दिल्ली में संवैधानिक संकट को आधार बनाते हुए सरकार बर्खास्त करने की सिफारिश कर सकते हैं। राष्ट्रपति शासन भी लगाया जा सकता है। इसको टालने के लिए मुख्यमंत्री के पास विकल्प बहुत सीमित है-इस्तीफा देकर पत्नी को राजनीतिक उत्तराधिकारी घोषित करना। मंगलवार को आप विधायकों का सुनीता से मुलाकात के यही मायने हैं। यह उनके नेतृत्व को स्वीकार्य बनाना है। ऐसा हुआ तो यह बिहार का दोहराव होगा, जिसमें तत्कालीन सीएम लालू प्रसाद ने पत्नी राबड़ी देवी को राज्य की कमान थमा कर अंदर चले गए थे। सत्ता का वैसा ही वंशवादी मॉडल दिल्ली में भी बनेगा। यह राजनीतिक विडम्बना है कि जन आंदोलनों से बनी पार्टियां और नेता संकट में कौटुम्बिक नेतृत्व पर ही भरोसा करते हैं, जबकि वे वंशवाद के विरोध में आए होते हैं।

मिलावटखोरी/गीता यादव

इस दौर में बस दर्द खालिस है

'खाली डब्बा, खाली बोतल ले ले मेरे यार/खाली से मत नफरत करना, खाली सब संसार/ खाली की गारंटी दूंगा, भरे हुए की क्या गारंटी शहद में गुड़ के मेल का डर है/घी के अंदर तेल का डर है/मक्खन में चर्बी की मिलावट, केसर में कागज की खिलावट।'

यह गीत 1968 में आई फिल्म 'नील कमल' का है। इसे अभिनेता महमूद पर फिल्माया गया था। मिलावट पर केंद्रित, यह गीत इस बात की तस्दीक करता है कि खाद्य पदार्थों में मिलावट का खेल बरसों पुराना है। जनसंख्या, विज्ञान और व्यापारिक गतिविधियों में वृद्धि के साथ जैसे-जैसे वस्तुओं की मांग बढ़ी, वैसे-वैसे मिलावट में भी वृद्धि हुई है। नकली-सस्ती चीजों को मिलाकर बेचने वाले मुनाफा भी अधिक कमाते हैं। एफएसएसएआई की रिपोर्ट से ये साफ हो चुका है कि भारत में 13 फीसद खाना गुणवत्ता के मानक स्तर से नीचे है। आज मिलावट का स्वरूप बदल चुका है। कोई भी खाद्य पदार्थ, इससे अछूता नहीं है। आईआईटी बॉम्बे की एक रिसर्च रिपोर्ट के अनुसार, अब नमक भी सुरक्षित नहीं रहा। बड़ी-बड़ी कंपनियां नमक में प्लास्टिक मिलाती हैं। खाद्य पदार्थ फल, सब्जी, औषधि, पदार्थ, चॉकलेट आइसक्रीम, सौंदर्य प्रसाधन आदि में घातक कृत्रिम रसायन और कीटनाशक मिले हैं। नवजात शिशु दूध भी शुद्ध पी रहा है, इसकी कोई गारंटी नहीं है। हाल ही में दिल्ली पुलिस ने कैंसर की नकली दवा बनाने वाले गैंग का भंडाफोड़ किया है। पकड़े गए आरोपी अस्पताल से खाली शीशियां लेते थे, फिर उनमें नकली दवाई भर उसे बेच देते थे। आम आदमी मिलावट से पूरी तरह तो नहीं बच सकता, लेकिन थोड़ी जागरूकता और सावधानी से इससे बचा जा सकता है। अफसोस मिलावट रोकने के लिए प्रभावी कानून भी बनाए गए हैं, लेकिन मिलावट जैसा जघन्य कृत्य केवल कानूनों से नहीं थम सकता। इस पर प्रभावी रोक के लिए निर्माताओं, खुदरा व्यापारियों, सरकार और उपभोक्ताओं को सामने आना होगा। ध्यान रहे, मिलावट करने वाले या ऐसा सामान बेचने वालों के विरुद्ध हत्या के प्रयास जैसी धाराओं के तहत कार्रवाई होनी जरूरी है, तभी मिलावटखोरों पर नकेल कसी जा सकेगी।

साफ होती तस्वीर

लोक सभा चुनाव

अवधेश कुमार

लोक सभा के चुनावी परिदृश्य का मोटा-मोटी आकलन करें तो राष्ट्रीय स्तर पर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन यानी राजग या एनडीए और दूसरी ओर आईएनडीआईए है। हालांकि राजग और आईएनडीआईए के बीच गुणात्मक अंतर है। कुछ राज्यों को छोड़ दें तो राजग का राष्ट्रीय स्तर पर विस्तार है, एक बड़ी पार्टी भाजपा इसका केंद्रक है, वह संगठित है तथा उसका एक घोषित नेता है। दूसरी ओर आईएनडीआईए का राष्ट्रीय स्तर पर कोई स्वरूप है ही नहीं, न कोई नेता और न कोई एक ढांचा। अलग-अलग राज्यों में इसका स्वरूप भी अलग है।

चुनावी दृष्टि से राजग की विशेषता यह है कि इसमें आईएनडीआईए के दल स्वयं आए हैं या इससे बाहर के दलों ने भी भाजपा से हाथ मिलाने की स्वयं पहल की है। उदाहरण के लिए नीतीश कुमार स्वयं आए, राष्ट्रीय लोक दल तथा महाराष्ट्र में राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी का अजीत पवार धारा इंडिया छोड़कर आया। आंध्र प्रदेश में चंद्रबाबू नायडू ने स्वयं भाजपा के साथ गठबंधन की पहल की। इसके विपरीत आईएनडीआईए को पहले तो पार्टियों और नेताओं को साथ लाने के लिए कड़ी मेहनत करनी पड़ी और बाद में उसे छोड़कर जाने की प्रवृत्ति दिखी। आज की स्थिति में आईएनडीआईए बिहार, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश तथा दिल्ली में दिखाई देता है। इसमें भी बिहार, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश को आप संपूर्ण इंडिया नहीं कह सकते।

वास्तव में दोनों पक्षों की इस स्थिति से हम इसका अनुमान लगा सकते हैं कि 4 जून को आने वाले परिणामों कैसा होगा। वास्तव में लोक सभा चुनाव में दलों या गठबंधनों की कुल अंकगणितीय ताकत संपूर्ण देश का वातावरण, सत्तारूढ़ पार्टी या गठजोड़ तथा विरोधियों द्वारा उठाए गए मुद्दे, चुनाव के पूर्व के कुछ महीनों की मतदाताओं को प्रभावित करने वाली घटनाएं और नेतृत्व का चेहरा ही मूलतः मतदाताओं के मतों के निर्धारण में मुख्य कारक की भूमिका निभाते हैं। किसी दल या दलों के गठबंधन के पक्ष और विपक्ष में सामाजिक समीकरणों के निर्धारण के मुख्य रसायन रहे हैं। 2019 के लोक सभा चुनाव में भाजपा ने 37.36 प्रतिशत मत प्राप्त किया था और राजग को कुल मिलाकर 45 प्रतिशत मत प्राप्त हुए थे। वर्तमान गठबंधन का निश्चित आंकड़ा निकलना कठिन है, क्योंकि शिवसेना, राकांपा टूट चुकी है तथा कई दल ऐसे हैं, जिन्होंने पिछली बार लोक सभा चुनाव में हिस्सा नहीं लिया था। बावजूद यदि हम पिछले चुनाव के आंकड़े एवं उनके साथ वर्तमान सांसदों विधायकों को मिलाकर देखें तो राजग का मत 50 प्रतिशत से ऊपर चला जाता है। दूसरी ओर

आईएनडीआईए का आंकड़ा निकालना ज्यादा कठिन है। उदाहरण के लिए अगर वाममोर्चा बंगाल में कांग्रेस से गठबंधन करता है और केरल में लड़ता है तो उनके मतों को कैसे जोड़ा जाए। आप अत्यधिक उदार होकर भी वर्तमान स्थितियों के आधार पर गणना करें तो यह कुल मिलाकर 30-31 प्रतिशत से ऊपर नहीं जाता।

दोनों गठजोड़ की शुरुआत ही इतने अंतर से हो रही है। इतना बड़ा अंतर तभी पट सकता है जब केंद्रीय सत्ता के विरुद्ध जनता में व्यापक आक्रोश और उसे उखाड़ फेंकने की प्रबल भावना हो। हालांकि भारत के चुनावी इतिहास में इस तरह के परिणाम के उदाहरण नहीं है। दोनों गठबंधनों की स्थितियों से आम मतदाताओं के बीच वातावरण यही बना है कि जब आपस में उनके बीच सभी जगह एकता ही नहीं तो आईएनडीआईए वाले कभी भी राजग का मुकाबला नहीं कर सकते। भाजपा के धुर विरोधियों को छोड़ दें तो आपको जनता के बीच आम प्रतिक्रिया यही मिलेगी। हां, कुछ राज्यों की स्थिति थोड़ी अलग है। जैसे तमिलनाडु में भाजपा द्रमुक नेतृत्व वाले गठजोड़ की तुलना में संपूर्ण राज्य में व्यापक जनाधार बल्कि पार्टी नहीं बनी है तो वहां दूसरे राज्यों की तरह मतदाताओं के वोट उसे उसे रूप में नहीं मिलेंगे। किंतु आमजन का मनोविज्ञान वहां भी यही है और इससे मतदान प्रभावित होगा। तृणमूल के यह कहने से कि चुनाव पूर्व गठजोड़ नहीं होने का अर्थ नहीं कि परिणाम के बाद आईएनडीआईए एकजुट नहीं रहेगा गैर प्रतिबद्ध मतदाता अपना मन नहीं बदल सकते। वर्तमान चुनाव में मुख्य मुद्दे क्या हैं? प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व वाली सरकार ने अपने मंत्रीपरिषद की अंतिम बैठक में 2047 का दृष्टिकोण पत्र प्रस्तुत किया है, अगले 5 वर्षों की कार्ययोजना दी है तथा सरकार में लौटने पर 100 दिनों में क्या करना है यह भी अधिकारियों और मंत्रियों को जिम्मेवारी देकर देश के सामने रख दिया है। विपक्ष इसे चुनावी लाभ लेने की कवायद बताता है और चुनाव पूर्व की इस बैठक के राजनीतिक मकसद होंगे। बावजूद इससे दो संदेश निकला।

पहला, प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में भाजपा और राजग लोक सभा चुनाव में विजय को लेकर आश्वस्त है, इसलिए सोच और व्यवहार उसी दृष्टि से है। दूसरे, संदेश यही गया है कि हम देश को 2047 तक विकसित बनाने के लिए संकल्पबद्ध हैं तथा चुनाव में रहते हुए भी लगातार उस लक्ष्य पर काम कर रहे हैं। इससे भी मतदाताओं का मनोविज्ञान घनीभूत हुआ होगा। आम लोगों तक सरकार की योजनाएं पहुंची हैं। उन्हें महसूस हुआ है कि पूर्व में सामाजिक न्याय और पिछड़ों-दलितों का नारा लगाने वाली सरकारों से नरेन्द्र मोदी सरकार उनके लिए कितनी अनुकूल साबित हुई है।

प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में भाजपा और राजग लोक सभा चुनाव में विजय को लेकर आश्वस्त है, इसलिए सोच और व्यवहार उसी दृष्टि से है। दूसरे, संदेश यही गया है कि हम देश को 2047 तक विकसित बनाने के लिए संकल्पबद्ध हैं तथा चुनाव में रहते हुए भी लगातार उस लक्ष्य पर काम कर रहे हैं। इससे भी मतदाताओं का मनोविज्ञान घनीभूत हुआ होगा। आम लोगों तक सरकार की योजनाएं पहुंची हैं। उन्हें महसूस हुआ है कि पूर्व में सामाजिक न्याय और पिछड़ों-दलितों का नारा लगाने वाली सरकारों से नरेन्द्र मोदी सरकार उनके लिए कितनी अनुकूल साबित हुई है

https://t.me/AINewsPaper

सीए में महिलाएं तेजी से बुलंद कर रहीं झंडा

- अघोषित रूप से पुरुषों के लिए 'आरक्षित' माने जाने वाले चार्टर्डअकाउंटेंसी (सीए) के क्षेत्र में भी लड़कियां तेजी से अपना झंडा बुलंद कर रही हैं
- वर्ष 2000 तक महिला सीए की संख्या महज 8 प्रतिशत हुआ करती थी, जो 2023 में 30 प्रतिशत हो गई
- अच्छा पैकेज ऐसा आकर्षण है जो लड़कियों को देश की सबसे कठिन परीक्षाओं में शुमार सीए की प्रवेश परीक्षा की ओर खींच रहा है

(स्रोत : मीडिया इनपुट्स)

अगर पड़ोसी के घर का नाम बदल देने से वह घर आपका हो सकता है तो क्या पड़ोसी देश का नाम बदल देने से वह हमारा हो सकता है?

अखिलेश शर्मा, पत्रकार
@akhileshsharma1

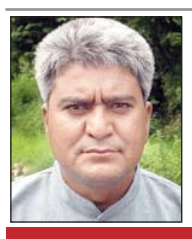

पर्यावरण और पहचान के लिए संघर्ष

लद्दाख | सुरेश भाई

दिल्ली से 1225 किलोमीटर दूर स्थित लद्दाख को जब 4 वर्ष पूर्व जम्मू-कश्मीर से अलग करके केंद्र शासित प्रदेश घोषित किया गया था। तभी से लोगों की मांग यहां की संस्कृति, पहचान और पर्यावरण बचाने की है। यहां के जाने-माने इनोवेटर, शिक्षा सुधारक, पर्यावरणविद्, मैग्सेसे पुरस्कार विजेता सोनम वांगचुक 6 से 26 मार्च के बीच 21 दिन तक भूख हड़ताल पर बैठे रहे। और वे स्थानीय जनआकांक्षाओं के अनुरूप मांग कर रहे हैं कि लद्दाख को पूर्ण राज्य का दर्जा मिले और संविधान की छठवीं अनुसूची के अनुसार यहां के 97 फीसद जनजातीय समाज को अधिकार मिले। इस विषय पर सितम्बर 2019 में छठी अनुसूची में शामिल करने के लिए केंद्र सरकार को सिफारिशें भी प्रस्तुत की गई थी।

लद्दाख की राजधानी लेह में भूख हड़ताल पर बैठे रहे हजारों लोगों ने खुले आसमान के नीचे रात-दिन गुजारे हैं, जबकि आजकल यहां का तापमान 0- 8 डिग्री सेंटीग्रेड तक रहता है। सोनम वांगचुंग ने अपने उपवास का नाम 'पर्यावरण उपवास' दिया है, जिसको अब आगे वहां की महिलाएं संभालेगी। और वह तब तक लगातार स्थानीय लोगों की पर्यावरण और पहचान की मांग को उठाती रहेंगी जब तक उनकी सुनी नहीं जाती है। इस शीत और बर्फ के बीच में उनका शरीर बहुत कमजोर हो गया। इस स्थिति में भी उन्होंने वीडियो और अन्य माध्यमों से देश के लोगों तक अपनी मांगों को पहुंचाते रहे। केंद्र शासित प्रदेश लद्दाख को छठी अनुसूची के तहत राज्य का दर्जा और संवैधानिक सुरक्षा उपायों की तरफ सरकार का ध्यान आकर्षित कर रहे हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 244 के अंतर्गत छठी अनुसूची में प्रशासनिक विभागों मे स्वतंत्र जिला परिषदों के गठन का प्रावधान करती है। जिसमें राज्य के भीतर कुछ विधायी, न्यायिक और प्रशासनिक स्वतंत्रता होती है। वहीं जिला परिषदों में कुल 30 सदस्य होते हैं और चार सदस्यों को राज्यपाल नियुक्त करता है, जबकि छठी अनुसूची के मुताबिक जिला परिषद की अनुमति से ही क्षेत्र में उद्योग लगाए जा सकते हैं। इसलिए लोग कह रहे हैं कि जम्मू कश्मीर में विधानसभा बन जाएगी, लेकिन लद्दाख में कोई परिषद नहीं होगी। यही वजह है कि वांगचुक छठी अनुसूची के तहत राज्य को दर्जा दिलाना चाहते हैं और अनुच्छेद 244 की छठी अनुसूची लद्दाख जैसे जनजातीय क्षेत्र के लोगों के साथ उनकी संस्कृति को सुरक्षा प्रदान करती है। साथ ही यह

निर्धारित करता है कि इन स्थानों पर लोगों की सहभागिता को लेकर दूसरों के हस्तक्षेप के बिना यहां मिजोरम, मणिपुर, नागालैंड, मेघालय जैसे राज्यों के अनुसार यहां की भी व्यवस्था चल सकती है। यहां से मुखर आवाज निकल रही है कि अगर लद्दाख के नाजुक इकोसिस्टम में खनन और उद्योगों को अनुमति दी गई तो कुछ ही समय में ग्लेशियर सूख जाएंगे। इस संबंध में वांगचुक ने चेतावनी दी है कि बढ़ती इंसानी गतिविधियों से यहां के पिघलते ग्लेशियरों का असर दो अरब लोगों पर पड़ेगा। क्योंकि लद्दाख और आसपास के हिमालय के ग्लेशियर ग्रह का तीसरा ध्रुव है। ताजा पानी का यह सबसे बड़ा भंडार है। वैज्ञानिक भी मानते हैं कि यहां पहुंचने वाली अंधाधुंध गाड़ियों से निकलने वाला काला धुआं सफेद चमचमाती बर्फ पर बैठ जाता है। यदि यह निरंतर जारी रहता है तो जलवायु शरणार्थी बन जाएंगे। जिसके प्रभाव से पूरे उत्तर भारत में सर्दियों से लेकर बसंत तक पानी के भंडार को सुखा देंगे। भूख हड़ताल के समर्थन में बैठे रहे हजारों लोगों ने यह भी मांग की है कि लोक सभा के साथ राज्य सभा की एक सीट भी यहां के जनजातीय समाज के हित में मिलनी चाहिए। स्थानीय स्तर पर कारगिल डेमोक्रेटिक एलायंस ने भी इस मांग को समर्थन दिया है।

ध्यान रहे कि सन 1986 में वांगचुक के पिता ने भी अनशन किया था जो लद्दाख के आदिवासियों के अधिकारों के बारे में था। उस समय अनशन के 16वें दिन तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी दिल्ली से उड़ान भरकर जूस के गिलास के साथ वहां पहुंची थी और अनशन तुड़वाकर उनकी मांग को पूरा किया था। अभी उनकी अपेक्षा प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी से हैं। वांगचुक कहते हैं कि जब 2011 में इंडिया अगेंस्ट करप्शन के आंदोलन में अन्ना हजारे के अनशन के 13वें दिन बाद पार्लियामेंट में लोकपाल बिल पास किया गया था तो लद्दाख की समस्याएं तो मौजूद प्रधानमंत्री और गृहमंत्री जी के संज्ञान में है। और इसके लिए उन्होंने आश्वासन भी दिया है। काबिलेगौर है कि वांगचुक ने 2021 में इंडियन आर्मी के लिए सोलर हीटर टैंक बनवाए थे जिसमें लद्दाख में रहने वाले जवानों को एक आरामदायक जगह मिल सकी है। इसके साथ ही उन्होंने कार्बन न्यूट्रल सोलर बिल्डिंग को डिजाइन करने में अहम भूमिका निभाई है। ग्लेशियर के पास रहने वाले नौजवानों की जलापूर्ति के लिए उन्होंने तकनीकी ईजाद की है। और यह वही व्यक्ति हैं जिनसे प्रेरित होकर मुख्य किरदार फुंगसुक वांगडू वाली 3 इडियट मूवी बनाई थी। आज वह लद्दाख के मुद्दे पर अनशन पर बैठे हुए हैं। जो पूरी तरह से वहां के संवेदनशील पर्यावरण को बचाने के साथ वहां के निवासियों के अधिकार के लिए संवैधानिक उपाय की मांग पर आधारित है। हर रोज हजारों लोग वहां उपस्थित हैं, जो लोक सभा चुनाव के चलते अधिकारों की मांग कर रहे हैं।

मन | सद्गुरु

अगर सारे मनुष्य जानते होते कि मन का उपयोग कैसे करें, तो वे अपने आंतरिक जीवन के अकेले शिल्पकार बनने के काबिल थे। समस्या बस इतनी है कि उनका मन उनसे निर्देश नहीं ले रहा है। कल्पना कीजिए कि गुफा में रहने वाला आदमी कम्प्यूटर के कीबोर्ड को दबा रहा है : उसका नतीजा एक निरर्थक क्रम जैसा दिखेगा! यह संक्षेप में बताता है कि अधिकतर लोग किस तरह अपने मन का उपयोग कर रहे हैं। एक ज्ञान योगी अपनी बुद्धि के इस्तेमाल से शुरुआत करता है, लेकिन जल्दी ही उसे इस साधन की सीमाओं एहसास हो जाता है। बुद्धि का काम मुख्य रूप से इंद्रियों के जरिए बाहरी दुनिया से इकट्ठी की गई जानकारी को रिसाइकिल करना है। संक्षेप में, बुद्धि शुद्ध इन्फॉर्मेशन टेक्नॉलजी है। यह एक शानदार साधन है, और हमारी गुजर-बसर के लिए पूरी तरह से जरूरी है। इसने मानव संस्कृति और सभ्यता के लिए अथाह योगदान दिया है। वैसे, आज समस्या यह है कि बुद्धि ने असंगत रूप से महत्वपूर्ण भूमिका ले ली है। बुद्धि का सार विभाजन करना है। तो मानवता भरपूर चीर-फाड़ की यात्रा पर निकल पड़ी है। हमने तोड़कर हर चीज के टुकड़े कर दिए हैं, जिसमें अदृश्य परमाणु भी शामिल है। हम भूल गए हैं कि मानव तर्क आवश्यक रूप से सीमित है क्योंकि यह हमारी इंद्रियों से प्राप्त अशुद्ध और खंडित जानकारी पर आधारित है। बताया जाता है कि जब यूरोप का पहला समुद्री जहाज उत्तरी अमेरिका गया तो आदिवासी जातियां लोगों को अपनी ओर आते हुए देख रही थीं, लेकिन वो जहाज को नहीं देख पा रहे थे। ऐसा इसलिए था क्योंकि उन्होंने जहाज पहले कभी नहीं देखा था। यह कहानी सच है या अप्रमाणिक, पर सच्चाई यह है कि अगर किसी चीज के बारे में आपके दिमाग में कोई पुरानी जानकारी नहीं है, तो आप उसका बोध तक नहीं कर सकते। यह बात हमें धर्म नहीं, बल्कि आधुनिक न्यूरोसाइंस बताती है। ज्ञान योगी को इस बात का एहसास होने लगता है कि जब बात रहस्यमय आयाम की आती है तो बुद्धि का कोई महत्त्व नहीं है। वह देखता है कि बुद्धि से इकट्ठी की गई जानकारी हमेशा सीमित रहेगी। सीमित के जरिए अनंत तक पहुंचना असंभव है।

रीडर्स मेल

भारत की अद्भुत छलांग

हाल ही में केंद्र सरकार द्वारा वित्तीय वर्ष 2023-24 के लिए जारी किए गए रक्षा निर्यात संबंधी आंकड़ों ने पुनः देशवासियों को गौरवान्वित किया है। भारत ने विश्व के 84 देशों को 21,000 करोड़ से भी अधिक के सैन्य उपकरणों का निर्यात कर सभी को अचंभित कर दिया, जिसमें भारत की सरकारी व गैर सरकारी लगभग 50 कंपनियों का योगदान अहम है। निश्चित ही यह आंकड़ा अन्य बड़े-बड़े देशों के निर्यात के सामने छोटा लगे, परंतु भारत की स्वतंत्रता के बाद किसी एक वित्तीय वर्ष के लिए रक्षा निर्यात में यह सर्वाधिक 32.5 प्रतिशत की वृद्धि है जो भारत जैसे विकासशील देश के लिए एक उपलब्धि के तौर पर देखी जानी चाहिए। भारत रक्षा क्षेत्र में जितना अधिक निर्यात करेगा यह भविष्य में सामरिक दृष्टिकोण से वैश्विक स्तर पर भारत को बहुत बड़ी कूटनीतिक जीत दिलायेगा।

पारस जैन, मेरठ

रवैया न्यायसंगत नहीं

दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल को शराब घोटाला में पंद्रह अप्रैल तक न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया है। यह भारतीय इतिहास की पहली घटना है, जब कोई मुख्यमंत्री जेल के सलाखों के पीछे है और जेल से सरकार चलाई जा रही है। संविधान निर्माताओं ने ऐसी परिस्थिति की कभी कल्पना नहीं की थी, इसलिए इस विषय पर संविधान मौन है। न्यायालय से केजरीवाल को कोई राहत नहीं मिली। दिल्ली में व्यावहारिक और संवैधानिक संकट उत्पन्न हो चुका है। व्यावहारिक रूप से जेल में रहकर शासन व्यवस्था नहीं संभाला जा सकता है। संवैधानिक रूप से केंद्र सरकार को राष्ट्रपति शासन लगाने की आवश्यकता है, क्योंकि आज की राजनीति में नैतिकता के लिए कोई स्थान नहीं है। ईडी ने दावा किया है कि पूछताछ के दौरान केजरीवाल ने अपने मंत्रियों आतिशी और सौरभ भारद्वाज का नाम लिया है। ईडी के अनुसार शराब घोटाला के पैसों का इस्तेमाल गोवा और पंजाब के चुनाव में किया गया ईडी को घोटाले की पूरी सच्चाई देश के समझ रखनी चाहिए।

हिमांशु शेखर, गया

बसपा की चाल में उलझे दल

देश की राजनीति में पश्चिमी उत्तर प्रदेश का अच्छा खासा महत्त्व है। इसका अंदाज इसी बात से लगाया जा सकता है कि लोक सभा चुनाव में देश के प्रधानमंत्री की प्रथम सभा 31 मार्च को मेरठ में थी। इससे पूर्व उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री का चुनावी शंखनाद भी क्रांति धरा मेरठ से ही किया था। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में भाजपा, बसपा और सपा कांग्रेस गठबंधन के बीच त्रिकोणीय मुकाबला दिखाई दे रहा है। चुनावी प्रबंधन के हिसाब से भाजपा सबसे आगे है, लेकिन अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही बसपा ने भी मजबूत प्रत्याशी उतार कर चुनाव को रोचक बना दिया है। भाजपा ने वीके सिंह का टिकट काट दिया। इसका फायदा उठाकर बसपा ने ठाकुर समाज के एक नेता को उम्मीदवार घोषित किया है। गौतमबुद्ध नगर में भी बसपा ने ठाकुर समाज के एक नेता को उतार कर चुनाव त्रिकोणीय बना दिया है। बिजनौर मे भी रालोद के महासचिव को टिकट देकर बसपा ने भाजपा और रालोद को सीधे चुनौती दे दी है। समाजवादी पार्टी में टिकट बंटवारे पर खींचातानी के कारण मेरठ, बिजनौर, अमरोहा, रामपुर और गौतमबुद्ध नगर में प्रत्याशियों का बदलाव भी करना पड़ा है, जिसका असर लोक सभा चुनाव में जरूर पड़ेगा।

वीरेंद्र कुमार जाटव, दिल्ली

letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा ● राष्ट्रीयता ● कर्तव्य ● समर्पण

सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक जिया कादरी द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन प्रेस, सी-2,3,4, सेक्टर-11, नोएडा में मुद्रित तथा 705-706, सातवां तल, नवरंग हाउस, 21 के.जी. मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित।
। समूह संपादक - डॉ. विजय राय। स्थानीय संपादक - रत्नेश मिश्र* ।
दूरभाष - दिल्ली कार्यालय - 23352368, 23352369, 23352371, 23352372, फैक्स - 23352370, दूरभाष - नोएडा प्रेस 0120-2444755, 2444756 फैक्स - 2550750

वर्ष-33, अंक 231 | आर.एन.आई. सं. 53469/91, पंजीकरण संख्या UP/BR /GZB- 38/2024-2026 | *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन तथा कानूनी मामलों के लिए उत्तरदायी

संपादकीय

चुनावी वेला में केंद्रीय जांच एजेंसियों पर सबकी निगाहें

पिछले कुछ वर्षों में राजनीतिक कड़वापन इतना बढ़ गया है कि शायद ही सत्ता पक्ष और विपक्ष एक-दूसरे की तारीफ करे। लेकिन सुप्रीम कोर्ट में जैसे ही सरकारी वकील ने कहा कि चुनाव के मद्देनजर आईटी कांग्रेस के खिलाफ टैक्स वसूलने के प्रयास नहीं करेगा तो कांग्रेस के वकील ने कहा, 'मैं निःशब्द हूं'। हाल में ईडी, आईटी और सीबीआई द्वारा विपक्षी दलों के नेताओं और पार्टियों पर हुई कार्रवाई से सरकार की छवि पर असर पड़ा है। विपक्षी गठबंधन ने अपनी रैली में भी चुनाव आयोग से जो पांच मांगें रखीं, वे चुनाव के दौरान एजेंसियों की दमनात्मक कार्रवाई को लेकर ही थीं। देश में ही नहीं, अमेरिका, जर्मनी और यहां तक कि यूएनओ ने भी भारत में निष्पक्ष चुनाव को लेकर अपनी चिंता जाहिर की। लिहाजा सरकार दबाव में थी। सॉलिसिटर जनरल का अचानक बदला रवैया यही बताता है कि आईटी के कदम रोकने के फैसले के पीछे सरकार की सोच थी। सत्ता-पक्ष भी नहीं चाहेगा कि जनमत का झुकाव विपक्ष के प्रति बढ़े। लेकिन अब प्रश्न यह उठेगा कि अगर टैक्स वसूली (जो सिविल लॉ के तहत होती है) को रोका जा सकता है ताकि चुनाव में हर पार्टी को समान अवसर मिलें तो सीबीआई और ईडी द्वारा अपराध की धाराओं में विपक्षी नेताओं पर कार्रवाई से भी तो सवाल उठेंगे। क्या दो मुख्यमंत्रियों को चुनाव के वक्त मात्र पूछताछ के लिए गिरफ्तार करना सरकार के खिलाफ जनता की राय को कम प्रभावित करेगा? सन् 2019 के चुनाव में विपक्षी दलों द्वारा सरकार पर आरोप लगाने के बाद चुनाव आयोग ने सभी एजेंसियों से बिना पक्षपात दिखाते हुए काम करने को कहा था। इस बार आयोग क्या एजेंसियों को ऐसा ही कुछ निर्देश देगा? चुनावों की वेला में, आईटी रोकने वाले फैसले की तरह अन्य एजेंसियों के लिए भी ऐसे किसी फैसले की उम्मीद की जा सकती है?

सुर्खियों से आगे • आखिर चुनावी समर शुरू... सब निकल पड़े हैं अपने हिस्से के वोट समेटने

होंठों पर मुस्कान, शब्दों पर तलवारें

नवनीत गुर्जर
navneet@dbcorp.in

राजनीतिक हलके में नित नए खुलासे किए जा रहे हैं।

ईडी अपना काम कर रही है और सीबीआई भी मोर्चा सम्भाले हुए है।

इनकम टैक्स विभाग रात-दिन एक करने पर तुला हुआ है।

उद्देश्य एक ही है- कोई भ्रष्टाचारी बचना नहीं चाहिए। बचकर भागना भी नहीं चाहिए।

दिल्ली सरकार जेल में फंसी पड़ी है। सुनवाई जब-तब हो रही है लेकिन कुछ ठीक-ठाक बन नहीं पा रहा है। संभवत: लोकसभा चुनाव होने तक और उसके परिणाम आने तक यह सब होता रहेगा।

चलता रहेगा। बदस्तूर।

आखिर चुनावी समर शुरू हो चुका है। नेताओं के होंठों पर मुस्कान है और शब्दों पर तलवारें लटकी हैं। ये तलवारें कभी विरोधियों को काटती हैं। कभी अपनों को भी।

क्योंकि तलवार का काम है काटना। काट रहे हैं। साथ में कटती जा रही है वोटों की फसल।

भीषण गर्मी है। सुलगने लग गया है सीमेंट की दीवारों की सीलन का पानी। खुद अपनी आंखें छीलकर, गुजरे जमाने की तहजीब जनाजे पर पड़ी है।

...और इस घोर, भयानक रात और दहाड़ते दिनों में संदेशे भेजे रहे हैं, बहती हवा के साथ।

...कि तुम अपनी खिड़कियां खुली रखना। वोट हमें ही देना। उन्हें नहीं, जिन्हें पिछली बार गलती से दे दिया था।

ये गलतियां सुधारने का वक्त है। वक्त को मुट्ठी में बंद करने का वक्त है। बंद करके दरवाजे अब सुस्ताने के दिन नहीं रहे। सचेत रहिए। जाने कब, सबकुछ बदलने के साथ जुबान भी बदल जाए। वैसे ही, जैसे रेल गाड़ियां, पटरियां बदलती हैं।

...कि जैसे किसी गांव की कोई लड़की सुबह उठे और जबरदस्ती ब्याह दी जाए।

...कि जैसे आसमां रंग बदलता है। बदलने लग गई हैं शब्दों की चमड़ी।

हालांकि पूरे पांच साल तक चुप्पी छाई थी। ऐसी चुप्पी कि मन करता पत्थर गिरा दें ऐसी खामोशी पर। आग लगे ऐसी चुप्पी पर...

लेकिन तीन दिन पहले ही दिल्ली और मेरठ से जंग की जो दुंदुभी बजी है, हर कोई बोलने लगा है। सही है, अब तक इस चुनावी मामले को एकतरफा माना जा रहा था। हो सकता है- बहुत हद तक ऐसा हो भी, लेकिन कोई भी पक्ष कमजोर दिखने को तैयार नहीं है। बिना लड़े कोई भी हार मानी जाती है क्या?

बिना लड़े कोई भी हार मानी जाती है क्या?

जंग की दुंदुभी बजी है, हर कोई बोलने लगा है। अब तक चुनाव को एकतरफा माना जा रहा था। लेकिन कोई भी पक्ष कमजोर दिखने को तैयार नहीं है। बिना लड़े कोई भी हार मानी जाती है क्या?

इसलिए अड़े हुए हैं सब, अपनी-अपनी तान पर। निकल पड़े हैं अपने हिस्से के वोट समेटने।

इसी वोट खींचू गरज से अब सारे नेता गांव-गांव, शहर-शहर आने लगे हैं। वोट की खातिर हमें फुसलाने लगे हैं।

घूम-घूमकर रोज-ब-रोज, तमाम नेता थके-मांदे लगते हैं। सफर की धूल से पलकें अटी पड़ी हैं। इतने बेचारे... कि हम उनसे यह भी पूछ नहीं पाते कि बड़ी वार कर दी। अबकी बार कितनी देर से लौटे हो!

पिछली बार गए थे जब, तो कलियां जागने लगी थीं। फिर सभी शाखों पे हल्का बौर आया था। तुम तब भी नहीं आए।

फिर उसके बाद पतझड़ आया। तुम तब भी इस गांव या कस्बे का रास्ता भूले रहे।

बहुत-से चांद बुझने तक भी हमारी बर्बादी का उजाला दूर तक अपने चरम पर फैला हुआ था। तुम्हें उस झक्क उजाले में भी रास्ता नहीं सूझा।

हम हर वक्त खामोशी ओढ़े बैठे रहे। रास्ता तकते रहे। हम तो यह भी नहीं कह पाए कि हमारी इतनी लम्बी खामोशी को सुनने से पहले तुम बहरे क्यों नहीं हो गए?

वोट पाने के लिए यहां-वहां गरजते तो हो काले बादलों से भी तेज, लेकिन कान अपने क्यों तुमने सी लिए हैं?

आखिर इस बहरेपन का कोई तो इलाज होगा?

हमारे गांव में न सही, तुम्हारे शहर में सही, किसी डॉक्टर को दिखवा लो!

किसी अच्छे वैद्य को बता लो!

प्रेरणा

अपने भीतर-बाहर की चीजों के प्रति सजग और सचेत रहना ही ध्यान है। - जे. कृष्णमूर्ति

जीने की राह

पं. विजयशंकर मेहता
humarehanuman@gmail.com

घर-परिवार में अपनों के बीच तल्लीन होकर रहें

ध्यान दीजिएगा कहीं हम अपने घर, परिवार में खंड-खंड होकर तो नहीं जी रहे। इसका मतलब है कि जब हम अपने परिवारजनों के बीच रहते हैं, तो बाहर से ऐसा लगता है कि हम उनके साथ बैठे हैं, वो हमसे कोई बात कर रहे होते हैं और हम उनको सुन रहे होते हैं। लेकिन भीतर से हम वहां उपस्थित नहीं रहते हैं। बाहर की दुनिया का कारोबार चल रहा होता है या और कुछ मंथन जारी रहता है। इस अभिनय से एक नकारात्मकता पैदा होती है, जो दिखती नहीं पर संबंधों पर धीरे-धीरे असर डालती है। कृष्ण ने जो प्रयोग किया, वो हम भी कर सकते हैं। एक बार नारद जी श्रीकृष्ण के घर गए। अब उनके तो कई घर थे। नारद द्वारका में घूमते और हर महल में जाते तो देखते कि हर रानी के साथ कृष्ण हैं। माता-पिता के साथ उनके महल में अलग से हैं, बच्चों के साथ भी खेल रहे हैं। नारद चकित हो गए कि मैं जहां जाता हूं, वहां कृष्ण दिखते हैं। उन्होंने थककर कृष्ण से पूछा कि ये क्या है? कृष्ण ने बड़ा प्रतीकात्मक उत्तर दिया था- 'नारद जी, मैं जिसके साथ रहता हूं, पूरी तरह से उसका होकर रहता हूं। यदि मैं पति हूं, तो पूरी तरह पति बनकर रहता हूं। पिता हूं तो पिता। संतान हूं तो संतान'। लेकिन हम लोग खंड-खंड होकर जीते हैं। कृष्ण से सीखें कि घर में जब जिसके साथ हों, पूरी तरह से उसी के होकर रहें, बाहर से भी भीतर से भी।

• Facebook: Pt. Vijayshankar Mehta

अर्थात् • युद्धकाल में रूस का विकास तेजी से हुआ पर जंग के खात्मे के बाद पड़ सकती है महंगाई की मार

युद्ध की 'इकोनॉमी' ने रूस को डूबने से बचाया है...

अंशुमान तिवारी
मनी-9 के एडिटर
anshuman.tiwari@tv9.com

1815 में जब बेल्जियम की जमीन पर ब्रिटेन और फ्रांस के लंबे युद्धों यानी 'नेपोलियनिक वार' का सिलसिला खत्म हुआ तो बर्तानवी लोगों को नए दांत मिले। युद्ध से दांतों का क्या रिश्ता? वास्तव में ओरल केयर की कमी के कारण दांत जल्दी खराब होते थे। सड़े दांत बदलने के लिए नए दांत चाहिए थे, जिनकी कमी थी। बहुतों को बगैर दांत के रहना होता था। हुआ यूं कि ब्रिटेन और फ्रांस की जंग में मरे हुए सैनिकों की बत्तीसी उखाड़कर ब्रिटेन में सप्लाई की गई। इन्हें 'वाटरलू टीथ' कहा गया। जंग के मैदान से आए डेंचर लगाकर ब्रिटेन के अभिजात्य समारोहों में अपनी दंतुरित मुस्कानें बिखेरते थे। वाटरलू के मैदान में मरे घोड़ों और सैनिकों की हड्डियां भी गाड़ियों में भरकर यॉर्कशायर भेजी गईं, जो खेतों में खाद के तौर पर इस्तेमाल हुईं। इस खाद से उपजा अनाज ब्रिटेन के लोगों का राशन बना।

युद्धों का अर्थशास्त्र : यह बड़ा वीभत्स है। परंतु सभ्यताओं का विकास शवों के ढेर के बीच ही हुआ है। लोकतंत्र की आमद और शांति की जरूरत तक युद्ध ही सबसे बड़ी संगठित अर्थव्यवस्था थे। राज़े-महाराजे सालभर जंग लड़ते थे, जिससे उत्पादन होता था और रोजगार मिलते थे। युद्ध सबसे बड़ा खर्च भी था, आविष्कार भी और जोखिम भी। टैक्स, ब्यूरोक्रेसी, बॉन्ड, एविएशन, एंटीबायोटिक्स, राडार, इंटरनेट तक सब युद्धों की वजह से आए। पहले विश्व युद्ध ने अमेरिका की खेती का कायापलट कर दिया, जबकि दूसरे विश्व युद्ध ने अमेरिका के औद्योगिक उत्पादन और तकनीक को कई पीढ़ी आगे पहुंचा दिया। सोवियत रूस का उद्योग और विज्ञान शीतयुद्ध की होड़ की छाया में ही विकसित हुआ था। यह तो एक ही पीढ़ी में दो विश्व युद्धों की कत्लो-गारत थी, जिसने शांति और विकास के नए रिश्ते को समझाया। जंग करने वाले देश दोस्त बने, कारोबार शुरू हुए और अगले पांच दशक में दुनिया ग्लोबल विलेज बन गई।

रूस का तेज विकास : यह चर्चा इसलिए मौजूं हो गई, क्योंकि आईएमएफ ने बताया कि 2023 में रूस ने पूरे जी7 देशों से ज्यादा तेज विकास दर हासिल की। मुद्रा कोष ने 2023 में रूस की विकास दर का अनुमान 1.1 फीसदी से बढ़ाकर 2.6 फीसदी कर दिया। यह भी कहा कि इस साल भी ऐसा ही होगा। यूरोप में जर्मनी-ब्रिटेन तो मंदी में धंस गए हैं। फ्रांस भी घिसट ही रहा है। तब जंग-मारे रूस की विकास दर पूरे यूरोपीय समुदाय और जी7 से भी ज्यादा कैसे? रूस पर हर तरह के प्रतिबंध लगे हैं, करीब 260 अरब यूरो की सम्पत्तियां जब्त हो गई हैं, उसका एयरस्पेस अंतरराष्ट्रीय उड़ानों के लिए बंद है, तेल को 60 डॉलर प्रति बैरल बेचने की शर्त है, जबकि ब्रेंट इस समय 80 से 90 डॉलर प्रति बैरल पर है और रूबल दुनिया की सबसे कमजोर मुद्रा बन गया है : फिर भी रूस की अर्थव्यवस्था डूबी नहीं, बल्कि यूरोप में सबसे तेज दर से बढ़ रही है!

एक खतरनाक दुष्चक्र...

रूस एक ऐसी 'युद्ध-मशीन' में बदल गया है, जिसके लिए युद्ध का जारी रहना जरूरी हो गया है। मगर जंग जारी रखकर मांग बढ़ाना एक खतरनाक दुष्चक्र है। क्योंकि युद्ध रुकने के बाद रूस की अर्थव्यवस्था ढह सकती है। ब्याज दरें रिकॉर्ड ऊंचाई पर पहुंच चुकी हैं।

कैसे हुआ यह करिश्मा : रूस का केंद्रीय बैंक मजबूती से खड़ा रहा। महंगाई रोकने के लिए ब्याज दर रिकॉर्ड 16 फीसदी तक बढ़ा दी गई। सरकार ने युद्ध शुरू होते ही देश से पूंजी बाहर ले जाने पर रोक लगा दी, जिससे रूबल को पूरी तरह ढहने से रोकने में मदद मिली। तेल कम्पनियों ने प्रतिबंधों से बचने का रास्ता निकाल लिया। डार्क फ्लीट के जरिए रूस का तेल भारत और चीन तक पहुंचता रहा। इलेक्ट्रॉनिक्स और अन्य सामान टर्की, चीन, सर्बिया और भारत के जरिए मिलता रहा। पर असली कारण तो आगे है।

जंगी विकास दर : रूस की अर्थव्यवस्था युद्ध के बावजूद टिकी रही, इसकी एक वजह रणनीतिक है और दूसरी विशुद्ध आर्थिक। कहते हैं कि अमेरिका को दुनिया के युद्धों से निकली मांग से हमेशा लाभ होता है। क्योंकि सभी युद्ध उसकी जमीन से दूर होते हैं। रूस ने यूक्रेन पर हमला किया और पूरी जंग यूक्रेन की जमीन पर लड़ी जा रही है। 2022 यानी युद्ध के शुरुआती साल में रूस की अर्थव्यवस्था में करीब 1.2 प्रतिशत की सिकुड़न आई, मगर उसी साल यूक्रेन की अर्थव्यवस्था करीब 29 फीसदी सिकुड़ गई। जंग खर्चीला शौक है, मगर 2022 में रूस दुनिया की आठवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था था। हथियारों के सबसे बड़े निर्माता-निर्यातक रूस के लिए जंगबाजी के सारे साजो-सामान की आपूर्ति घरेलू थी। हथियार बनाने का कच्चा माल, गैस, तेल, कोयला सब देश के भीतर है। इसलिए जंग ने रूस को बर्बाद नहीं किया।

युद्ध की इकोनॉमी : युद्ध दुनिया की सबसे घातक अर्थव्यवस्था है, मगर यही रूस की अर्थव्यवस्था को बचाने में काम आ रही है। रूस ने तेल निर्यात पर पाबंदी आने से पहले तक कच्चे तेल के बाजार में तेजी का फायदा उठा लिया था। केंद्रीय बैंक ने रूबल छापे और सरकारी खर्च में रिकॉर्ड बढ़ोतरी हुई। रूस के बजट का 40 फीसदी हिस्सा इस समय युद्ध पर खर्च हो रहा है। बीते साल के अंत तक रूस का सैन्य खर्च उसके जीडीपी के अनुपात में 10 फीसदी हो गया है। इसके अलावा सब्सिडी और दूसरे खर्च भी बढ़ाए गए हैं। लेकिन युद्ध रुकने के बाद रूस की अर्थव्यवस्था ढह सकती है।

असली हार तो रूसी जनता की : आज रूस में ब्याज दरें रिकॉर्ड ऊंचाई पर हैं। पुतिन की सरकार रूबल छापकर युद्ध को पूंजी दे रही है। युद्ध खत्म होने पर महंगाई चरम पर होगी और पूंजी की लागत जानलेवा हो चुकी होगी। रूस ने 1990, 1998 और 2008 में भारी महंगाई झेली थी। पुतिन जंग जीतें या हारें, असली हार तो रूसियों की होगी- जो दुनिया में सबसे अधिक आर्थिक असमानता (ब्राजील और भारत से भी ज्यादा) वाले मुल्क के बाशिंदे हैं।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

वेब भास्कर

नेचरल गीजर : एक गलती से बन गया था ये फव्वारा, आज निजी प्रॉपर्टी है

अमेरिका के नवाडा स्थित गर्म पानी का यह फव्वारा नेचरल गीजर नाम से विख्यात है। कहा जाता है कि 1964 में यहां खुदाई के दौरान वैज्ञानिक जगह का ठीक से अनुमान नहीं लगा सके थे और यह फव्वारा फट पड़ा। यहां हो रही भू-तापीय गतिविधियों के कारण रंगबिरंगी शैवालों का भी इन सालों में निर्माण हो गया है और इनके कारण इसकी यह अनोखी रंगत है। 3800 एकड़ में फैला यह हिस्सा अब निजी संपत्ति है और इसे 6.5 मिलियन डॉलर में खरीदा गया था। निजी संपत्ति होने के कारण यहां लोगों की पहुंच सीमित है। इसके एक तरफ ब्लैक रॉक रेगिस्तान है, तो दूसरी ओर हुआलापाई घाटी है।

• तस्वीर साभार : natureworldwide.in

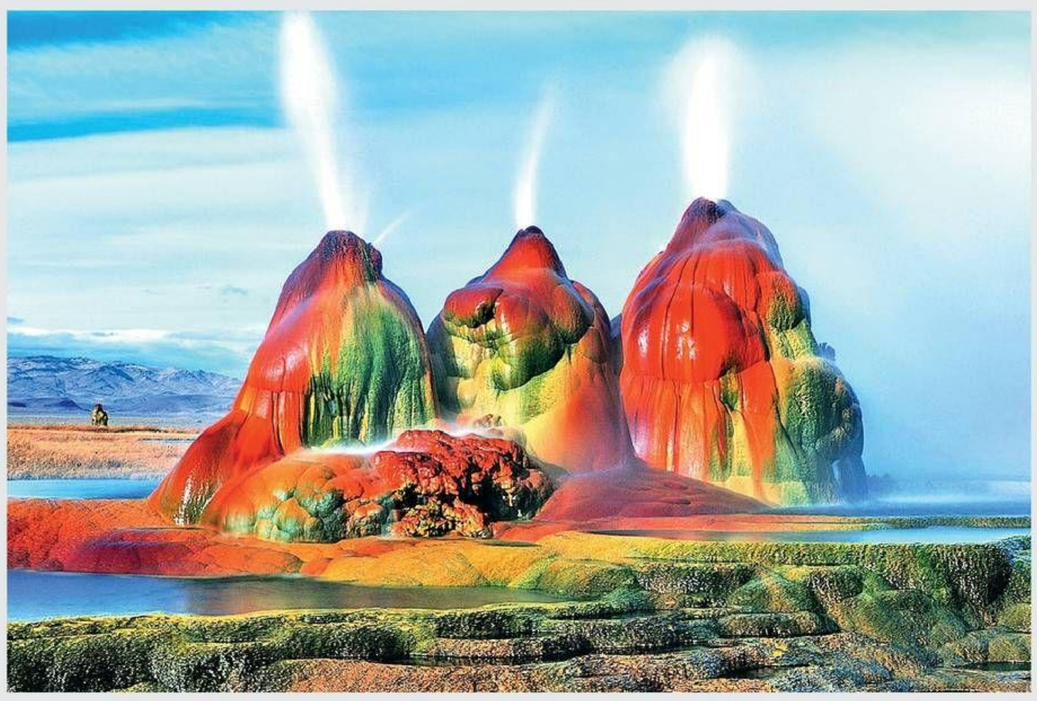

हेल्थ • वयस्कों की बीमारियां टीकों से रोकी जा सकती हैं

वैक्सीनेशन बच्चों के लिए ही नहीं, ये सबके लिए जरूरी है

डॉ. चन्द्रकांत लहारिया
जाने माने चिकित्सक
c.lahariya@gmail.com

पिछले एक साल में देश के कई हिस्सों में सांस संबंधी बीमारियां ज्यादा हुईं। हालांकि ज्यादातर खांसी, सर्दी या बुखार के रूप में फैलीं, लेकिन लक्षण अधिक समय- कुछ मामलों में तो कई हफ्तों तक रहे। इनमें से एक बड़ा हिस्सा फ्लू वायरस के कारण था। देखा गया था कि जिन्हें पहले से ही मधुमेह, किडनी रोग या लिवर से संबंधित बीमारियां थीं, उनको अधिक दिक्कतें हुईं। टीकाकरण द्वारा इनको रोका या कम किया जा सकता था। लेकिन टीकाकरण को लेकर आम जनता में धारणा है कि ये बच्चों के लिए होते हैं। जबकि हमने कोविड-19 टीकाकरण के उदाहरण से देखा है कि ये सभी आयु-समूहों के लिए है।

वास्तविकता यह है कि 1798 में चेचक का टीका उपलब्ध होने के बाद से- अगले 175 वर्षों तक- टीकाकरण का उपयोग वयस्कों सहित सभी आयु-समूहों के लिए किया जाता रहा। इस तरह हमने चेचक का उन्मूलन किया। रेबीज का टीका 1885 में खोजा गया और यह भी सभी आयु-वर्ग के लिए है। 1890 के दशक में खोजे और विकसित किए गए हैजा और टाइफाइड के टीके मुख्य रूप से वयस्कों के लिए थे। भारत में सबसे पहला देशी टीका 1897 में प्लेग के लिए विकसित किया गया था और वह भी सभी आयु-समूहों के लिए था। बीसीजी वैक्सीन (तपेदिक) के लिए पहली बार 1951 में राष्ट्रव्यापी अभियान शुरू हुआ और उसे वयस्क आबादी में भी लगाया गया। इन्फ्लूएंजा के टीके वयस्कों और बच्चों को समान रूप से दिए जाते रहे हैं।

1974 में- चेचक-उन्मूलन की सफलता पर-विश्व स्वास्थ्य संगठन और यूनिसेफ ने दुनिया के हर हिस्से में हर बच्चे को टीके उपलब्ध कराने के लिए विस्तृत टीकाकरण कार्यक्रम की घोषणा की थी। इसके बाद, लगभग सभी देशों ने बच्चों के लिए टीकाकरण कार्यक्रम शुरू किए। भारत ने 1978 में ईपीआई लॉन्च किया, जिसे 1985 में यूनिवर्सल इम्यूनाइजेशन प्रोग्राम का नाम दिया गया। इसके तहत सभी बच्चों को टीका लगाने पर जोर था, जो सरकार द्वारा मुफ्त प्रदान किया जाता था। मैं ग्रामीण मध्य प्रदेश में बड़ा हुआ हूं और मुझे आज भी बच्चों की बीमारियों के प्रति जागरूकता बढ़ाने के लिए टिन प्लेटों पर डरावनी छवियों वाले पोस्टर याद हैं। सौभाग्य से, विश्व स्तर पर और भारत में, बच्चों की कई बीमारियां लगभग खत्म हो गई हैं। पोलियो अब नहीं है। काली खांसी या गलघोंटू के मामले बहुत ही कम देखने को मिलते हैं।

यह सब टीकाकरण का कमाल है। अब हम वयस्क आबादी में ऐसी बीमारियां देख रहे हैं, जो टीकों से रोकी जा सकती हैं। ये सब उन लोगों में अधिक मिलती हैं, जिनको लिवर, फेफड़े और गुर्दे की बीमारियां और मधुमेह है, जो उनकी प्रतिरक्षा प्रणाली को कमजोर करता है। किशोर लड़कियों के लिए एचपीवी टीकों पर हालिया घोषणा एक अच्छी शुरुआत है, लेकिन सरकार को वयस्कों के लिए भी मुफ्त टीकाकरण कार्यक्रम पर विचार करना चाहिए। दूसरा, जनता में किसी भी टीके के प्रति झिझक को दूर करने के लिए मिथकों और

यह जरूरी हो गया है कि अब सरकारी नीतियों में वयस्कों और बुजुर्गों के टीकाकरण पर ध्यान दिया जाए। इसके लिए हम सार्वभौमिक टीकाकरण कार्यक्रमों के लगभग पांच दशकों के अनुभवों से सीख सकते हैं।

गलतफहमियों से निपटा जाना चाहिए। तीसरा, डॉक्टरों के प्रोफेशनल एसोसिएशन को वयस्कों और बुजुर्गों में टीकों के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए काम करना चाहिए। चिकित्सकों को किसी भी बीमारी के मरीज का इलाज करने के अवसर का उपयोग उन्हें टीकों के बारे में जागरूक करने के लिए करना चाहिए। चौथा, मेडिकल कॉलेजों और अनुसंधान संस्थानों को भारत में वयस्क आबादी में बीमारियों के बोझ पर साक्ष्य तैयार करना चाहिए। पांचवां, स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं को उपलब्ध टीकों के बारे में प्रशिक्षित किया जा रहा है और लोगों को भी इन टीकों के बारे में शिक्षित करना चाहिए।

2023 के अंत में, भारत ने टीबी को समाप्त करने के प्रयास में वयस्क बीसीजी टीकाकरण की एक पायलट पहल शुरू की थी। इस वर्ष दुनिया भी विस्तृत टीकाकरण कार्यक्रम के 50 वर्ष पूरे करने जा रही है। यह भारत में वयस्क टीकाकरण की नई यात्रा शुरू करने का सही अवसर है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

डिफ्रेंट एंगल • जो महंगे कोर्स की फीस ना दे सकें, वो निराश न हों, इंटरनेट पर ज्ञान की कमी नहीं

जीवन की राह कोई नरम गलीचा नहीं, गिरने से क्यों डरें?

रश्मि बंसल
लेखिका और स्पीकर
mail@rashmibansal.in

आजकल एक नए तरह का एमबीए चल पड़ा है। इसमें प्लेसमेंट की गारंटी नहीं होती, वो आपको बिजनेस सेटअप करना सिखाएंगे। शार्क टैंक के जमाने में युवा पीढ़ी को ये बात काफी आकर्षक लगती है, बड़े-बड़े सपने दिखते हैं। किसी और की गुलामी नहीं करनी, अपना ही बॉस बनूंगा।

बात में दम तो है, मगर एक छोटी-सी समस्या। कोर्स की फीस कुछ 29 लाख रुपए है। कोई नहीं, पापा दे देंगे। पढ़ाई के लिए तो इस देश के मां-बाप किसी भी हद तक जा सकते हैं। लोन ले लेंगे, घर गिरवी रख देंगे। बस एक सर्टिफिकेट मिल जाए। अब हमारा बिट्टू 'क्वालिफाई' हो गया। अगर वही बिट्टू कहे, पापा मुझे अपना बिजनेस खोलना है, आप मुझे दो लाख रु. दे दो, तो दैया रे दैया। दो लाख ऐसे ही दे दूं, डूबने के लिए? नहीं, कोर्स कर लो तो बेहतर रहेगा। वैसे भी हम नहीं चाहते कि तुम दर-दर फिरो, ठोकरें खाओ।

इसलिए आज हर छोटी-बड़ी चीज हम करते हैं किसी और के सहारे। ये है कोचिंग का कल्चर। जब मैं स्कूल में पढ़ती थी, ट्यूशन में सिर्फ वो बच्चे जाते थे जो कमजोर थे। बाकी अपनी टीचर्स से थोड़ी हेल्प मांग लेते, और अपने ही बल पर पढ़-लिख कर पास होते थे। सबसे पहले एंट्रेंस एग्जाम की कोचिंग शुरू हुई, उसके बाद बोर्ड एग्जाम के लिए। अब तो केजी से पीजी तक हर विद्यार्थी एक ट्यूशन क्लास से दूसरी में भाग रहा है। स्कूल के बाद खेलने-कूदने का समय ही नहीं। पर अगर खेलना भी हो तो भाई, वहां भी कोचिंग तो जरूरी है।

बचपन में मुझे स्केटिंग का शौक था। खूब जिद करी तो मम्मी-पापा ने स्केट्स दिलवा दिए। पहनकर जब पहली बार पैर रखा, तो पहुंची सीधी जमीन पर। लेकिन 10-15 दिन में बैलेंस बनाना सीख लिया। और फिर जो स्पीड से मैंने स्केटिंग की, सब हैरान। आज देख रही हूं कि स्केटिंग के लिए बच्चों की कोचिंग होती है। वो हेलमेट भी पहनते हैं, घुटने के पैड भी। गिरेंगे, तो चोट नहीं लगेगी। फिसलेंगे, तो कोई संभाल लेगा। लेकिन गिरने-फिसलने से इतना डर क्यों? अगर मखमली कारपेट पर स्केटिंग करना मुमकिन होता तो शायद मां-बाप को और भी सुकून मिलता।

लेकिन जीवन की राह एक नरम गलीचा नहीं। वहां पत्थर भी मिलते हैं, गड्ढे भी। बिना चप्पल भी इस राह पर कभी चलना पड़ेगा। कांटे घुसेंगे, दर्द सहना पड़ेगा। जिसने डिजाइनर जूतों में चलना सीखा, रुक जाएगा, जब तक उसका हाथ पकड़ने कोई नहीं आएगा। स्केटिंग हो या बिजनेस, फॉर्मूला सिंपल है। कुछ करो, गिरो, पढ़ो, उठो। फिर कुछ करो, गिरो, पढ़ो, उठो। ऐसा करते-करते आपको सीख मिल जाएगी। कुछ लॉस भी होगा पर अक्ल आएगी। कस्टमर को कैसे पटाना है, कम पैसे में कहां से मटेरियल लाना है। खाता कैसे लिखा जाता है, किसमें फायदा किसमें घाटा है।

महाभारत में पांडवों-कौरवों ने द्रोणाचार्य से धनुर्विद्या सीखी। एकलव्य ने द्रोणाचार्य को गुरु माना और मिट्टी से उनकी प्रतिमा बनाई। उस प्रतिमा के सामने एकलव्य ने श्रद्धा-भक्ति से अभ्यास किया और कहा जाता है उसकी तीरंदाजी से अर्जुन भी चकित हो गया। कहने का मतलब ये है कि जो महंगे कोर्स की फीस ना दे सके, उसे निराश नहीं होना चाहिए। आज मिट्टी की प्रतिमा नहीं, सिर्फ इंटरनेट कनेक्शन की जरूरत है। हर फील्ड की जानकारी वहां है, उसे सींचकर, अंदर खींचकर, बस अभ्यास कीजिए। आपकी स्क्रिप्ट कौन लिख रहा है, उसमें दम है या बोर लग रहा है। कहानी में ट्विस्ट लाना है तो कौन रोक रहा है, शायद अंदर का डर टोक रहा है। लेकिन प्रकृति का एक उसूल है, स्थिर रहना तो भूल है। आप चुप-चाप खड़े रहेंगे, पर धरती हिलेगी, ओले पढ़ेंगे।

गिरकर उठना तो जरूरी है, नहीं तो लाइफ अधूरी है। परमवीर है वो इंसान, जिसके मुंह पर है मुस्कान। गिरकर उठना उसकी शान।

(ये लेखिका के अपने विचार हैं)

कल्पमेधा

जो व्यक्ति सत्य के साथ कर्तव्यपरायणता में समर्पण भाव से लीन है, उसके मार्ग में बाधक होना कोई सरल कार्य नहीं है।

– रवींद्रनाथ ठाकुर

जांच का दायरा

पिछले कुछ वर्षों से केंद्रीय जांच एजंसियों की कार्यप्रणाली लगातार प्रश्नांकित होती रही है। कई मौकों पर अदालतें भी उनकी जिम्मेदारी और जवाबदेही याद दिला चुकी हैं। उसी क्रम में सुप्रीम कोर्ट के प्रधान न्यायाधीश ने भी कहा कि जांच एजंसियों को उन अपराधों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए, जो देश की सुरक्षा, आर्थिक स्थिति और लोकव्यवस्था के लिए असल में खतरा पैदा करते हों। उन्होंने इस पक्ष को भी रेखांकित किया कि जांच अनिवार्यताओं और व्यक्तिगत गोपनीयता अधिकारों के बीच संतुलन बनाने की तत्काल आवश्यकता है। प्रधान न्यायाधीश के इस कथन को प्रवर्तन निदेशालय, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो और आयकर विभाग की पिछले कुछ सालों में की गई छापेमारी और गिरफ्तारियों, जब्ती वगैरह के मद्देनजर देखें, तो स्थितियां स्वतः स्पष्ट हो जाती हैं। हालांकि प्रधान न्यायाधीश की इस नसीहत को जांच एजंसियां कितनी गंभीरता से लेंगी और उस पर कितना अमल करेंगी, कहना मुश्किल है। बेशक प्रधान न्यायाधीश ने ये बातें सीबीआइ के ही एक आयोजन में कहीं। मगर जैसा कि अनेक मामलों में देखा जाता है, सार्वजनिक मंचों से कही बातों को अक्सर आदर्श वक्तव्य की तरह केवल सुन लिया जाता है, उन पर अमल करना जरूरी नहीं समझा जाता। सीबीआइ भी ऐसा ही करे, तो हैरानी की बात नहीं।

केंद्रीय जांच एजंसियों पर लंबे समय से आरोप लगते रहे हैं कि वे सरकार के इशारे और उसकी इच्छा के अनुरूप काम करती हैं। पिछले कुछ वर्षों में भ्रष्टाचार पर नकेल कसने के इरादे से लगातार की जा रही कार्रवाइयों के मद्देनजर ये आरोप निरंतर गाढ़े होते गए हैं। इसकी बड़ी वजह यह भी है कि अधिकतर कार्रवाइयां विपक्षी दलों के नेताओं के खिलाफ ही की गई हैं। उसमें कई नेताओं को सलाखों के पीछे भी डाला गया। अनेक मामलों में आरोप लगते रहे कि गलत तरीके से जब्ती की गई, पूछताछ के नाम पर लोगों को नाहक परेशान और प्रताड़ित किया गया। यह सवाल भी लगातार पूछा जाता है कि जांच एजंसियां जितने छापे मारती और कार्रवाइयां करती हैं, उनमें से पांच फीसद मामलों में भी दोष सिद्ध नहीं हो पाते। धनशोधन निवारण कानून की धाराएं इतनी सख्त हैं कि उनके तहत गिरफ्तार किए गए लोगों को तब तक जमानत नहीं दी जाती, जब तक कि वे निर्दोष साबित नहीं हो जाते। इसलिए सर्वोच्च अदालत ने पहले भी कहा था कि इस कानून के तहत गिरफ्तारी से पहले जांच एजंसियों को पूरी तरह आश्वस्त होना चाहिए कि मामले में दोषसिद्धि की कितनी संभावना है। मगर इसे भी गंभीरता से नहीं लिया गया।

ताबड़तोड़ छापों से परेशान होकर विपक्षी दलों ने इन पर रोक लगाने के लिए सर्वोच्च न्यायालय से गुहार लगाई, तब अदालत ने कहा था कि धनशोधन का मामला आतंकवादी और राष्ट्रविरोधी गतिविधियों से भी जुड़ा हो सकता है, इसलिए एजंसियों को इस काम से रोका नहीं जा सकता। अब प्रधान न्यायाधीश ने जांच एजंसियों का दायरा स्पष्ट कर दिया है कि उन्हें उन्हीं मामलों पर अपना ध्यान केंद्रित करने की जरूरत है, जिनसे राष्ट्र की सुरक्षा, आर्थिक स्थिति और लोकव्यवस्था को खतरा पैदा होता हो। उसमें व्यक्ति के निजी अधिकारों की सुरक्षा का भी ध्यान रखने की जरूरत है। जांच एजंसियां जांच के नाम पर अक्सर व्यक्तियों के फोन, कंप्यूटर जैसे निजी उपकरण भी जब्त कर लेती हैं, जिनमें उनकी व्यक्तिगत सामग्री हो सकती है। इन नैतिक और कानूनी तकाजों का ध्यान एजंसियां तभी रख सकती हैं, जब उनमें वास्तव में स्वतंत्र रूप से काम करने की इच्छाशक्ति हो।

सियासत और संस्थान

पिछले कुछ समय से यह चलन-सा बन गया है कि ज्यादातर सरकारी संस्थानों के समारोहों के आयोजन में उसके उद्घाटन, समापन या अन्य कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए सत्ता पक्ष से जुड़े राजनीतिकों या मंत्रियों को बुला लिया जाता है। इस बात का खयाल रखना जरूरी नहीं समझा जाता कि इस तरह किसी स्वायत्तशासी संस्था की छवि और गतिविधि प्रभावित होती है। यह बेवजह नहीं है कि सैद्धांतिक रुख रखने वाले कुछ लोग ऐसी संस्थाओं के राजनीतिकरण से सहमति नहीं रख पाते और आखिरी विकल्प के तौर पर इस्तीफा दे देते हैं। गौरतलब है कि मलयालयम के जाने-माने लेखक सी राधाकृष्णन ने इस वर्ष के साहित्य अकादेमी के साहित्य महोत्सव का उद्घाटन एक केंद्रीय मंत्री से कराए जाने के विरोध में सोमवार को अपने पद से इस्तीफा दे दिया। वे केंद्रीय साहित्य अकादेमी के सदस्य थे। उनका कहना था कि साहित्य महोत्सव का उद्घाटन जिस केंद्रीय मंत्री से कराया गया, उनका साहित्य के क्षेत्र में कोई बड़ा योगदान नहीं है। अकादेमी के सचिव को लिखे अपने त्यागपत्र में उन्होंने यह शिकायत की थी कि साहित्य अकादेमी के लंबे और शानदार इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ, जबकि अकादेमी ने राजनीतिक दबाव के खिलाफ संस्थान की स्वायत्तता को लगातार बरकरार रखा है।

साहित्य, कला, संस्कृति से जुड़ी संस्थाओं के कई प्रक्रियागत मामलों में पहले भी सवाल उठते रहे हैं। जबकि उम्मीद की जाती है कि ऐसी संस्थाओं को विवाद और राजनीतिक दखलअंदाजी से अलग रखना चाहिए। उनमें विशेषज्ञता को तरजीह दी जानी चाहिए। मगर अफसोस कि ऐसी संस्थाओं में पिछले कुछ समय से ऐसे विवाद उभरते रहे हैं, जो नाहक ही उनकी तटस्थ और स्वतंत्र छवि पर असर डालते हैं। खेल संघों में शीर्ष पदों पर राजनीतिक नियुक्तियों का हासिल क्या रहा है, यह छिपा नहीं है। अब साहित्य-संस्कृति से जुड़ी संस्थाओं में भी राजनेताओं को बुलाने की वजह से उस पर विवाद खड़े होने लगे हैं। विडंबना है कि ऐसी बातों पर कोई आपत्ति जताता या वाजिब सवाल उठाता है तो उसे संस्थान से बाहर होना पड़ता है। ऐसी छवि के साथ साहित्यिक मूल्यों और विचारों को कैसे बचाया जा सकेगा?

सौर ऊर्जा क्षेत्र में क्रांतिकारी कदम

भारत ने अपनी जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्ययोजना के अंतर्गत 11 जनवरी, 2010 को राष्ट्रीय सोलर मिशन शुरू किया था। इस मिशन का उद्देश्य देश के सामने उभर रही ऊर्जा चुनौतियों से लड़ना है।

सीमा अग्रवाल

बढ़ती ऊर्जा जरूरतों के मद्देनजर सरकार ने 'सूर्योदय योजना' शुरू की है। इसका उद्देश्य देश में एक करोड़ घरों की छतों पर सौर ऊर्जा प्रणाली स्थापित करना है। सूरज की रोशनी से बनी इस बिजली के उपयोग से दैनिक जीवन में बिजली की खपत को कम किया जा सकता है। विशेषज्ञों का मानना है कि यह पहल जल्द ही भारत को विश्व पटल पर अक्षय ऊर्जा के निर्यातक के रूप में स्थान दिलाएगी। भारत के अधिकांश भागों में वर्ष में 250-300 धूप निकलने वाले दिनों सहित हर दिन प्रति वर्गमीटर लगभग 4-7 किलोवाट घंटे का सौर विकिरण मिलता है। अगर इसे वर्ष भर के उत्पादन से जोड़ें तो भारतीय भूभाग पर लगभग प्रतिवर्ग मीटर पांच हजार लाख करोड़ किलोवाट सौर ऊर्जा मिलती है।

'नेशनल इंस्टीट्यूट आफ सोलर एनर्जी' के आंकड़ों के मुताबिक भारत में लगभग 748 गीगावाट सौर ऊर्जा की क्षमता है। इसे 'सोलर पैनल' की मदद से बिजली में बदल कर बढ़ती ऊर्जा की मांग को पूरा किया जा सकता है। ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा प्रकाशित बंजर भूमि एटलस 2019 के अनुसार देश में कुल बंजर भूमि लगभग 5,57,665 वर्ग किलोमीटर है। इस भूमि का उपयोग सोलर पैनल लगाने में किया जा सकता है। इससे अच्छी मात्रा में सौर ऊर्जा पैदा की जा सकती है। 'काउंसिल आन एनर्जी एनवायरमेंट एंड वाटर' द्वारा जारी एक रपट में कहा गया है कि भारत के 25 करोड़ घरों की छतों पर 637 गीगावाट सौर ऊर्जा का उत्पादन किया जा सकता है।

भारत ने अपने जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्ययोजना के अंतर्गत 11 जनवरी, 2010 को राष्ट्रीय सोलर मिशन शुरू किया था। इस मिशन का उद्देश्य देश के सामने उभर रही ऊर्जा चुनौतियों से लड़ना है। गौरतलब है कि 'काप-28' के दौरान भारत ने लक्ष्य रखा था कि वह 2030 तक अपनी कुल स्थापित विद्युत ऊर्जा का पचास फीसद गैर-जीवाश्म स्रोतों से प्राप्त करेगा। इस लक्ष्य को पूरा करने में सौर ऊर्जा का विस्तार और विकास बेहद आवश्यक है। इसके लिए भारत सरकार ने सौर ऊर्जा उत्पादन में तीव्रता लाने के लिए कई योजनाएं चलाई हैं। इनमें सोलर पार्क योजना, फोटोवाल्टिक सेल के घरेलू उत्पादन को बढ़ाने हेतु 'प्रोडक्शन लिंक्ड इंसेंटिव' योजना, 'ग्रिड कनेक्टेड सोलर फोटोवोल्टिक प्रोजेक्ट्स' आदि प्रमुख हैं। इन योजनाओं के बेहतर क्रियान्वयन के कारण आज भारत की कुल सौर ऊर्जा क्षमता 70 गीगावाट तक पहुंच गई है। नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय द्वारा जारी वैश्विक स्थिति रपट 2023 के अनुसार विश्व में सोलर पैनल उपलब्ध कराने में आज भारत पांचवें नंबर पर है।

सौर ऊर्जा के उपयोग में बड़ी भूमिका फोटोवोल्टिक सेल की होती है। इन्हीं के जरिए सौर ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदलकर ग्रिड तक पहुंचाया जा सकता है। फोटोवोल्टिक सेल सोलर पैनल को ऊर्जा उत्पादन बढ़ाने, इनके आयात पर होने वाले विदेशी मुद्रा के खर्च को कम करना एक बड़ी चुनौती थी। इसलिए भारत सरकार ने सौर ऊर्जा

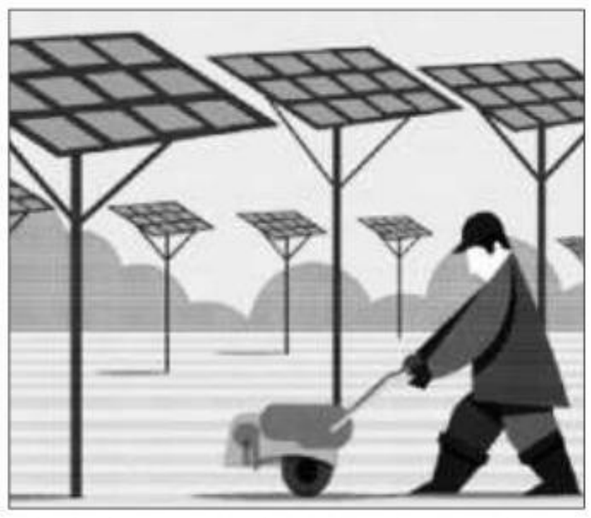

के क्षेत्र में 'प्रोडक्शन लिंक्ड इंसेंटिव स्कीम' की शुरुआत की है। इसमें ऐसे उद्यमियों को सबसिडी दी जाती है, जो सोलर पैनल या सौर ऊर्जा से जुड़े किसी भी उपकरण का निर्माण घरेलू स्तर पर कर रहे हैं।

आज भारत के सौर ऊर्जा क्षेत्र में काफी वृद्धि देखी जा सकती है।

> **आज भारत के सौर ऊर्जा क्षेत्र में काफी वृद्धि देखी जा सकती है। इसमें बड़ा योगदान सरकार की 'सोलर पावर बैंक' योजना का है। इस योजना के तहत सरकार कई सौ हेक्टेयर भूमि पर सौर संयंत्र लगाती है। अब तक इस योजना के तहत कई सोलर पार्क बन चुके हैं। इसमें राजस्थान का भादला सोलर पार्क सबसे बड़ा है। इसकी सौर ऊर्जा उत्पादन क्षमता 2.25 गीगावाट है। वहीं कर्नाटक के पाबागाड़ा सोलर पार्क की क्षमता 2.05 गीगावाट है। इसे भविष्य में तीन गीगावाट तक करने की योजना है।**

इसमें बड़ा योगदान सरकार की 'सोलर पावर बैंक' योजना का है। इस योजना के तहत सरकार कई सौ हेक्टेयर भूमि पर सौर संयंत्र लगाती है। अब तक इस योजना के तहत कई सोलर पार्क बन चुके हैं। इसमें राजस्थान का भादला सोलर पार्क सबसे बड़ा है। इसकी सौर ऊर्जा उत्पादन क्षमता 2.25 गीगावाट है। वहीं कर्नाटक के पाबागाड़ा सोलर पार्क की क्षमता 2.05 गीगावाट है। इसे भविष्य में तीन गीगावाट तक करने की योजना है। नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय की वर्षांत समीक्षा 2022 के अनुसार जनवरी से अक्तूबर 2022 के दौरान विभिन्न सौर पार्कों में 832 मेगावाट क्षमता की सौर परियोजनाएं चालू की गई हैं। 17 पार्कों में 10 गीगावाट से अधिक की कुल क्षमता वाली सौर ऊर्जा परियोजनाएं पहले ही शुरू की जा चुकी हैं। इन योजनाओं और नीतियों का परिणाम है कि वर्ष 2022 में गुजरात का मोढेरा भारत का पहला सोलर ग्राम बना। सितंबर 2023 में मध्यप्रदेश का सांची देश का पहला सोलर नगर बन गया। 2018 में दीव देश का पहला सोलर द्वीप बन गया था।

सौर ऊर्जा को नवीकृत और सतत ऊर्जा का मुख्य स्रोत कहा जाता है, जो पर्यावरण के अनुकूल विद्युत उत्पादन का विकल्प देती है। आज सौर ऊर्जा से घरों और उद्योगों दोनों को सस्ती दरों पर बिजली दी जा रही है। सस्ती दरों पर उद्योगों को बिजली मिलने से उत्पादन की लागत घटेगी। अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी के 2021 के आंकड़ों के मुताबिक सन 2000 से भारत में ऊर्जा का उपभोग दोगुनी गति से बढ़ रहा है। लगभग दो दशक में 90 करोड़ नागरिकों को बिजली का कनेक्शन मिल चुका है, जो भविष्य में भारत की ऊर्जा मांग को हर साल 5-6 फीसद बढ़ा रहा है। गौरतलब है कि भारत की अस्सी फीसद ऊर्जा की जरूरत तीन महत्त्वपूर्ण ईंधनों- कोयला, तेल और ठोस बायोमास से पूरी होती है। ऊर्जा के लिए जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता लगातार भारत के विदेशी मुद्रा कोष को खाली करती जा रही है। ऐसे में सौर ऊर्जा का विकास और वृद्धि ही भारत के विदेशी मुद्रा कोष को खाली होने से रोक पाएगी।

सौर ऊर्जा निसंदेह बहुउद्देशीय उपयोग वाली अक्षय ऊर्जा है, लेकिन अभी इसके विकास में अनेक चुनौतियां सामने आ रही हैं। सौर ऊर्जा के लिए सोलर पैनल की जरूरत होती है। पिछले वर्ष देखा गया कि भारत के सोलर पावर डेवलपर्स सोलर सेल को चीन, कंबोडिया, मलेशिया, थाईलैंड, विएतनाम से आयात कर रहे हैं। जनवरी से अगस्त 2022 में लगभग 2.5 अरब रुपए के सोलर सेल हमने विदेशों से आयात किए हैं। भारतीय सोलर पावर डेवलपर्स का तर्क है कि हमारे देश में बने सोलर सेल महंगे और कम दक्षता वाले हैं, इसलिए हमें ये आयात करने पड़ते हैं। दरअसल, भारत में बने सोलर सेल अन्य देशों की तुलना में महंगे हैं, क्योंकि सोलर सेल में इस्तेमाल होने वाले सिलिकान वेफर सेमीकंडक्टर से बनते हैं, जिनका भारत में काफी अभाव है। सौर ऊर्जा विशेषज्ञों का मानना है कि भारत में सौर उद्योग की वृद्धि नए रोजगारों का सृजन करेगी। इससे अर्थव्यवस्था को बढ़ावा मिलेगा। अगर भारत में सौर ऊर्जा का इस्तेमाल बढ़ाया जा सकेगा, तो इससे जीडीपी दर भी बढ़ेगी। सौर ऊर्जा का इस्तेमाल बिजली उत्पादन, तापन और प्रकाश तीनों के लिए हो सकता है।

भारत में दूरदराज के क्षेत्रों तक बिजली पहुंचाने के लिए इन क्षेत्रों में ग्रिड स्थापित करनी होगी, जिसकी लागत बहुत अधिक होती है। इन क्षेत्रों में सौर संयंत्र स्थापित करने से यह खर्च कम किया जा सकता है। इससे गांवों को भी सस्ती दरों पर बिजली मिल सकेगी।

सफर की साथी किताबें

दीपिका शर्मा

'जब कभी हम एक अच्छी पुस्तक पढ़ते हैं तो यह नए विचारों, संभावनाओं और संस्कृतियों का ज्ञान अर्जित करने का मार्ग खोल देती है।' यह उक्ति वेरा नजारियान की है। बचपन से हम सुनते आ रहे हैं कि किताबें हमारी सबसे अच्छी दोस्त होती हैं जो जीवन भर हमें एक शिक्षक की तरह सिखाती हैं। मां की तरह हर मुसीबत में हमारा साथ निभाती हैं और पिता के भांति अंगुली थामे हर परिस्थिति में सही राह दिखाने का जिम्मा उठाती हैं। दरअसल, इनसे प्राप्त ज्ञान ही है जो हमारे व्यक्तित्व का निर्माण कर हमें जीवन जीने की कला सिखाता है। कई बार बीच भंवर में ही कई रिश्ते हमें डूबता हुआ छोड़ जाते हैं, लेकिन किताबों से जुड़ा रिश्ता ही है, जो हमें कठिन दौर में सही रास्ता दिखा कर नाव पार लगाता है। किताबें हमारे दुख, दर्द, खुशी, अकेलेपन की साथी होती हैं। यही नहीं, ये एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में ज्ञान हस्तांतरित करने में एक अहम भूमिका निभाती हैं। यह एक ऐसा माध्यम है, जिसके जरिए हम महान हस्तियों के बारे में आसानी से जान पाते हैं, जिन्हें हम अपना आदर्श मानते हैं।

कभी-कभी जीवन इतना नीरस हो जाता है कि हमें समझ ही नहीं आता कि हमें करना क्या है। ऐसे में हम उन लोगों से चिर-परिचित होकर उनके पदचिह्नों पर चलने की प्रेरणा इन किताबों से ही हासिल करते हैं।

किताबें न सिर्फ हमारा व्यक्तित्व गढ़ती, बल्कि हमें मानसिक समस्याओं से भी बचाती हैं। पढ़ने से दिमाग का अच्छा व्यायाम होता है। पढ़ने के दौरान हमारे अंदर एकाग्रता में बढ़ोतरी होती है, जिससे हम किसी भी परिस्थिति में अपने लक्ष्य को प्राप्त करना सीखते हैं। ये हमारे मस्तिष्क को सक्रिय रखती हैं। अगर हम अपने मस्तिष्क को सक्रिय रखते हैं तो कुछ हद तक याददाश्त की कमजोरी या अवसाद से बचाने के लिए यह एक इलाज के तौर पर कारगर साबित होता है। इसके अलावा, अगर अच्छी किताबें पढ़ने के साथ-साथ हम अपने भीतर लेखन की आदत को अपना लेते हैं तो यह और बेहतर नतीजे देती है। आजकल तो चिकित्सक भी किसी बड़ी बीमारी का इलाज करते समय लिखने और पढ़ने की सलाह को इलाज के एक तरीके के तौर पर प्रयोग करते हैं, क्योंकि अक्सर कई दवाइयों का दुष्परिणाम होता है कि वे तंत्रिका तंत्र पर असर डालती हैं। इससे याददाश्त कमजोर होने का भय रहता है। ऐसे में मरीज को लिखने और पढ़ने की सलाह दी जाती है, जिससे दिमाग सक्रिय रूप से काम कर सके।

आज बदलते जमाने के साथ हमारे इस दोस्त यानी किताबों का रंग-ढंग कुछ बदला-बदला रहने लगा है। जहां पहले किताबों को पढ़ते-पढ़ते उसकी सोंधी-सी महक भी हमारे मन पर छाप छोड़ा करती थी, आज किताबें डिजिटल होकर एक छोटे यंत्र में हमारी जेब में ही समा जाती हैं। हालांकि अगर कोई शारीरिक रूप से असमर्थ हो तो उनके लिए यह वरदान से कम नहीं, क्योंकि वे एक जगह बैठे हुए पढ़ और सुन भी सकते हैं। साथ ही ये पर्यावरण के अनुकूल भी हैं, क्योंकि इन्हें प्रकाशित करने के लिए सैकड़ों वृक्षों को काटने की आवश्यकता नहीं होती। छपी हुई किताबों को साझा कर हम सामाजिक और पारिवारिक संबंधों को मजबूत बना सकते हैं। किताबें इस बात का भी सबूत हैं कि एक दूसरे से किताबें साझा करते समय कितने ही प्रेमी जोड़ों ने अपने दिल का पैगाम इन किताबों के जरिए साझा किया। आज सोशल मीडिया के अलग-अलग मंचों की मदद से कुछ लोग अपने दिल की बात महज एक क्लिक के जरिए बोल देते हैं। यह दूसरी बात है कि आभासी दुनिया में सच्चे दिलों में सिर्फ दस फीसद लोग ऐसे होते हैं, जिन्हें सच्चा प्यार मिल पाता है। यह भी देखा जाता है कि इन मंचों पर जो जितनी जल्दी पा लेता है, वह उतना ही जल्दी खो भी देता है। जब किताबों वाला इश्क हुआ करता था, तब बड़ी मशक्कत के बाद प्रेमी युगल अपने दिल की बात अपने साथी तक पहुंचा पाते थे। इस तरीके में एक डर होता था कि किताब महबूब या महबूबा के हाथों में पड़ेगी भी या नहीं और पढ़ने के बाद इस पर प्रतिक्रिया क्या होगी!

कभी किताब में गुलाब रखना तो कभी मोर पंख। ऐसे कितने ही भाव हमारी किताबों से जुड़े हैं। उम्र के अंतिम पड़ाव पर भी अगर हम अपनी किताबों को सीने से लगाते हैं तो न जाने कितनी ही कही-अनकही बातों की यादें ताजा हो जाती हैं। हर उम्र में किताबों के मायने बदलते जाते हैं। बाल्यावस्था में बच्चा पढ़ना शुरू करता है तो रंग-बिरंगे चित्र उसे अपनी नई दुनिया लगने लगती हैं। किशोरावस्था तक पहुंचते-पहुंचते ज्ञान के भंडार की खोज करने लगता है। तब पाठ्यपुस्तक के साथ-साथ सहायक किताबें उसे अच्छे नंबर दिलाने का काम करती हैं। युवावस्था तक आते-आते ज्ञान का भंडार व्यक्तित्व का निर्माण करने लगता है। प्रौढ़ावस्था तक आते-आते किताबें दिल-दुनिया की तस्वीर बन जाती हैं। वहीं वृद्धावस्था में किताबों के जरिए मोक्ष का द्वारा ढूंढ़ा जाता है। दरअसल, किताबें शुरू से लेकर अंत तक हर रोज पग-पग चलना सिखाती हैं।

सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और साहित्यिक जैसे तमाम क्षेत्रों का ज्ञान हमें किताबों से ही मिलता है। मगर आज बाजारवाद के कारण किताबों में अश्लीलता ने पांव पसारे हैं। जिस कारण युवा पीढ़ी लक्ष्य से विचलित हो रही है। अच्छी किताबों से दिनोंदिन बढ़ती दूरी हमें नैतिक पतन, भौतिकवाद और आत्ममुग्ध आधुनिकता से ग्रस्त कर रही है। इसलिए जरूरी है कि हर बच्चे के अंदर नियमित और खुद ही पढ़ने-सीखने की जिज्ञासा उत्पन्न हो। पढ़ते-सीखते हुए अपने तय जीवन-लक्ष्यों की ओर आगे बढ़ा जाए।

दुनिया मेरे आगे

> **किताबें न सिर्फ हमारा व्यक्तित्व गढ़ती, बल्कि हमें मानसिक समस्याओं से भी बचाती हैं। पढ़ने से दिमाग का अच्छा व्यायाम होता है। पढ़ने के दौरान हमारे अंदर एकाग्रता में बढ़ोतरी होती है, जिससे हम किसी भी परिस्थिति में अपने लक्ष्य को प्राप्त करना सीखते हैं।**

मजदूर का हक

देश में अकुशल श्रमिकों के लिए नियमित मजदूरी सुनिश्चित करने के लिए मनरेगा लाया गया था, जिसके सकारात्मक परिणाम रहे। मगर इसके लाभार्थियों की मजदूरी समय के साथ नहीं बढ़ी। पर हाल ही में केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय ने मनरेगा मजदूरी में चार से दस फीसद की बढ़ोतरी के लिए अधिसूचना जारी की है। गौरतलब है कि ग्रामीण स्तर पर आर्थिक उन्नति में मनरेगा एक मजबूत पहल रही है। इसके अलावा, इसमें लैंगिक समानता, अनिवार्य आय जैसे तत्त्व भी समाविष्ट हैं। पर इस योजना के वास्तविक परिणाम अब भी अधूरे रहे हैं। जैसे आज भी ग्राम प्रधानों द्वारा मशीनों से मनरेगा कार्य करवाकर मजदूरों के खातों से पैसा निकलवाना। कई लोगों को तो सालों से यही पता नहीं कि वे मनरेगा मजदूर हैं! फिर मनरेगा कार्यों की अद्यतन कार्यावली न होना, जिसकी वजह से यह योजना 'यूनिवर्सल बेसिक इनकम' बन कर रह गई है। इसलिए समय की मांग है कि मनरेगा कार्यों की एक निश्चित कार्यावली हो, जिसमें जल और पर्यावरण संरक्षण कार्यों का समावेश हो सके और एक पारदर्शी और जवाबदेहीपूर्ण तंत्र विकसित हो, ताकि लाभार्थी को उनका संपूर्ण हक सुनिश्चित कराया जा सके।

– सुमित, कालपी, उप्र

नाहक आकर्षण

'विदेशी शिक्षा का बढ़ता आकर्षण' (लेख, 27 मार्च) पढ़ा। सही है कि भारत में उच्च शिक्षा में व्याप्त अव्यवस्थाओं के कारण ब्रिटेन, अमेरिका, आस्ट्रेलिया और कनाडा में उच्च शिक्षा के लिए प्रतिवर्ष भारत से डेढ़ से पौने दो लाख छात्र पढ़ने जाते हैं। विदेश में उच्च शिक्षा काफी महंगी होने के बाद भी वहां के आकर्षण से छात्र और उनके अभिभावक, दोनों विदेशी शिक्षा से परहेज नहीं करते, बल्कि खुद को गौरवान्वित समझते हैं। हालांकि देश में चार सौ से अधिक विश्वविद्यालय में सात लाख अध्यापक और डेढ़ करोड़ विद्यार्थी पढ़ रहे हैं, लेकिन स्तरीय शिक्षा पर भरोसा नहीं है। गौरतलब है कि अमेरिका में स्कूल शिक्षा की नींव मजबूत करने के मद्देनजर वहां प्राथमिक से हाई स्कूल तक शिक्षा पूरी तरह निशुल्क है, जिसका अनुसरण करते हुए भारत को भी उच्च माध्यमिक तक शिक्षा निशुल्क करना चाहिए, ताकि मजबूत आधार होने से छात्र विदेश जाना पसंद नहीं करें।

– बीएल शर्मा 'अकिंचन', उज्जैन

बर्बरता की सीमा

'युद्ध में मासूम' (संपादकीय, 29 मार्च) पढ़ा। रूह कंपा देने वाली बचपन को कुचलने की जंग से इजराइल को आखिर क्या हासिल होगा और अब तक उसने क्या हासिल कर लिया। इस सवाल का जवाब अंतरराष्ट्रीय मानवतावादी संगठनों को पूछना चाहिए। बर्बरता को युद्ध नहीं कहा जा सकता। अगर इजराइल इस तरह की जंग लड़ता है तो वह आतंकवाद को ही नए सिरे से परिभाषित कर रहा है। नागरिक ठिकानों, अस्पतालों, स्कूलों पर बमबारी युद्ध की श्रेणी में कतई नहीं आते। इजराइल के खुन्नस भरे जनसंहार की अंतरराष्ट्रीय मंचों पर निंदा कर रोकने की पुरजोर कोशिश होनी चाहिए। विश्व की इस विषय पर खामोशी भी लज्जित करने वाली लगती है। अनर्थ को अगर अनर्थ कहने से बच रहे हैं तो वे सब भी अनर्थ ही कर रहे हैं।

– हुकुम सिंह पंवार, टोड़ी, इंदौर

बर्बादी का अनाज

विश्व भर में भोजन की बर्बादी एक आम चलन है। एक अनुमान के मुताबिक, कुल मिलाकर सत्रह फीसद भोजन बर्बाद हो रहा है। हालांकि विकसित देशों के मुकाबले विकासशील देशों मे भोजन की कम बर्बादी होती है। मगर अपने देश में कई वजहों से भोजन लोग खाने-पीने का सामान नाहक बर्बाद कर देते हैं। दूसरी ओर, बहुत सारे लोग भूखे पेट सो जाते हैं। इस तरह से भोजन की बर्बादी को रोकने के लिए कारगर कदम उठाए जाने चाहिए और प्रत्येक व्यक्ति को इसके लिए जागृत होना होगा। शादी के कार्यक्रमों में जिस तरह से भोजन को बर्बाद किया जाता है, उसे पर प्रतिबंध लगना चाहिए। जो भी इस तरह के कार्यक्रम करते हैं, उनको इस बात पर ध्यान देना चाहिए। कार्यक्रम के दौरान भोजन बर्बाद न करने के लिए इश्तिहार लगाने चाहिए और इस बात के लिए लोगों को जागृत करना चाहिए।

– मीना धानिया, सिरसपुर

https://t.me/AINewsPaperPdf

www.readwhere.com

पायनियर
नई दिल्ली , बुधवार, 3 अप्रैल, 2024

चुनाव बांड योजना

विवाद जारी

चुनाव बांड योजना को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा रद्द किए जाने के बावजूद इस पर विवाद अभी जारी है। विपक्ष चुनाव बांड प्रयोग को 'भाजपा द्वारा पैसे की वसूली' बता रहा है, जबकि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने जोर दे कर कहा है कि इस योजना ने राजनीतिक फंडिंग में पारदर्शिता सुनिश्चित की थी। 2018 में शुरू होने के बाद से ही यह योजना विभिन्न क्षेत्रों से आलोचना का शिकार हुई थी। विपक्षी दलों ने यह कह कर चुनाव बांड योजना के खिलाफ मोर्चा खोल दिया था कि यह बड़े कार्पोरेट दानदाताओं को 'गोपनीयता' प्रदान करती है जो जनता में खुलासा किए बिना अपनी मनपसंद पार्टियों को पैसा दे सकते हैं। उनका तर्क है कि पारदर्शिता की कमी लोकतंत्र की मूल भावना के विपरीत है क्योंकि यह राजनीति पर पैसे के बेलगाम प्रभाव की अनुमति देता है। विपक्ष का आरोप है कि इस योजना से दूसरे राजनीतिक दलों की तुलना में सत्तारूढ़ भाजपा को ज्यादा लाभ हुआ है। भले ही भाजपा को चुनाव बांडों से ज्यादा धन मिला हो, लेकिन राज्यों में सत्तारूढ़ लगभग सभी दलों को भी इसका लाभ मिला है। इसलिए 'चुनाव बांड योजना' को केवल भाजपा को लाभान्वित करने वाली योजना बताना उचित नहीं होगा। विपक्ष ने यहां तक आरोप लगाए हैं कि भाजपा ने कुछ दानदाताओं को प्रवर्तन निदेशालय-ईडी के शिकंजे से मुक्त करने का काम किया, लेकिन इसके स्पष्ट व असंदिग्ध प्रमाण नहीं हैं।

चुनाव बांड योजना पर काफी समय से विपक्ष के हमलों और आलोचनाओं के बाद आखिरकार प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने इसका जवाब दिया। एक तमिल चैनल से बात करते हुए मोदी ने कहा कि इस प्रक्रिया से पहले की तुलना में राजनीतिक फंडिंग ज्यादा पारदर्शी हुई है। उन्होंने तर्क दिया कि पहले राजनीतिक दान नकद लिए जाते थे जिन्होंने भ्रष्टाचार और काले धन का रास्ता खोल दिया था। प्रधानमंत्री ने कहा कि चुनाव बांड योजना ने पैसे के प्रवाह का पता लगाना सुनिश्चित कर दिया जिससे जवाबदेही बढ़ी तथा चुनावों पर अवैध धन का प्रभाव कम हुआ। चुनाव बांड योजना के समर्थकों ने जोर दिया है कि इन्होंने कार्पोरेट और व्यक्तियों को राजनीतिक पार्टियों को योगदान करने का मार्ग खोला था और वे बिना उत्पीड़न या बदले की कार्रवाई के भय से दान दे सकते थे। सरकार का कहना है कि चुनाव बांड योजना से पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ावा मिला, जबकि आलोचकों का तर्क है कि यह वे लक्ष्य पूरे नहीं कर पाई जिनका वादा किया गया था। प्रधानमंत्री ने भी अपने साक्षात्कार में कहा है कि यदि योजना में कोई कमियां थीं तो उनको दूर किया जा सकता था, लेकिन 2014 से पहले कोई एजेंसी यह नहीं पता लगा सकती थी कि किस पार्टी को किसने पैसा दिया। 'चुनाव बांड योजना' के पक्ष-विपक्ष में आए तर्कों को देखते हुए सरकार को इसे नए रूप में पेश करना चाहिए और इस पर सभी राजनीतिक दलों की सहमति बनाने का प्रयास करना चाहिए। लोकतंत्र में चुनाव प्रक्रिया का पारदर्शी और न्यायोचित होना जरूरी है। इसमें चुनाव लड़ने वाले सभी दलों व व्यक्तियों को समान आधार पर काम करने के अवसर प्रदान करना सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। चुनाव खर्च की फाइनेंसिंग में विभिन्न कार्पोरेट घरानों व व्यक्तियों का योगदान पारदर्शी तरीके से सुनिश्चित करने के साथ ही यह सुनिश्चित करना भी जरूरी है कि उनको राज्यों या केन्द्र में सत्तारूढ़ दलों से कोई 'अनुचित लाभ' न प्राप्त हो। इसके लिए सभी राजनीतिक दलों को एक निश्चित समय में सारी जनता को मूलभूत सुविधायें उपलब्ध कराने तथा गरीबी समाप्त करने का वादा करना चाहिए।

नकारात्मक चुनाव प्रचार का दौर

भारत और अमेरिका समेत दुनिया के 64 देशों में चुनाव प्रचार का दौर जारी है। लेकिन वर्तमान समय में नकारात्मक राजनीतिक प्रचार और विज्ञापनों का दौर चल रहा है।

कल्याणी शंकर
(लेखिका, वरिष्ठ पत्रकार हैं)

इस समय दुनिया के 64 देशों में चुनाव प्रचार का मौसम है। इन देशों में भारत, ब्रिटेन तथा यूरोपीय संघ के कई देश शामिल हैं। दुनिया के सभी देशों में राजनीतिक विज्ञापनों का चलन बढ़ता जा रहा है। हालांकि, इस संबंध में देखें तो एक नई राजनीतिक परिघटना का वर्चस्व स्थापित हो रहा है। राजनीतिक पार्टियां और उम्मीदवार अक्सर नकारात्मक विज्ञापन अभियानों का सहारा लेकर स्वयं को दूसरों और अपने प्रमुख राजनीतिक विरोधियों की तुलना में ज्यादा बेहतर प्रदर्शित करने तथा विरोधियों को कमजोर दिखाने के लिए नकारात्मक प्रचार पर ज्यादा जोर दे रहे हैं। हालांकि, राजनीतिक पार्टियां 1828 में अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव के समय से ही नकारात्मक प्रचार का प्रयोग कर रही हैं, पर अब इसमें तेजी आ गई है।

अमेरिकन राजनीतिक इतिहास पर नजर रखने वाले विश्लेषकों का मानना है कि जॉन क्विंसी आडम्स व एंड्रयू जैक्सन के बीच राष्ट्रपति चुनाव का मुकाबला सर्वाधिक नकारात्मक प्रचार से भरा था। 1964 में लिंडन जान्सन ने अपने विरोधी बैरी गोल्डवाटर को बदनाम करने के लिए उस समय रेडियो विज्ञापनों का सहारा लिया था। इन विज्ञापनों में 'डेज़ी एड' नामक विज्ञापन भी शामिल थे। कुछ समय पहले के अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव में चुनाव अभियान तथा राजनीतिक विज्ञापनों पर गौर करें तो स्पष्ट होगा कि पहले की तुलना में नकारात्मक चुनाव अभियान तथा अपने विपक्षी को हर तरीके से नीचा दिखाने के प्रयासों में तेजी आई है।

अमेरिकी राष्ट्रपति उम्मीदवार डोनाल्ड ट्रंप ने अपनी विरोधी हिलेरी क्लिंटन के खिलाफ जो विज्ञापन जारी किए उनका उद्देश्य 2016 के राष्ट्रपति चुनाव में उनकी सार्वजनिक छवि खराब करना था। 2020 के राष्ट्रपति चुनाव में राष्ट्रपति के उम्मीदवारों डोनाल्ड ट्रंप व जो बाइडेन ने नकारात्मक चुनाव अभियान का सहारा लिया था। ट्रंप ने जहां बाइडेन की मानसिक क्षमताओं पर सवाल उठाए थे, वहीं बाइडेन ने ट्रंप द्वारा कोविड-19 वैश्विक महामारी से निपटने के तरीकों और उनके चरित्र पर सवाल उठाए थे। 2024 के वर्तमान चुनाव अभियान में भी नकारात्मक चुनाव प्रचार का दौर जारी है। अमेरिका की तरह यह प्रवृत्ति ब्रिटेन में भी दिखी। कंजरवेटिव पार्टी ने जर्मी कार्बिन को 2019 के ब्रिटिश आम चुनाव में बड़े सुरक्षा खतरे की तरह पेश किया था। इसी प्रकार 2021 में जर्मन संघीय चुनाव में सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी ने आर्मिन लैश्चेट की उन छवियों का प्रयोग किया था जब वे एक बाढ़-प्रभावित क्षेत्र का दौरा करते समय हंस रहे थे।

भारत की स्थितियों पर गौर करें तो स्पष्ट होगा कि 2014 में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के राष्ट्रीय परिदृश्य में उभरने के समय चुनाव अभियानों और विज्ञापनों पर खर्च तथा उनमें तकनीकों के प्रयोग में असाधारण तेजी आई थी। यह प्रवृत्ति बीते वर्षों में और मजबूत हुई है। अब नेताओं को स्वयं को प्रस्तुत करने के लिए, प्रभावी संवाद के लिए तथा प्रभावी भाषण देने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है। यहां तक कि चकाचौंध से यथासंभव दूरी बनाए रखने वाली बसपा सुपीमो मायावती को भी सलाह दी गई थी कि वे चुनाव प्रचार के समय क्या पहनें और क्या नहीं। क्षेत्रीय नेताओं ने भी चुनाव अभियान चलाने के लिए विदेशी एजेंसियों को जिम्मेदारियां सौंपी हैं। उदाहरण के लिए, तमिलनाडु के मुख्यमंत्री एम.के. स्टालिन ने मतदाताओं को प्रभावित करने के लिए जीन्स पहनना और चश्मा लगाना शुरू किया है। पूर्व प्रधानमंत्री और कांग्रेस नेता स्वर्गीय राजीव गांधी को 1989 में नकारात्मक चुनाव प्रचार के कारण हार का सामना करना पड़ा था। उस समय उनके राजनीतिक विरोधी नारा लगाते थे, 'गली गली में शोर है, राजीव गांधी चोर है।' इन नारों का संकेत कथित बोफोर्स तोप घोटाले की ओर था जिसके कारण उनको हार का सामना करना पड़ा था। वर्तमान समय में उम्मीदवार 'हिट फर्स्ट, हिट हार्ड एंड कीप हिटिंग' का दृष्टिकोण अपनाते हैं जिसका अर्थ विपक्षी पर व्यक्ति हमले करना तथा जनता में उसके जीतने पर भय की भावना पैदा करना शामिल है।

सत्ता में दस साल रहने के बावजूद प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी आज भी कांग्रेस को देश की समस्याओं का जिम्मेदार ठहराना जारी रखे हैं। हालांकि, चुनाव आयोग ने उम्मीदवारों के खर्च की सीमा निर्धारित की है, पर अनेक राजनीतिक पार्टियां तथा उम्मीदवार निर्धारित सीमा से बहुत अधिक खर्च करते हैं। वे मतदाताओं का समर्थन प्राप्त करने के लिए फोन, नकदी तथा हवाई वादों का प्रयोग करते हैं। तमिलनाडु के एक निर्दलीय उम्मीदवार ने हर परिवार के लिए एक रोबोट तथा चंद्रमा की यात्रा का वादा तक किया था, लेकिन इसके बावजूद वे चुनाव हार गए थे।

भारत में 2024 के चुनाव में विज्ञापनों पर 2000 करोड़ से 13,000 करोड़ रुपये तक खर्च का अनुमान है। अनुमान है कि राजनीतिक पार्टियां और उनके उम्मीदवार विज्ञापनों पर 14.4 बिलियन डालर तक खर्च कर सकते हैं। यह धनराशि 2029 चुनाव में खर्च धनराशि से दूनी है। ऐसे में सवाल है कि राजनीतिक पार्टियों के उम्मीदवारों को अभियानों के लिए पैसा कहां से मिलता है? आमतौर से कुछ अमीर उम्मीदवार स्वयं इसका खर्च उठाते हैं, जबकि दूसरों के लिए पार्टियां खर्च करती हैं। पार्टियों द्वारा चुनाव पर खर्च की कोई सीमा नहीं है। समय बीतने के साथ काले धन का चुनाव अभियानों पर खर्च में हिस्सा बढ़ता जा रहा है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने पारदर्शिता की कमी के कारण चुनाव बांडों पर प्रतिबंध लगा दिया है। भाजपा को बिके चुनाव बांडों में 57 प्रतिशत या 1.1 बिलियन डालर धनराशि प्राप्त हुई थी, जबकि कांग्रेस को कुल धनराशि का केवल दस प्रतिशत या 188 मिलियन डालर मिला था।

पार्टियां सत्ता में आने के लिए कोई भी तरीका अपनाने को तैयार रहती हैं, पर कुछ अभियान सफल होते हैं जबकि बाकी विफल हो जाते हैं। नकारात्मक अभियानों और विज्ञापनों की प्रभावशीलता उनकी विषयवस्तु, संदर्भ तथा दर्शकों के चरित्र पर निर्भर होती है। प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा 2004 में करोड़ों रुपयों से चलाया 'इंडिया शाइनिंग' अभियान विफल अभियानों का एक उदाहरण है। 2019 में कांग्रेस का 'चौकीदार चोर है' अभियान नारा विफल हो गया था और यही नतीजा राहुल गांधी द्वारा मोदी पर राफेल विमानों की खरीद में तथाकथित घोटाले के आरोपों का निकला था। लेकिन कुछ चुनावों में कांग्रेस पार्टी का 'आम आदमी' अभियान सफल रहा।

2014 में नरेन्द्र मोदी ने स्वयं को एक 'नेशनल ब्रांड' की तरह पेश किया और वे मजबूत राष्ट्रवादी नेता के रूप में उभरे। उन्होंने जनता को लामबंद करने के लिए आधुनिक तकनीकों का प्रयोग किया जिनमें 3डी रैलियां, 'चाय पे चर्चा', साक्षात्कार तथा अभियान यात्रायें शामिल थीं। यू-ट्यूब ने राजनीतिक पार्टियों को 30 सेकेंड के टीवी विज्ञापनों तथा लंबे आनलाइन वीडियो के माध्यम से सक्षम बनाया है। मोदी ने मतदाताओं को आकर्षित करने तथा कांग्रेस पर निशाना लगाने के लिए इन सबका प्रयोग किया। आम आदमी पार्टी-आप 2013 के दिल्ली विधानसभा चुनाव में मजबूती से उभरी। उसने मुहल्ला अभियानों, सोशल मीडिया तथा रेडियो विज्ञापनों का प्रयोग किया था। आज दिल्ली और पंजाब में इस पार्टी की सरकारें हैं। सभी पार्टियों ने 2019 में नकारात्मक राजनीतिक अभियान चलाया था। विपक्ष ने भाजपा के 'हिंदुत्व प्रेरित' कार्यक्रमों का विरोध किया था, लेकिन इसके बावजूद अधिक सीटों के साथ वह सत्ता में वापस आ गई।

नरेन्द्र मोदी 2024 में 400 से अधिक सीटें पाने का प्रयास कर रहे हैं। भाजपा ने एआई-के माध्यम से मोदी अभियान का वीडियो बनाया है। कांग्रेस ने भी डिजिटल तरीके से इस अभियान का मजाक उड़ाया है। कांग्रेस के वीडियो में एक बिजनेसमैन को संसाधनों की चोरी का प्रयास करते दिखाया गया है। चुनाव आयोग के निर्देशों के बावजूद 2024 के चुनाव में नकारात्मक प्रचार तकनीकों का प्रयोग होगा। राजनीतिक पार्टियों और उम्मीदवारों को नकारात्मक अभियान के बजाय सकारात्मक विज्ञापनों पर ध्यान देना चाहिए। इससे लोकतंत्र बचाने तथा चरित्र हनन को रोकने में सहायता मिलेगी। अनेक चुनाव आयुक्तों ने चुनावों की 'राज्य फंडिंग' के सुझाव दिए हैं जिन पर विचार होना चाहिए। अभियानों में सभ्यता और गरिमा बनाए रखना जरूरी है। इससे एक न्यायोचित व सम्मानपूर्ण परिवेश बनाने में आसानी होगी जहां सभी उम्मीदवारों को समान आधार मिलेगा।

ईडी की कार्रवाई से मची राजनीतिक उथल-पुथल

शशांक सौरव
(लेखक, लोक नीति विश्लेषक हैं)

दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल की गिरफ्तारी और विपक्षी दलों को टैक्स नोटिस के बाद दिल्ली में बढ़ते तापमान के साथ राजनीतिक गर्मी भी बढ़ती जा रही है। भारत में राजनीतिक विकास ने जर्मनी, अमेरिका और यहां तक कि संयुक्त राष्ट्र से आलोचना को आमंत्रित किया है, विशेष रूप से दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल की गिरफ्तारी पर, जो भ्रष्टाचार के आरोपों का सामना कर रहे हैं और उनके कई कैबिनेट मंत्री पहले से ही जेल में हैं।

शायद पश्चिमी शक्तियां अभी भी औपनिवेशिक हैंगओवर में हैं और श्रेष्ठता की झूठी भावना रखती हैं और मानती हैं कि वे किसी भी देश के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप कर सकती हैं। शायद अब समय आ गया है कि वे कॉफी की खुशबू को महसूस करें और इक्कीसवीं सदी की वास्तविकताओं से तालमेल बिठाएं। विश्व उन लोगों के लोकतंत्र के उपदेशों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है जिनका लोकतांत्रिक रूप से चुनी हुई सरकारों को गिराने और अपने मतलब के लिए निरंकुश शासनों का साथ देने का ट्रैक रिकॉर्ड है। भारतीय गठबंधन में शामिल राजनीतिक दलों को आयकर (आईटी) नोटिस मिला है और प्रमुख विपक्षी दल कांग्रेस उनमें से एक है। आईटी अधिकारियों को थोड़ी परिपक्वता दिखानी चाहिए और केवल तकनीकी आधार पर नोटिस जारी करने से भारतीय लोकतंत्र को मदद नहीं मिलने वाली है। यदि आईटी अधिकारियों द्वारा अपनाई गई स्थिति को सभी आकलनों पर लागू किया जाता है, तो किसी भी राजनीतिक दल को ढूंढना मुश्किल होगा जो पूरी तरह से अनुपालन करता हो।

कानून के अनुसार तकनीकी आवश्यकताओं के संदर्भ में, आईटी अधिनियम की धारा 13ए प्रत्येक दानकर्ता का विवरण (अर्थात नाम और पता) बनाए रखने की आवश्यकता रखती है और जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 29सी के लिए राजनीतिक दल को फाइल करने की आवश्यकता होती है। ये विवरण भारत निर्वाचन आयोग (ईसीआई) के पास हैं। सभी प्रमुख राजनीतिक दलों द्वारा ईसीआई के पास दायर की गई और उसकी वेबसाइट पर उपलब्ध योगदान रिपोर्ट से पता चलता है कि सभी दलों द्वारा प्रदान किए गए विवरणों में डेटा गुणवत्ता के मुद्दे बने हुए हैं। आईटी अधिकारियों को ईसीआई के पास दाखिल रिटर्न में जमा की गई बातों से परे देखने की जरूरत है और उन्हें इस सवाल का जवाब देना चाहिए कि क्या वास्तव में उनके पास ऐसी कोई जानकारी है जो दानकर्ता की साख स्थापित कर सकती है। आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 13ए में स्पष्ट रूप से प्रावधान है कि रुपये से अधिक का कोई भी दान। दो हजार बैंकिंग चैनलों के माध्यम से प्राप्त होने चाहिए और यदि कोई राजनीतिक दल इस आवश्यकता का अनुपालन करता है, तो यह कर अधिकारियों को बताना है कि जब दान बैंक के माध्यम से आ रहा है तो विवरण की पुष्टि करने में उन्हें किस कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है? मीडिया रिपोर्टों के अनुसार, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (सीपीआई) को आईटी नोटिस मिला है, जिसमें फाइलिंग में अपने पुराने आयकर पैन का हवाला दिया गया है और कर अधिकारियों से सवाल पूछा जाना चाहिए कि करदाता को नोटिस भेजने का वास्तविक इरादा क्या था? इस त्रुटि ने पारदर्शिता के उद्देश्य को कैसे प्रभावित किया है और सीपीआई को पैन को अपडेट करके इस प्रकार की त्रुटि को ठीक करने का अवसर क्यों नहीं प्रदान किया जा सका?

इस देश को ऐसी नौकरशाही की ज़रूरत नहीं है जो खुलेआम चलती रहे और जो लोग मामूली मुद्दों पर उत्पीड़न का बचाव कर रहे हैं उन्हें दीर्घकालिक दृष्टिकोण से सोचना चाहिए। नौकरशाह जनता के प्रति जवाबदेह नहीं हैं लेकिन राजनेताओं को बाबुओं के कार्यों से प्रसारित होने वाले संदेश के प्रति सचेत रहना चाहिए। कांग्रेस, सीपीआई या किसी अन्य राजनीतिक संगठन के कोषाध्यक्ष और पदाधिकारियों की उचित प्रक्रियाओं का पालन नहीं करने के लिए आलोचना की जा सकती है, जहां तक यह आवश्यक विवरण दाखिल करने या आयकर नोटिस का पीछा करने, या आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण के साथ अपील दायर करने से संबंधित है, लेकिन एक के रूप में लोकतंत्र में हमें नौकरशाहों को उनकी सनक और पसंद के अनुसार दिखावा करने की खुली छूट नहीं देनी चाहिए।

हालाँकि लोगों की याददाश्त बहुत कमज़ोर है, मैं आपको भाजपा और कांग्रेस दोनों को बचाने के लिए विदेशी अंशदान विनियमन अधिनियम (एफसीआरए), 1976 में किए गए पूर्वव्यापी संशोधन की याद दिलाना चाहूँगा। 2014 में, दिल्ली उच्च न्यायालय ने भाजपा और कांग्रेस दोनों को एफसीआरए के उल्लंघन में विदेशी योगदान प्राप्त करने का दोषी पाया और इसलिए कानून में पहली बार 2016 में संशोधन किया गया और 2018 में एक और संशोधन के माध्यम से एफसीआरए, 1976 की स्थापना के बाद से पूर्वव्यापी रूप से लागू किया गया। यह मुद्दा तकनीकी भी था प्रकृति में और वर्तमान आयकर मुद्दा भी तकनीकी प्रकृति का है। हम दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र हैं और ऐसे मामलों से पता चलता है कि कर अधिकारियों का अपने आकाओं को खुश करने के लिए अति उत्साह अच्छा नहीं है।

एजेंसियों के पास बहुत सारे मामले लंबित हैं और उनसे कहा जाना चाहिए कि वे चर्चा के लिए नए विषय लाने के बजाय उन पर ध्यान केंद्रित करें जो अनावश्यक शोर पैदा करते हैं और जिनका कोई व्यावहारिक मूल्य नहीं है। हल्के ढंग से कहें तो, अब अनुभवी राजनेता समझ गए होंगे कि देश का आम आदमी कैसा महसूस करता है जब उसे तुच्छ आधारों पर कर नोटिस मिलते हैं जो रद्द हो जाते हैं लेकिन लंबी अपीलीय प्रक्रिया के बाद ही।

आप की बात

चुनाव प्रचार का तरीका

मिजोरम में मिजोरम पीपुल्स फोरम ने सभी राजनीतिक दलों उम्मीदवारों के लिए प्रेरणादायक निर्देश देते हुए पोस्टर लगाने और माइक का इस्तेमाल करने पर रोक लगा दी है। इसके बजाय मिज़ोरम के सभी क्षेत्रों में उम्मीदवारों के लिए डिबेट आयोजित की जाती है। इसमें प्रत्येक उम्मीदवार को अपनी बात रखने के लिए 20 मिनट दिए जाते हैं। चुनाव संपन्न होने तक समय-समय पर यह प्रक्रिया चलती रहती है। पीपुल्स फोरम के निर्देशों के खिलाफजाकर धन खर्च करने वाले उम्मीदवारों का मिजोरम की जनता बहिष्कार कर देती है । इस कारण कोई भी राजनीतिक दल या उम्मीदवार उसके खिलाफ नहीं जाता है। इस प्रकार चुनाव में खर्च होने वाली बड़ी धनराशि के बचत हो जाती है। मिजोरम का यह उदाहरण आदर्श चुनाव प्रचार का तरीका है जिसमें जनता को अपने स्थानीय मुद्दों पर विभिन्न राजनीतिक दलों के उम्मीदवारों की बातें सुनने का अवसर मिलता है। हालांकि, मिजोरम छोटा राज्य है जहां ऐसी बैठकें ज्यादा व्यावहारिक हैं। राष्ट्रीय स्तर पर भी वरिष्ठ और निष्पक्ष पत्रकारों, राजनीतिक विश्लेषकों व अर्थशास्त्रियों की अध्यक्षता में विभिन्न विषयों पर प्रमुख राजनीतिक दलों की बहस आयोजित की जा सकती है। यह चुनाव प्रचार का नया तरीका हो सकता है।

–**सुभाष बुडावन वाला,** रतलाम

कश्मीर की असलियत

शहबाज शरीफ ने संसद में दिए भाषण में कहा कि भारत कश्मीर में मानवाधिकार का उल्लंघन कर रहा है, भारतीय सेना आम जनता के साथ सौतेला व्यवहार कर रही है, उसके जुल्मोसितम से सब कश्मीरी दुखी है, आज कश्मीर की स्थिति गाजा पट्टी की तरह हो गई है तथा जनता दाने-दाने को मोहताज है। ऐसा झूठा भाषण देकर उन्होंने अपनी सरकार को भारतीय कश्मीरी जनता का हमदर्द बताने की कोशिश की है। पाक-अधिकृत कश्मीर-पीओके के बड़े नेता अमजद अयूब मिर्जा ने कहा है कि भारतीय कश्मीर में आज पाकिस्तानी कश्मीर से भी ज्यादा सुखी एवं खुशहाल जनता रहती है, आज वहां कोई भूखा नहीं सोता है तथा सेना का व्यवहार आम जनता के साथ दोस्ताना है। इसके उलट पीओके में पाकिस्तानी सेना जनता के साथ तानाशाह की तरह व्यवहार करती है। आज सबसे ज्यादा महंगाई पीओके में है जबकि भारतीय कश्मीर में आज हर तरफ़ काफी खुशहाली है। अनुच्छेद 370 हटने के बाद जम्मू कश्मीर में जो अभूतपूर्व व असाधारण परिवर्तन आया है, वह पाकिस्तानी जनता से भी छिपा नहीं है। ऐसे में शहबाज शरीफ जैसे नेताओं के भारत-विरोधी बयान बेअसर होते जा रहे हैं और पीओके के लोग भी भारत में शामिल होना चाहते हैं।

– **एमएम राजावत,** शाजापुर

विचित्र फैसला

तेलंगाना हाईकोर्ट ने राष्ट्रीय सुरक्षा जांच एजेंसी-एनआईए द्वारा आरोपी की गिरफ्तारी अवधि बढ़ने से इनकार करते हुए कहा कि किसी भी व्यक्ति द्वारा सवालों के जवाब न देना या चुप रह जाना उसका मौलिक अधिकार है। हाईकोर्ट का यह फैसला विचित्र लगता है। यदि अपराधी अपना अपराध छुपाने के लिए जांच एजेंसी के प्रश्नों के जवाब नहीं देगा और मौन धारण कर लेगा तो फिर उसके अपराधों के लिए सबूत कैसे जूटाए जाएंगे? यह फैसला प्रकारान्तर से जांच एजेंसियों को दी गई शक्तियों का मजाक उड़ाने वाला लगता है जिससे अपराधियों के हौसले बुलंद हो सकते हैं। हालांकि, आदर्श रूप से माना जाता है कि किसी व्यक्ति को अपने खिलाफ सबूत देने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है, पर इसकी एक सीमा है। दुनिया में बढ़ती आतंकी घटनाओं, तकनीकों का प्रयोग कर आर्थिक अपराध करने वालों तथा देशद्रोहियों को इस प्रकार की छूट नहीं दी जा सकती है। तेलंगाना हाईकोर्ट के इस फैसले के व्यापक विश्लेषण तथा मामले के तथ्यों पर गौर करते हुए आवश्यकता होने पर सरकार व एनआईए को पुनर्विचार के लिए उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय में अपील करनी चाहिए।

– **विभूति बुपक्या,** खाचरोद

रक्षा निर्यात में वृद्धि

केन्द्र सरकार द्वारा जारी 2023-24 रक्षा निर्यात आंकड़ों ने समस्त देशवासियों को गौरवान्वित किया है। कुछ साल पहले तक भारत अपनी सामरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विदेशी कंपनियों पर निर्भर रहता था जिसका नुकसान अर्थव्यवस्था को होता था। आज भारत ने 84 देशों को 21,000 करोड़ से भी अधिक के सैन्य उपकरणों का निर्यात कर समूचे विश्व को आश्चर्यचकित कर दिया है। स्वतन्त्रता के बाद किसी एक वित्त वर्ष में रक्षा निर्यात में सर्वाधिक 32.5 प्रतिशत की वृद्धि है भारत जैसे विकासशील देश के लिए एक उपलब्धि है। इतना बड़ा लक्ष्य हासिल करने का श्रेय निश्चित रूप से केन्द्र सरकार के साथ ही भारतीय वैज्ञानिकों व उन कम्पनियों में काम करने वाले कामगारों को भी जाता है जिन्होंने दिन रात एक कर यह लक्ष्य प्राप्त किया। रक्षा सामग्री के निर्यात में बढ़ोत्तरी के साथ ही भारतीय सेनायें आज अधिकाधिक स्वदेशी आयुध प्रणालियों का प्रयोग कर रही हैं। रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने इसे भारतीय सशस्त्र बलों की रक्षा उपकरणों के मामले में पूर्ण आत्मनिर्भरता की दिशा में एक कदम बताया है।

– **पारस जैन,** मेरठ

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से
responsemail.hindipioneer@gmail.com
पर भी भेज सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 17 अंक 40

यथास्थिति से परे

भारतीय रिजर्व बैंक की छह सदस्यीय मौद्रिक नीति समिति (एमपीसी) की 2024-25 की पहली बैठक अनुकूल आर्थिक माहौल में होने जा रही है। सोमवार को जारी किए गए आंकड़े दर्शाते हैं कि मार्च में वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) का संग्रह, रिफंड के बिना सालाना आधार पर 18.4 फीसदी बढ़ा। वर्ष का अंत जीएसटी संग्रह में 13.4 फीसदी इजाफे के साथ हुआ। समग्र कर संग्रह के ताजा उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार देखें तो सरकार राजकोषीय घाटे को 2023-24 में सकल घरेलू उत्पाद के 5.8 फीसदी तक रखने के संशोधित आंकड़े को हासिल कर लेगी। सरकार ने मध्यम अवधि में राजकोषीय मार्ग पर टिके रहने की अपनी प्रतिबद्धता दोहराई है जिससे रिजर्व बैंक को आश्वस्ति मिलनी चाहिए। अधिक व्यापक तौर पर देखें तो अब सरकार को उम्मीद है कि मार्च तिमाही में वृद्धि दर 8 फीसदी रहेगी जो 2023-24 की पूरे वर्ष की 8 फीसदी की वृद्धि को बल देगी।

मुद्रास्फीति के मोर्चे पर भी हालात में सुधार हो रहा है। हेडलाइन खुदरा मुद्रास्फीति अभी भी 5 फीसदी के स्तर से कुछ ऊपर है, कोर मुद्रास्फीति 4 फीसदी के लक्ष्य से कम है जिससे केंद्रीय बैंक को राहत मिलनी चाहिए। मौद्रिक नीति समिति के ताजा अनुमानों के मुताबिक हेडलाइन मुद्रास्फीति की दर चालू वित्त वर्ष में औसतन 4.5 फीसदी रह सकती है। कोर मुद्रास्फीति जहां चार फीसदी से नीचे हैं, वहीं हेडलाइन दर को लक्ष्य से ऊपर रखने में खाद्य मुद्रास्फीति का बहुत अधिक योगदान है। फरवरी में खाद्य मुद्रास्फीति 8.66 फीसदी थी। ध्यान देने की बात है कि खाद्य मुद्रास्फीति ऊपरी स्तर पर है और ऐसा सरकार के सक्रिय हस्तक्षेप के बावजूद है। केंद्र सरकार ने कई खाद्य वस्तुओं के निर्यात और भंडारण सीमा पर अंकुश लगाया है। उदाहरण के लिए गत सप्ताह सरकार ने कारोबारियों, खाद्य प्रसंस्करण करने वालों तथा प्रमुख खुदरा कारोबारियों से कहा कि वे हर शुक्रवार को गेहूं के अपने भंडार की जानकारी दें क्योंकि 31 मार्च को स्टॉक होल्डिंग सीमा समाप्त हो गई। व्यापार और स्टॉक होल्डिंग पर प्रतिबंध अल्पावधि में मुद्रास्फीति को सीमित रखने में मदद कर सकते हैं लेकिन यह रुख उत्पादन तथा दीर्घावधि में अनाज की उपलब्धता को प्रभावित कर सकता है।

बहरहाल अगर मुद्रास्फीति की दर एमपीसी के अनुमान के अनुसार बढ़ती है और चालू वित्त वर्ष में औसतन 4.5 फीसदी रहती है तो वास्तविक नीतिगत रीपो दर दो फीसदी होगी जिसे ऊंचा माना जा सकता है और यह वृद्धि को प्रभावित कर सकती है। जैसा कि मौद्रिक नीति समिति के एक सदस्य जयंत आर वर्मा ने पिछली बैठक में कहा था, 'दो फीसदी की वास्तविक ब्याज दर से यह जोखिम पैदा होता है कि वृद्धि को लेकर निराशा का भाव कहीं सही साबित न हो जाए।'

ऐसे में क्या मौद्रिक नीति समिति को नीतिगत दरों में कटौती पर विचार करना चाहिए.? जैसा कि अधिकांश बाजार प्रतिभागियों का अनुमान है, इस मुकाम पर यथास्थिति बरकरार रखना समझदारी भरा होगा और इसकी कम से कम तीन मजबूत वजह हैं। पहला, देश में आम चुनाव हो रहे हैं और ऐसे में प्रतीक्षा करना उचित होगा। दूसरा, कोर मुद्रास्फीति जहां सहज स्तर पर है, वहीं हेडलाइन दर खाद्य महंगाई के कारण लक्ष्य से काफी ऊपर है और वह अस्थिरता ला सकती है। तीसरा, अमेरिकी फेडरल रिजर्व ने संकेत दिया है कि वह इस वर्ष नीतिगत दरों में कटौती करेगा लेकिन यह देखना होगा कि आने वाले महीनों में हालात कैसे बनते हैं।

यह बात बाहरी स्थिरता के नजरिये से भी महत्त्वपूर्ण है जिसमें हाल के दिनों में उल्लेखनीय मजबूती आई है। कुल मिलाकर चूंकि फिलहाल वृद्धि को लेकर कोई चिंता की बात नहीं है इसलिए मौद्रिक नीति समिति प्रतीक्षा कर सकती है और अपस्फीति की प्रक्रिया को पूरा होने दे सकती है।

डेटा मुद्रीकरण की संभावना और भारत की भूमिका

भारत के पास यह अवसर है कि वह बड़ी प्रौद्योगिकी कंपनियों द्वारा लोगों के डेटा के इस्तेमाल के बदले उन्हें कुछ राशि देने या पुरस्कृत करने की मांग करे। बता रहे हैं अजय कुमार

डेटा तेल की तरह का संसाधन है बल्कि यह तेल से भी कहीं अधिक मूल्यवान साबित हो सकता है। तेल के उलट डेटा एक ऐसा संसाधन है जिसका इस्तेमाल कई उपयोगकर्ता कर सकते हैं और उसकी आपूर्ति पर भी कोई असर नहीं पड़ता। इसके मूल्य में भी अक्सर कोई कमी नहीं आती।

इतिहास की बात करें तो ऐसे मॉडल सामने आए हैं जिनकी मदद से डेटा से मूल्य हासिल किया गया। शुरुआत में डेटा का मूल्य अल्जेब्रिक समीकरणों के भीतर उनके इस्तेमाल में निहित था। यह तकनीकी युग के पहले की बात है। सॉफ्टवेयर के आगमन के बाद डेटा विश्लेषण और अधिक परिष्कृत हो गया। इससे बड़ी तादाद में डेटा का तत्काल प्रसंस्करण करना संभव हो गया। तकनीक ने समय पर प्रबंधन संभव बनाया और डेटा का मूल्य और बढ़ गया। इसके बावजूद इन मॉडल में ज्यादातर मौजूदा कारोबारी गतिविधियों को ही शामिल किया गया।

बहरहाल, उस समय एक बड़ा बदलाव आया जब डेटा खुद कारोबारों का आधार बन गया। इस बदलाव में गूगल की अहम भूमिका रही और उसने डेटा को कच्चे माल और उत्पाद दोनों ही रूपों में इस्तेमाल किया तथा लाखों करोड़ डॉलर का उपक्रम खड़ा किया। इसके बाद डेटा आधारित कारोबार के अन्य विकल्प सामने आने लगे मसलन बिज़नेस इंटेलिजेंस और डेटा मार्केट प्लेस आदि। एमेजॉन जैसी कंपनियों ने एक और बड़ा बदलाव पैदा किया। उन्होंने न केवल ऑनलाइन कॉमर्स में क्रांतिकारी बदलाव उत्पन्न किए बल्कि डेटा को मूल कारोबारों से अलग करने की क्षमता भी दिखाई। इससे प्लेटफॉर्म आधारित अर्थव्यवस्था उभरी जहां कारोबार उपयोगकर्ताओं के डेटा का इस्तेमाल एक अलग और मूल्यवान पेशकश के लिए किया गया। प्लेटफॉर्म मॉडल अक्सर मूल कारोबार से बड़े हो जाते हैं। इसके बावजूद डेटा आधारित एक नया कारोबार सामने आया- सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म।

इस मॉडल के लिए दुनिया फैक्टरी थी और लोग उसके श्रमिक हैं जो उनके मूल्यवर्द्धन के लिए डेटा तैयार करते हैं। इन सभी मॉडल ने इस धारणा को मजबूत किया कि अगर कुछ मुफ्त मिल रहा है तो दरअसल आप ही उत्पाद हैं। डेटा से लाभान्वित हो रहा सबसे नया कारोबारी मॉडल है आर्टिफिशल इंटेलिजेंस यानी एआई। एआई ने अपने मॉडल को प्रशिक्षित करने के लिए डेटा का इस्तेमाल किया।

गूगल और मेटा जैसी कंपनियों का भारी भरकम बाजार पूंजीकरण व्यक्तिगत उपयोगकर्ताओं के डेटा के मूल्य को रेखांकित करता है। इससे प्रश्न उत्पन्न होता है कि व्यक्तिगत डेटा का मूल्य क्या है? अल्फाबेट (गूगल की मूल कंपनी) का मूल्यांकन 1.75 लाख करोड़ डॉलर है। पांच अरब उपयोगकर्ताओं के हिसाब से देखें तो यह करीब 350 डॉलर प्रति व्यक्ति निकलती है। मेटा (फेसबुक, व्हाट्सऐप, इंस्टाग्राम, मेसेंजर) का बाजार पूंजीकरण 1.25 लाख करोड़ डॉलर है। उसके 3.98 अरब डॉलर उपयोगकर्ताओं के अनुसार देखें तो यह राशि 250 डॉलर निकलती है। एमेजॉन के पास एक करोड़ विक्रेता और 30 करोड़ से अधिक खरीदार हैं। उसका बाजार पूंजीकरण 1.85 लाख करोड़ रुपये का है। हमें ओपन एआई को भी नहीं भुलाना चाहिए जो पहले ही 100 अरब डॉलर की कंपनी हैं जिसने इंटरनेट उपयोगकर्ताओं के डेटा पर अपना साम्राज्य खड़ा किया है। इन सभी मामलों में डेटा उपयोगकर्ता यानी बड़ी टेक कंपनियों ने उपयोगकर्ताओं के आंकड़ों का लाभ लिया। इसके बावजूद उन लोगो को कुछ नहीं मिला जिनके आंकड़े इस्तेमाल किए गए। ऐसा तब है जबकि व्यक्तिगत डेटा पर नियंत्रण को लेकर जोर बढ़ा है।

इस उभरते रुझान के बीच भारत को लेकर भी अध्ययन किया जा सकता है। भारत में भारी-भरकम डिजिटल आबादी है जो दुनिया के कुल डेटा का करीब 20 फीसदी तैयार करती है। यह डेटा बहुत मूल्यवान है क्योंकि इसमें बहुत अधिक विविधता है क्योंकि भारत अभी एक युवा देश है। सर्वोच्च न्यायालय ने 2017 में पुट्टास्वामी और भारत सरकार मामले में निजता को मूल अधिकार माना था। डिजिटल पर्सनल डेटा प्रोटेक्शन ऐक्ट, 2023 ने इसे अधिक कानूनी मजबूती प्रदान की। इसके तहत लोगों को उनके निजी डेटा पर नियंत्रण दिया गया। भारत के कानूनी ढांचे और विस्तृत डेटा को देखते हुए वह निजी डेटा मुद्रीकरण के लिए एकदम मुफीद देश है।

अकाउंट एग्रीगेटर सिस्टम यानी एए सिस्टम में भारत अग्रणी है और यह उन शुरुआती पहलों में से है जिन्होंने दुनिया में डेटा पर होने वाली बातचीत को बदल दिया। इसकी शुरुआत 2015 में हुई जब अरुण जेटली के नेतृत्व वाली वित्तीय स्थिरता विकास परिषद ने यूनीफाइड डेटा-साझेदारी व्यवस्था की परिकल्पना की जो विभिन्न संस्थानों के वित्तीय डेटा से संबद्ध थी। एए का काम एकदम सामान्य है- वित्तीय डेटा को एक स्थान से दूसरे स्थान तक सुरक्षित और प्रभावी ढंग से पहुंचाना और वह भी स्पष्ट मंजूरी के साथ। यह क्रांतिकारी ढांचा उपयोगकर्ता को अधिकार देता है कि वे अपनी वित्तीय जानकारी को सुरक्षित तरीके से उन संस्थानों को दे सकें जो उन्हें ऋण, निवेश आदि पर बेहतर पेशकश करते हैं। यह सब गोपनीयता के बरकरार रहते हो सकता है। उदाहरण के लिए ये एए छोटे कारोबारों को नकदी प्रवाह के आधार पर कार्यशील पूंजी सुनिश्चित करते हैं। एक छोटा सा सब्जी विक्रेता जो थोक में सब्जी खरीदकर दिन भर उसे आसपास के मोहल्ले में बेचता है वह साहूकारों से कर्ज लेता है। उसे औसतन एक से दो फीसदी रोजाना ब्याज चुकाना पड़ता है। नई व्यवस्था में एए उन्हें बैंक की दर के मुताबिक ऋण दे सकती हैं।

भारतीय एए जगत में 500 से अधिक कंपनियां हैं और छह करोड़ से अधिक कंपनियां इससे जुड़ी हैं। सहमति नामक एक गैर लाभकारी औद्योगिक संस्था सुरक्षित डेटा साझेदारी के मानक तय करती है, बैंकों, फिनटेक कंपनियों और नीति निर्माताओं के बीच सहयोग करवाती है और उपयोगकर्ताओं को व्यवस्था के लाभों से अवगत कराती है। एए व्यवस्था लोगों को यह अधिकार प्रदान करती है कि वे अपने डेटा का क्या करें। उपयोगकर्ताओं के डेटा को स्पष्ट सहमति के साथ साझा किया जाता है। एए व्यवस्था अभी नई है लेकिन शुरुआती संकेत तो सकारात्मक ही हैं। करीब एक महीने में 50 लाख नए खाते जुड़ रहे हैं और लगभग इतनी ही संख्या में सहमति के अनुरोध प्राप्त हो रहे हैं। सहमति का अनुमान है कि 2027 तक सहमति का आंकड़ा सालाना 5 अरब हो जाएगा यानी मौजूदा स्तर से 100 गुना। यह तेज वृद्धि बताती है कि डेटा अर्थव्यवस्था में बुनियादी बदलाव आ रहा है। अब लोग अपने डेटा पर नियंत्रण रख सकते हैं और उससे लाभ हासिल कर सकते हैं।

एए प्रणाली न केवल वित्तीय क्षेत्र के लिए बल्कि अन्य क्षेत्रों के लिए भी कारगर हो सकती है। कल्पना कीजिए कि कोई किसान है जो बीजों की गुणवत्ता, मिट्टी और कीटनाशकों को लेकर डेटा साझा कर सकता है ताकि बेहतर कीमत मिल सके। कोई मरीज अपने पुराने मेडिकल रिकॉर्ड साझा करके बेहतर चिकित्सा पा सकता है।

एए प्रणाली दुनिया में पहली ऐसी व्यवस्था है जिसने लोगों और छोटे कारोबारियों को यह अवसर दिया है कि वे अपने डेटा को अपने लाभ के लिए इस्तेमाल कर सकें। ओपन एपीआई आधारित व्यवस्था होने के कारण यह प्रवेश की कृत्रिम बाधाओं को कम करता है तथा व्यवस्था को पहुंच योग्य, लचीला, समावेशी और गैर भेदभावकारी बनाता है। दुनिया ऐसी व्यवस्था की तलाश में है जहां लोगों के डेटा का इस्तेमाल उन्हें अधिकारसंपन्न बनाया जा सके। ऐसे में एए प्रणाली समस्या का हल हो सकती है। यह भारत में निर्मित और क्रियान्वित हुआ है। भारत के पास अवसर है कि वह डेटा सशक्तीकरण और नवाचार को लेकर वैश्विक वार्ता का नेतृत्व कर सके।

(लेखक भारत के पूर्व रक्षा सचिव और आईआईटी कानपुर के विशिष्ट अतिथि प्राध्यापक हैं)

कल आपके शहर की भी हो सकती है बेंगलूरु जैसी हालत

कुछ साल पहले बेंगलूरु में 'इक्सक्रीटा मैटर्स' पर हमारी रिपोर्ट जारी करते समय, मैं शहर के जल और गंदे नाली के पानी का प्रबंधन करने वालों के साथ एक जोश से भरी चर्चा में शामिल हुई थी। इस चर्चा का मुद्दा शहर में जल प्रबंधन का ढांचा था जो हमारे शोध के अनुसार किफायती और टिकाऊ नहीं था। हालांकि इंजीनियर इस बात से असहमत थे।

उनके अनुसार वे पाइपलाइनों के माध्यम से लगभग 100 किलोमीटर दूर से कावेरी नदी का पानी प्राप्त करने में सफल रहे थे और इसलिए उनके पास चिंता करने का कोई कारण नहीं था। उनका मानना था कि उन्होंने सब कुछ अपने नियंत्रण में कर रखा है। अब जब यह अत्याधुनिक तकनीक वाला शहर गंभीर जल संकट की ओर बढ़ रहा है, ऐसे में संभव है कि ये लोग फिर से अपने विकल्पों पर पुनर्विचार करने के साथ ही उस पर आगे दोबारा काम करें। तथ्य है कि अन्य शहरों की तरह ही बेंगलूरु भी एक ऐसा ही शहर है जिसे आईना देखने के लिए मजबूर होना पड़ रहा है कि अधिक लागत वाले इंजीनियरिंग समाधानों वाली बेहतर जल आपूर्ति का सपना किस तरह गलत है। जलवायु से जुड़े जोखिम वाले इस दौर में यह स्थिति और खराब होने वाली है क्योंकि अब बारिश अधिक चरम स्तर पर होने के साथ ही अधिक परिवर्तनशील हो जाएगी।

पहले बेंगलूरु को झीलों के विशाल नेटवर्क से पानी की आपूर्ति मिलती थी जो बारिश का पानी इकट्ठा करने और बाढ़ कम करने के लिए विशेषतौर पर बनाया गया था। इसके बाद फिर इस खोज का विस्तार हुआ। इसकी पहली आधिकारिक जल आपूर्ति प्रणाली, शहर से लगभग 18-20 किमी दूर अर्कवती नदी पर हेसरघट्टा झील से जुड़ी थी और इससे आगे यह 35-40 किमी दूर टीजी हल्ली जलाशय से जुड़ी थी।

लेकिन यह सब पर्याप्त नहीं था और 1974 के आसपास महत्त्वाकांक्षी कावेरी जल आपूर्ति योजना की परिकल्पना की गई थी जिसके तहत पानी को लगभग 490 मीटर की ऊंचाई तक पंप करने की योजना थी और इसे 100 किमी से अधिक दूर ले जाने की बात भी थी। जब मैंने शहर के इंजीनियरों से बात की तो वे इस चमत्कारिक इंजीनियरिंग परियोजना के चौथे चरण में थे और जैसा कि मैंने कहा, उन्हें इसमें चिंता करने का कोई कारण नहीं दिखता था। मैंने लगभग एक दशक पहले, लंबी दूरी तक पानी पहुंचाने की लागत के बारे में बात की थी। शहर को पानी पहुंचाने के लिए पहले से ही बहुत ज्यादा बिजली की जरूरत थी, जिससे शहर के जल और सीवर बोर्ड की पहले से ही कमजोर आर्थिक स्थिति और खराब हो रही थी।

जैसे-जैसे दूरी बढ़ती गई, वैसे-वैसे पानी की बरबादी की मात्रा भी बढ़ती गई। आधिकारिक सूत्रों के मुताबिक एक दशक पहले तक यह लगभग 40 प्रतिशत थी। इसका मतलब यह हुआ कि लोगों के लिए पानी की आपूर्ति की लागत बढ़ रही थी और वित्तीय स्थिति अनिश्चित थी। लेकिन ऊपरी स्तर पर सब ठीक था। शहर ने अपने नागरिकों के लिए शत-प्रतिशत जल आपूर्ति का दावा किया और यह संकेत भी दिए कि समस्याएं चाहें जो भी हों लेकिन कावेरी के चौथे चरण के तहत इन्हें सुलझा लिया जाएगा। मैंने उनका ध्यान कुछ तथ्यों की ओर दिलाया जिनको लेकर वह गंभीर नहीं थे। पहला, यह कि शहर और उसके आसपास के इलाकों में भूजल का उपयोग बढ़ रहा था जिससे यह साफ पता चल रहा था कि जलापूर्ति की स्थिति उतनी ठीक नहीं है जितना दिखाया जा रहा था। दूसरा, यह कि शहर का तेजी से विस्तार हो रहा था और इस विस्तार की रफ्तार के साथ ही जल और जल निकासी के बुनियादी ढांचे का तैयार होना असंभव था और यह इस वृद्धि के साथ तालमेल नहीं रख पाएगा। तीसरी, सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि गंदे पानी का उपचार नहीं किया जा रहा था जिसके चलते झीलों और झरने के जाल में प्रदूषण बढ़ रहा था। हालांकि, इंजीनियर भविष्य को लेकर आशावादी थे। उन्होंने दावा किया कि उन्होंने हर उपलब्ध तकनीक का उपयोग करके पहले ही रोजाना 72 करोड़ लीटर गंदे पानी की उपचार क्षमता तैयार कर ली है और इससे वे तकनीकी रूप से लगभग सभी तरह के गंदे पानी का उपचार करने में सक्षम होंगे। लेकिन जब मैंने बताया कि आधी से भी कम क्षमता का उपयोग किया जा रहा है तब उन्होंने मुझसे कहा कि यह कुछ समय की बात है और जल्द ही पाइपलाइन नेटवर्क का विस्तार होगा और सब ठीक हो जाएगा।

सुनीता नारायण

अब आइए आज की स्थिति पर नजर डालते हैं। वर्ष 2010 में, शहर की पानी की आवश्यकता लगभग 112.5 करोड़ लीटर प्रतिदिन आंकी गई थी जो अब दोगुने से भी ज्यादा बढ़कर 260.0 करोड़ लीटर प्रतिदिन हो चुकी है और कावेरी अब भी आधी जल की आपूर्ति करती है और बाकी जल की आपूर्ति अब भी भूजल के माध्यम से होती है। दूसरे शब्दों में, मांग में आई तेजी के मुकाबले आपूर्ति कम ही रही है और ऐसे में लोगों के पास पानी की आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए गहरी खुदाई करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा है। बारिश की अनियमितता बढ़ने के साथ, ये स्रोत तेजी से सूख रहे हैं। लेकिन पाइपलाइन के सपने दिखाने और उसे बेचने वाले इस संकट को नहीं समझ पाए हैं। शहर के मुख्य जल प्रबंधक अब कावेरी परियोजना के पांचवें चरण पर दांव लगा रहे हैं और उनका कहना है कि इसकी शुरुआत बहुत जल्द हो जाएगी और इससे पानी से जुड़ी सभी चिंताएं दूर हो जाएंगी।

जहां तक गंदे पानी और मल आदि का सवाल है इसकी कहानी भी कुछ ऐसी ही है और इसका बुनियादी ढांचा दोगुने से भी ज्यादा हो गया। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की वर्ष 2021 की इन्वेंट्री के अनुसार, शहर में अब रोजाना 166.8 करोड़ लीटर गंदे पानी की उपचार क्षमता है और रोजाना 42.5 करोड़ लीटर की उपचार क्षमता निर्माणाधीन है। लेकिन इसका क्षमता उपयोग 50 प्रतिशत के स्तर पर स्थिर है, यानी दूसरे शब्दों में कहा जाए तो अधिक गंदे पानी आदि को रोका जा रहा है। लेकिन पानी की जरूरत दोगुनी होने के साथ ही गंदे पानी आदि की मात्रा भी बढ़ गई है और अधिकांश गंदे पानी को रोका नहीं जा पा रहा है और न ही इसका उपचार किया जा रहा है। लेकिन, आप इंजीनियरों से बात करें तो वे आपको बताएंगे कि यह सिर्फ समय की बात है और सब ठीक हो जाएगा। सभी घर जुड़ जाएंगे, गंदे पानी को रोका जाएगा और इसे उपचार संयंत्रों में ले जाकर फिर नदियों में स्वच्छ पानी बहाया जाएगा जो चमत्कारिक तरीके से बदला हुआ होगा।

यही हमारी जल से जुड़ी योजना की असली समस्या है। हम यह समझने में असमर्थ हैं कि पानी और कचरे से जुड़े इस पूरे कारोबार में बदलाव लाने की कितनी जरूरत है और इसमें कितना अवसर है। इस व्यवस्था बेहतरी के लिए रोकने की जरूरत है। सच तो यह है कि बेंगलूरु में पर्याप्त बारिश होती है और यहां कई झीलें हैं जो इस पानी को फिर से जमीन के नीचे तक पहुंचा सकती हैं। ऐसे में हमारा भूजल सुरक्षित हो सकता है। अगर ऐसा हो तब भारी बारिश के समय भी शहर के अमीर और प्रभावशाली लोगों को बाढ़ में डूबने से बचने के लिए तैरना नहीं पड़ेगा। बारिश की हर बूंद का इस्तेमाल सूखा पड़ने दौर में किया जा सकता है।

तब शहर अपने गंदे पानी की निकासी वाली प्रणाली का प्रबंधन अलग तरीके से कर सकता है। पाइपलाइनों के जरिये गंदा पानी ले जाने पर भरोसा करने के बजाय, यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि गंदे पानी और मल का हर एक बूंद टैंकरों द्वारा इकट्ठा किया जाए और फिर इसका उपचार करने के बाद इसे झील के बुनियादी ढांचे में डाला जाए और फिर से इसका इस्तेमाल किया जाए। लेकिन इसके लिए जल इंजीनियरों को जमीनी हकीकत को समझना होगा और उन्हें भविष्य के लिए जल प्रबंधन पर पुनर्विचार करना होगा। यह सिर्फ बेंगलूरु की कहानी नहीं है। यह स्थिति आज भले ही उनकी है लेकिन ऐसी स्थिति कल आपके सामने भी बन सकती है।

(लेखिका सेंटर फॉर साइंस ऐंड एनवायरनमेंट से संबद्ध हैं)

आपका पक्ष

मेडिकल पेशे के लोग अपने दायित्वों का निर्वहन करें

नकली दवाओं के कारोबार पर अंकुश लगाने के वास्ते हर राज्य की इंडियन मेडिकल एसोसिएशन (आईएमए) इकाई को रोगियों के हितों का ध्यान रखने के लिए एक हेल्पलाइन शुरू करनी चाहिए, जिससे गलत काम करने वाली फार्मा कंपनियों को ब्लैक लिस्टेड कर कठोर कार्रवाई की जा सके। सरकार को दोषियों के विरुद्ध लाइसेंस का निरस्तीकरण, सश्रम कारावास, आर्थिक दंड देने के इस तरह के कड़े नियम बनाने चाहिए कि जिससे रोगी के हित सुरक्षित रहें। प्रमुख जीवन रक्षक दवाइयों का भली-भांति परीक्षण कर, उन्हें सरकारी अस्पतालों से ही निःशुल्क प्रदान किया जाए तो नकली दवाओं का बाजार पनप नहीं पाएगा। मेडिकल पेशे से जुड़े सभी पेशेवर अपने दायित्वों का निर्वाह बेहतर तरीके से करें। तभी अवैध धंधे प्रतिबंधित हो सकेंगे और मरीजों का वह विश्वास फिर से स्थापित हो सकेगा, जो आज घटता जा रहा है। घटिया, अमानक व नकली दावों की बिक्री पर अंकुश लगाने के लिए केंद्र सरकार को सर्वप्रथम बारकोड प्रणाली अपनाने पर जोर देना चाहिए।

सुधीर कुमार सोमानी, देवास

घटिया, अमानक व नकली दावों की बिक्री पर अंकुश लगाने के लिए केंद्र सरकार को बारकोड प्रणाली अपनाने पर जोर देना चाहिए

ग्लोबल वार्मिंग के लिए गंभीरता से चिंतन करे दुनिया

इस बार गर्मियों के मौसम में ज्यादा गर्मी पड़ने और लू चलने की संभावना मौसम विभाग ने जताई है। ग्लोबल वार्मिंग प्राणी जाति के साथ देश की अर्थव्यवस्था के लिए बेहद हानिकारक है, क्योंकि ग्लोबल वार्मिंग से फसलों को जो नुकसान होता है, बीमारियों का जो कारण ग्लोबल वार्मिंग का कारण बनता है उसके लिए सरकारों को भारी खर्च करना पड़ता है। वैसे तो गर्मियों का मौसम आने ही वाला है, लेकिन समय से पहले ही गर्मी के मौसम जैसा माहौल बनना कहीं ग्लोबल वार्मिंग के खतरे की घंटी तो नहीं। मार्च में ही देश के कुछ राज्यों का तापमान जितना बढ़ रहा है उतना बढ़ना नहीं चाहिए। धरती पर बढ़ता तापमान सारी दुनिया के लिए एक बड़ी चिंता का विषय होना चाहिए और बढ़ते ग्लोबल वार्मिंग के खतरे पर दुनिया को चिंता नहीं, बल्कि गंभीरता से चिंतन करना चाहिए। बबूल के पेड़ बोने के बाद उन पेड़ों से आम जैसे मीठे फल की इच्छा रखना कहां की समझदारी होगी। बहुत ही अफसोस की बात है कि जिस प्रकृति ने इंसान को जीने के लिए निःस्वार्थ भाव से इतना कुछ दिया है, आज इंसान ने उसी प्रकृति की नाक में दम अपने स्वार्थ के लिए कर दिया है। बर्फ के पहाड़ों पर भी गरमी के असर साफ दिखने लगे है। धरती पर तापमान दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। यहां तक कि बर्फ के पहाड़ों को भी गरमी धीरे-धीरे अपनी चपेट में ले रही है। बर्फ के पहाड़ भी अगर इसी रफ्तार से गरम होते रहे तो ग्लेशियर पिघल कर धरती पर बहुत तबाही भी ला सकते हैं। आज सारी दुनिया ग्लोबल वार्मिंग के लिए चिंतित है, ग्लोबल वार्मिंग और मानवीय भूलों के कारण ग्लेशियर पिघलने की रफ्तार मे इसी तरह बढ़ते रहे तो स्वर्ग जैसी धरती नरक बन जाएगी और इंसान द्वारा किए गए सभी विकास मिट्टी में मिल जाएंगे, अतः कुदरत की अनमोल चीजों को संभालने के लिए चिंता नहीं चिंतन करना होगा।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो – पीटीआई

भारतीय तट रक्षक बल के प्रदूषण नियंत्रक जहाज 'समुद्र पहरेदार' को आसियान देशों के लिए समुद्र में तैनाती के दौरान वियतनाम के बंदरगाह पर आयोजित एक समारोह में भारतीय तट रक्षक बल के कर्मी।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

विचार

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। बुधवार, 3 अप्रैल 2024

जरूरी है युद्धविराम

करीब छह महीने से इस्राइल और हमास की जंग में पिस रहे गाजा के 22 लाख लोग सबके देखते-देखते मानव निर्मित अकाल और भुखमरी का शिकार हो जाएंगे? इंसानी समाज के सामूहिक विवेक पर भारी पड़ता यह सवाल हर पल वास्तविकता में तब्दील होने की ओर बढ़ रहा है।

प्रामाणिक रिपोर्ट | गाजा के हालात की भयावहता को लेकर आशंकाएं और अटकलें तो शुरू से थीं, मगर दावों और प्रतिदावों के बीच वास्तविक स्थिति का पता करना मुश्किल हो रहा था। पिछले महीने इंटीग्रेटेड फूड सिक्यॉरिटी फेज क्लासिफिकेशन (IPC) सिस्टम की रिपोर्ट ने इस कमी को काफी हद तक पूरा किया। अब तक भुखमरी के तमाम दावों का खंडन करते रहने वाले इस्राइल ने भी IPC रिपोर्ट का खंडन नहीं किया है।

गाजा : व्यावहारिक हो नजरिया

भूख और कुपोषण | रिपोर्ट में बताया गया है कि कैसे गाजा की कुल आबादी का आधा हिस्सा और गाजा शहर में अब भी रह रहे करीब 3 लाख लोगों का 70% हिस्सा अकाल के कगार तक पहुंच चुका है। अब तक भूख से हुई मौतों का कोई विश्वसनीय आंकड़ा नहीं है, लेकिन रिपोर्ट बताती है कि फरवरी में उत्तरी गाजा में दो साल से कम उम्र के 29% बच्चे गंभीर कुपोषण से ग्रस्त थे। करीब 66% परिवार ऐसे थे जो उस पूरे महीने कम से कम 10 बार चौबीसो घंटे भूखे रहने को मजबूर हुए।

खाद्य वितरण केंद्र पर बम | न केवल गाजा में राहत सामग्री का पहुंचना मुश्किल बना हुआ है बल्कि इनके वितरण की प्रक्रिया भी बाधित हो रही है। संयुक्त राष्ट्र के मुताबिक पिछले महीने ही एक खाद्य वितरण केंद्र पर बम गिरा था। यही नहीं, इस्राइली सेना ने खेती की ज्यादातर जमीन पर कब्जा कर रखा है। इसके अलावा कुछ इलाकों में स्थानीय अपराधी तत्वों द्वारा राहत सामग्री चुराकर उसे ऊंची कीमत पर बेचने जैसी घटनाएं भी हो रही हैं।

युद्धविराम की जरूरत | अगर इस्राइल सरकार की यह बात मान भी ली जाए कि लड़ाई हमास के खिलाफ है और आम लोगों को नुकसान पहंचाने का उसका कोई इरादा नहीं है तो भी व्यवहार में इससे कोई खास फर्क नहीं पड़ रहा। गाजा की आबादी को भुखमरी जैसे हालात से बचाने का एकमात्र उपाय यही है कि तत्काल युद्धविराम लागू कर बड़े पैमाने पर राहत और खाद्य सामग्री पहुंचाई जाए। सुरक्षा परिषद द्वारा इस आशय का प्रस्ताव पारित किए जाने के बाद भी उस पर अमल के कोई आसार नहीं दिख रहे।

अड़ियल रुख | इस्राइली प्रधानमंत्री हमास का खात्मा करने और सारे बंधकों को छुड़ाने की अपनी बात पर अड़े हैं, लेकिन इस अड़ियल रुख से कुछ हासिल होने की उम्मीद इस्राइलियों के बीच भी कमजोर पड़ रही है। यही वजह है कि नेतन्याहू सरकार के खिलाफ प्रदर्शन भी तेज हो गए हैं। लेकिन क्या इन सबका कोई ठोस, पॉजिटिव नतीजा समय रहते निकलेगा? यह अभी भी स्पष्ट नहीं है।

कभी-कभी

वक्त बड़ा बलवान

ललित वर्मा

इस बार होली पर एक वृद्धाश्रम में जाना हुआ। कई बरस बाद मेरा लंगोटिया यार आया था। उसकी बहन आश्रम में काम करती है। उसने मुझे वहीं बुला लिया। मैं आश्रम देखने लगा। यकायक वहां मौजूद बुजुर्गों से बातचीत शुरू हो गई।

पहले शख्स राजस्थान से थे। सफेद कुर्ता-पायजामा पहने उन्होंने दोनों हाथ जोड़े। मैंने सीधे पूछा, यहां पहुंचने तक का सफर बताना चाहेंगे? उनके चेहरे पर मुस्कान थी, बोले क्यों नहीं। मैं पेशे से इंजीनियर रहा, कई मुल्कों में मेरा आना-जाना था। बड़ी-बड़ी कंपनियों में काम कर चुका हूं। एक वक्त साढ़े चार लाख महीने तनख्वाह थी मेरी। आज भी दिल्ली में फैक्ट्री है। मैं हैरानी में डूबा सुन रहा था। फिर यहां कैसे? तो जो उन्होंने बताया, उसका निचोड़ यह था कि बेटों पर इतना विश्वास किया कि सब उनके नाम कर दिया, अपने पास कुछ नहीं रखा। बहू के ताने और व्यवहार इतने कटु थे कि घर छोड़ने का मन बना लिया। आश्रम में आए तो दोनों आंखों से दिखना तक बंद हो गया था। यहीं इलाज हुआ। कहते हैं, अब कुछ भी हो जाए, घर नहीं जाने का फैसला अडिग है। उन्होंने अपनी डायरी मुझे दिखाई, जिसे वह रोज लिख रहे थे। उसमें लिखा था, न कभी औलाद पर घमंड करो, न औरत पर, न पैसे पर, न ही अपनी काया पर। वक्त का कुछ पता नहीं। आज अच्छा है, कल बुरा हो जाएगा, कल फिर अच्छा हो सकता है।

उनके पास बैठे सज्जन हैदराबाद से थे। गंजेपन का इलाज करने वाले उनके कई क्लिनिक हैं। उनके कैमरे का एक्सेस आज भी उनके फोन में है। वे मेरी ओर उसे बढ़ाते हुए कहते हैं, रुपया बहुत कमाया। विदेशों में भी हमारी मशीनें जाती थीं। बेटियां सब कारोबार संभालती हैं। पर एक दिन बेटी ने ऐसी बात बोल दी कि तय कर लिया, अब घर में नहीं रहूंगा। हालांकि अब सोचता हूं कि थोड़ा बर्दाश्त करना आना चाहिए था। यह मेरा अहंकार ही था। पर आत्मसम्मान भी तो है। ना बेटी बुला रही है, ना मैं जा रहा हूं। आत्मसम्मान की कीमत पर कुछ नहीं चाहिए।

तब तक कई और बुजुर्ग कमरे में इकट्ठे हो गए थे। कोई उत्तम नगर से तो कोई आगरा से। इनमें एक तिहाई बुजुर्ग महिलाएं थीं। सबके अपने अनुभव थे। एक महिला ने मुझसे फोन रीचार्ज करवाया और कहा, बेटी तो रखना चाहती है, जवांई नहीं। क्या करें? यहीं ठीक हैं।

इतनी तरह के अनुभव, इतनी तरह के मतभेद। उनसे बात करते-करते मैं किसी और दुनिया में चला गया। तभी बहन ने कहा, आजा भाई बाकी आश्रम दिखाती हूं। मैं हाथ जोड़े वहां से खड़ा हुआ और उनकी बाकी व्यवस्थाएं देखने लगा। जब लौट रहा था तो सबकी कुर्सियां लाइन से लग गई थीं। उनके सामने थाली रखने के लिए स्टूल रखे थे। सब लंच से पहले प्रार्थना करके ईश्वर का शुक्रिया करने वाले थे, इस भोजन के लिए।

एकदा

पौधों का मन

मोजेस कार्वर नाम के एक जर्मन किसान के घर में नन्हा दुबला जॉर्ज दिन-रात काम में लगा रहता था। वह मैरी नाम की एक गुलाम स्त्री का बेटा था। कार्वर दंपती उसे गुलामों की तरह नहीं, बल्कि अपने बेटे की तरह ही रखते थे। बड़े प्रेम से उन्होंने उसे जॉर्ज नाम दिया था। जॉर्ज दिन रात उनके बगीचे में लगा रहता था। एक तरह से उसे पौधों से प्यार हो गया था। एक दिन उनकी पड़ोसन कार्वर दंपती के पास आई। उनके रंग-बिरंगे सुंदर बगीचे को देखकर वह दंग रह गई। वह बोली, 'मेरे पौधे तो मर जाते हैं। मेरे इतने सुंदर गुलाब के पौधे भी मरियल से हो गए हैं। क्या आप अपने माली को एक बार मेरे यहां भेज देंगे।' इस पर मोजेस मुस्करा कर बोले, 'जॉर्ज, जाओ आंटी के पौधे ठीक कर आओ।' नन्हें जॉर्ज को देखकर पड़ोसन दांतों तले उंगुली दबाकर बोली, 'ये बगीचा इसने बनाया है?' जॉर्ज पड़ोसन के साथ उनके पौधों को देखकर बोला, 'आंटी, अब बस कुछ देर मुझे अपना काम करने दीजिए।' उसने गुलाबों को अच्छी तरह से देखा और गुलाब के पौधों की जगह बदल दी। उन्हें ऐसी जगह लगाया, जहां उन पर सीधी धूप आए। कुछ देर बाद जब पड़ोसन अपने बगीचे में लौटी तो यह देखकर चकित रह गई। हर पौधे की जगह बदल दी गई थी और पुरानी मिट्टी निकालकर उनमें नई मिट्टी डाल दी गई थी। पड़ोसन जॉर्ज से बोलीं, 'तुम्हें पौधों के बारे में ये सब कैसे पता? तुम तो अभी बहुत छोटे हो।' नन्हा जॉर्ज मुस्करा कर बोला, 'मैं पौधों का मन पढ़ना जानता हूं। जो पौधों का मन पढ़ लेता है, वह उनका इलाज भी खोज लेता है।' यही जॉर्ज आगे चलकर महान वैज्ञानिक डॉ. जॉर्ज वॉशिंगटन कार्वर के नाम से जाने गए। इन्होंने पेड़-पौधों और फसलों की दुनिया में अभूतपूर्व क्रांति ला दी थी।

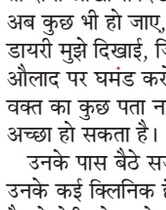

Subrata Dhar

संकलन : रेनू सैनी

वर्ष 2022-23 में आर्थिक विषमता शीर्ष स्तर पर पहुंच गई, जो 1922 के दशक से भी अधिक

अमीरी-गरीबी की बढ़ती खाई फिक्र की बात

आनंद प्रधान

क्या भारत हाल के दशकों में तेज आर्थिक विकास के बावजूद आय और संपत्ति के बंटवारे के मामले में दुनिया के कुछ सबसे अधिक गैर-बराबर मुल्कों में से एक बनता जा रहा है? पेरिस स्थित World Inequality Lab की एक ताजा रिपोर्ट, 'The Rise of the Billionaires Raj' के मुताबिक, पिछले दो दशकों से ज्यादा समय से भारत में तेजी से बढ़ रही आर्थिक गैर-बराबरी बीते साल 2022-23 में ऐतिहासिक रूप से उच्चतम स्तर पर पहुंच गई है, जो कि ब्रिटिशकालीन भारत के 1922 के दशक की तुलना में भी ज्यादा है।

सबसे ऊपर भारत | रिपोर्ट में दावा किया गया है कि आबादी में शीर्ष एक फीसदी सुपर अमीरों का देश की आय और संपत्ति में हिस्सा बढ़ते हुए क्रमशः 22.6% और 40.1% तक पहुंच गया है। इस मामले में भारत दुनिया के चुनिंदा देशों की सूची में सबसे ऊपरी पायदान पर पहुंच गया है।

Billionaires की संख्या | यह रिपोर्ट बताती है कि देश में Dollar Billionaires की संख्या वर्ष 1991 में जहां सिर्फ एक थी, वह 2011 में बढ़कर 52 और 2022 में तिगुने से ज्यादा बढ़कर 162 हो गई। इन तीन दशकों में Billionaires की संपत्ति में तेजी से बढ़ोतरी हुई है। कुल आय में उनका हिस्सा वर्ष 1991 में जहां एक फीसदी से भी कम था, वह 2022 में उछलकर 25% तक पहुंच गया।

आर्थिक विषमता | दरअसल, 1991 के आर्थिक सुधारों के बाद से तेज आर्थिक वृद्धि के बीच जहां एक ओर गरीबी रेखा के नीचे गुजर-बसर करने वाले लोगों की संख्या में उल्लेखनीय गिरावट आई, वहीं आर्थिक गैर-बराबरी में तेज बढ़ोतरी भी हुई। कई अर्थशास्त्री और सरकारी रिपोर्टें भी समय-समय पर इस विरोधाभास को उजागर करते रहे हैं। स्थिति की गंभीरता का अंदाजा ताजा रिपोर्ट में पेश इन तथ्यों से लगाया जा सकता है :

आर्थिक विषमता बढ़ी

- शीर्ष 1% के पास देश की 22.6% आय
- शीर्ष 1% के पास देश की 40.1%संपत्ति
- विषमता में भारत अव्वल देशों में शामिल

- देश में शीर्ष 10% भारतीय राष्ट्रीय आय का 60% हिस्सा बटोर ले जाते हैं। निचली 50% आबादी के खाते में मात्र 15% हिस्सा आता है।
- वर्ष 2022-23 के आंकड़ों के मुताबिक, एक औसत भारतीय की सालाना आय 2.3 लाख रुपये है, लेकिन शीर्ष एक फीसदी सुपर अमीरों की औसत सालाना आय 53 लाख रुपये है, जो आम भारतीय की औसत सालाना आय से 23 गुणा ज्यादा है।
- आबादी के निचले 50% भारतीयों की औसत सालाना आय सिर्फ 71 हजार रुपये और बीच के 40% भारतीयों की औसत सालाना आय 1.65 लाख रुपये (राष्ट्रीय औसत का लगभग दो तिहाई) है।
- शीर्ष एक फीसदी सुपर अमीर राष्ट्रीय आय का 22.6% ले जाते हैं, लेकिन उनमें से भी शीर्ष 0.1%, 0.01% और 0.001% अमीरों के हिस्से में राष्ट्रीय आय का क्रमशः 10%, 4.3% और 2.1% आता है।

यह रिपोर्ट चार अर्थशास्त्रियों ने तैयार की है, जिनमें फ्रांसीसी अर्थशास्त्री थॉमस पिकेटी के अलावा नितिन कुमार भारती, लुकास चांसेल और अनमोल सोमंची शामिल हैं। रिपोर्ट के लिए इन लोगों ने राष्ट्रीय आय, सकल परिसंपत्तियों, आयकर के आंकड़ों, अमीरों की सूचियों के अलावा आय-उपभोग और संपत्ति सर्वेक्षणों का इस्तेमाल किया है। उन्होंने यह भी माना है कि भारत में आय और संपत्ति संबंधी आंकड़े पर्याप्त नहीं हैं और उनमें कई विसंगतियां हैं। इस आधार पर कई आलोचक इस शोध रिपोर्ट के दावों पर सवाल भी खड़े कर रहे हैं।

AI Image

भगवती-सेन बहस | कुछ साल पहले जाने-माने अर्थशास्त्री प्रो. जगदीश भगवती और नोबेल पुरस्कार विजेता अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन के बीच चली चर्चित बहस के केंद्र में भी यही सवाल था। मुद्दा यह था कि आर्थिक वृद्धि दर को तेज करने या राष्ट्रीय आय और संपत्ति के न्यायसम्य वितरण सुनिश्चित करने में से किसे प्राथमिकता देनी चाहिए? दूसरे, क्या नीति-निर्माताओं को गैर-बराबरी पर अंकुश लगाने के लिए सुपर अमीरों पर ऊंची दरों से टैक्स या संपत्ति कर लगाने जैसे कदम उठाने चाहिए?

गरीबी असल मुद्दा | प्रो. भगवती और उनके जैसे आर्थिक सुधारों के समर्थक अर्थशास्त्री बढ़ती गैर-बराबरी के इन आंकड़ों को 'बेवजह डरानेवाला और मुद्दे से भटकाने वाला' बताते रहे हैं। उनका दावा है कि भारत जैसे देश के लिए असली मुद्दा गैर-बराबरी नहीं बल्कि गरीबी दूर करना है। इसके लिए आर्थिक विकास को प्राथमिकता देनी चाहिए।

विकास पर जोर | उनके मुताबिक, इससे आर्थिक गैर-बराबरी बढ़ती है तो उसे लेकर नींद खराब करने की जरूरत नहीं है। उनका तर्क है कि भारत में पिछले तीन दशकों में तेज आर्थिक वृद्धि के कारण गरीबी कम करने में मदद मिली है। इसलिए पुनर्वितरण के बजाए आर्थिक वृद्धि पर जोर बना रहना चाहिए। इस कारण वे मानते हैं कि सुपर अमीरों पर टैक्स बढ़ाने से निवेश पर उल्टा असर पड़ेगा और आर्थिक वृद्धि को धक्का लग सकता है।

सबको मिले फायदा | सेन और ज्यां ड्रेज जैसे अर्थशास्त्रियों का तर्क है कि तेज वृद्धि दर से पैदा होने वाली आय और संपदा के न्यायसम्य वितरण में नाकामी से बढ़ती गैर-बराबरी आखिरकार आर्थिक वृद्धि के पहिए को भी रोक देगी। यह सामाजिक और राजनीतिक स्थिरता के लिए भी खतरा है। इसलिए शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा जैसे मदों में सार्वजनिक व्यय को बढ़ाने के लिए सुपर अमीरों पर संपत्ति कर जैसे फैसलों की जरूरत है ताकि आर्थिक वृद्धि के दायरे को बढ़ाने और उसका फायदा सभी वर्गों तक पहुंचाने में मदद मिले।

क्या है रास्ता | नीति-निर्माताओं के लिए यह दुविधा का विषय है। लेकिन यहां गांधी जी की बात याद रखनी चाहिए कि कोई भी फैसला करने से पहले सबसे आखिरी पायदान पर खड़े व्यक्ति को याद करना और उसकी भलाई को तरजीह देनी चाहिए। यही नहीं, अब तो दुनिया भर में Billionaires की बड़ी संख्या सुपर अमीरों पर टैक्स की दरें बढ़ाने की मांग कर रही है ताकि गैर-बराबरी पर अंकुश लगाया जा सके और सामाजिक सुरक्षा के दायरे को बड़ा और मजबूत बनाया जा सके। इस साल दावोस में 250 से ज्यादा Billionaires ने यह मांग दोहरा कर नीति-निर्माताओं के लिए रास्ता खोल दिया है।

(लेखक IIMC में पत्रकारिता के प्रफेसर हैं)

नुकसान से बचना है तो लू से बचाव के करें उपाय

2021 में भीषण गर्मी के चलते भारत में सेवा, विनिर्माण, खेती और निर्माण क्षेत्रों में लगभग 13 लाख करोड़ का नुकसान हुआ, करीब 16700 करोड़ घंटे बर्बाद हुए

पंकज चतुर्वेदी

इस साल देश के ज्यादातर हिस्सों में न केवल गर्मी ज्यादा पड़ेगी बल्कि लू का प्रकोप भी ज्यादा झेलना पड़ेगा। मौसम विभाग के मुताबिक, अप्रैल से जून तक 10 से 20 दिनों तक लू चलने के आसार हैं। आम तौर पर इस अवधि में 4 से 8 दिनों तक ही लू चलती है। ध्यान रहे, लू महज सेहत से जुड़ी चुनौतियां ही नहीं लाती, यह खुले में काम करने वाले तबकों जैसे- यातायात पुलिस, गिग-वर्कर्स, रेहड़ी-रिक्शा खींचने वालों के साथ-साथ किसानों और मजदूरों को सामाजिक-आर्थिक रूप से भी प्रभावित करती है।

रुकी हुई हवा | हीट वेव के पीछे आम तौर पर रुकी हुई हवा की भूमिका होती है। उच्च दबाव प्रणाली हवा को नीचे की ओर ले जाती है। इससे गर्म हवा एक जगह पर जमा हो जाती है। हवा के चले बिना, बारिश नहीं हो सकती। ऐसे में गर्म हवा को और गर्म होने से रोकने का कोई उपाय नहीं रहता। इंसान के शरीर का औसत तापमान 37 डिग्री सेल्सियस होता है। जब बाहर तापमान 40 से अधिक हो और हवा में बिलकुल नमी न हो तो यह घातक लू में बदल जाती है। शरीर का तापमान बढ़ने से शरीर का पानी चुकने लगता है, जिससे चक्कर आना, कोमा में चले जाना, बुखार, पेट दर्द, मितली जैसी शिकायतें बढ़ने लगती हैं।

मौसम का बदलता ट्रेंड | मौसम विभाग की ताजा रिपोर्ट आने से पहले से ही यह बात सरकारी तंत्र की जानकारी में है कि गर्मी और लू का प्रकोप बढ़ने वाला है। चार साल पहले केंद्रीय पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय द्वारा तैयार पहली 'जलवायु परिवर्तन मूल्यांकन रिपोर्ट' में आगाह किया जा चुका है कि 2100 के अंत तक, भारत में गर्मियों (अप्रैल-जून) में चलने वाली लू या गर्म हवाएं 3 से 4 गुना अधिक हो सकती हैं। इनकी औसत अवधि भी दोगुनी होने का अनुमान है। वैसे तो लू का असर पूरे देश में ही बढ़ेगा, लेकिन घनी आबादी वाले भारत-गंगा नदी बेसिन में इसकी मार ज्यादा तीखी होगी।

सूखाग्रस्त इलाकों में इजाफा | मॉनसून के दौरान सन 1951-1980 की अवधि की तुलना में वर्ष 1981–2011 के दौरान 27% अधिक दिन सूखा दर्ज किया गया। रिपोर्ट में चेताया गया है कि बीते छह दशक के दौरान बढ़ती गर्मी और मॉनसून में कम बरसात के चलते देश में सूखाग्रस्त इलाकों में इजाफा हो रहा है। खासकर मध्य भारत, दक्षिण-पश्चिमी तट, दक्षिणी प्रायद्वीप और उत्तर-पूर्वी भारत के क्षेत्रों में औसतन प्रति दशक दो से अधिक अल्प वर्षा और सूखा दर्ज किया गया।

AI Image

कॉमन रूम

बहुत भारी नुकसान | यही नहीं, अंतरराष्ट्रीय संगठनों के सहयोग से तैयार जलवायु पारदर्शिता रिपोर्ट 2022, के अनुसार वर्ष 2021 में भीषण गर्मी के चलते भारत में सेवा, विनिर्माण, खेती और निर्माण क्षेत्रों में लगभग 13 लाख करोड़ का नुकसान हुआ। रिपोर्ट कहती है कि गर्मी बढ़ने से 16700 करोड़ घंटे संभावित श्रम का नुकसान हुआ, जो 1999 के मुकाबले 39% अधिक है। इस रिपोर्ट के अनुसार तापमान में डेढ़ फीसदी इजाफा होने पर बाढ़ से हर साल होने वाला नुकसान 49% बढ़ सकता है।

गरीबों पर पड़ती है मार | पिछले महीने संयुक्त राष्ट्र के खाद्य और कृषि संगठन (FAO) ने भारत में एक लाख लोगों के बीच सर्वे पर आधारित एक रिपोर्ट में बताया है कि गर्मी/लू के कारण गरीब परिवारों को अमीरों की तुलना में पांच फीसदी अधिक आर्थिक नुकसान होगा। आर्थिक रूप से संपन्न लोग बढ़ते तापमान के अनुरूप अपने कार्य को ढाल लेते हैं, जबकि गरीब ऐसा नहीं कर पाते।

बचाव के उपाय | मौसम की इन प्रतिकूलताओं से निपटने के लिए तात्कालिक और दूरगामी दोनों स्तरों पर प्रयास करने होंगे। कस्बा-ग्राम स्तर पर परिवेश को पर्यावरण के अनुकूल बनाने वाले कदम उठाने होंगे। इसके अलावा काम के घंटे भी सुबह दस बजे के पहले और फिर शाम पांच बजे के बाद रखने की व्यवस्था बनाने पर विचार करना होगा। सबसे बड़ी बात, जहां तक हो सके, खुले में काम करने को मजबूर लोगों के लिए शेड, पंखे आदि का इंतजाम करना भी धीरे-धीरे जरूरी होता जा रहा है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें hindi.speakingtree.in

हंसने-मुस्कुराने से दुख और अहंकार गायब हो जाते हैं

विनोद कुमार यादव

प्रसिद्ध सूफी संत निजामुद्दीन औलिया अपने भांजे सैय्यद नूह से अनन्य प्रेम करते थे। हजरत निजामुद्दीन नूह को अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहते थे। लेकिन नूह के आकस्मिक निधन से निजामुद्दीन औलिया को बड़ा आघात लगा और वो बेहद उदास और गुमसुम रहने लगे। अमीर खुसरो अपने प्रिय गुरु की इस अवसादग्रस्त स्थिति से बड़े दुखी थे। हर क्षण वो इसी कोशिश में रहते थे कि उनके मन बहलाव का कोई साधन खोजा जाए कि किसी तरह गुरु के चेहरे पर मुस्कान लौटे।

फागुन का महीना था। खुसरो अपने कुछ सूफी साथियों के साथ सैर करने निकले। उन्होंने देखा कि प्राचीन कालका देवी के मंदिर-परिसर के निकट कुछ श्रद्धालु पीले वस्त्र धारण कर ढोल-मंजीरे बजाकर अबीर-गुलाल उड़ाते हुए मस्ती से नाच-गा रहे थे। उत्सुकतावश खुसरो ने रंगों और मस्ती में डूबे लोगों से पूछा, आप लोग क्या कर रहे हैं? एक व्यक्ति ने बताया कि आज से होलाष्टक पर्व की शुरुआत हो चुकी। हम सब देवी को प्रसन्न करने के लिए उन पर टेसू और सरसों के फूल चढ़ाने जा रहे हैं। तब खुसरो ने सोचा कि मेरे देवता तो मेरे गुरु हैं और अरसे से वो उदास हैं। उन्हें खुश करने के लिए मैं भी उन्हें ऋतुराज वसंत की भेंट सरसों के पीले फूल अर्पित करूंगा।

खुसरो ने सरसों के फूल मुकुट की तरह अपनी पगड़ी में सजा लिए और अपने पीर भाइयों व सूफी कव्वालों के साथ सज-संवर कर नाचते-गाते हजरत निजामुद्दीन की खानकाह की ओर चल दिए। वहां पहुंचकर खुसरो खूब नाचे-गाए और अपने साथियों के साथ ठहाके लगाकर देर तक हंसी-ठिठोली करते रहे। खुसरो के नाचने-गाने और अपने साथियों के साथ खिलखिलाकर हंसने की मस्त अदा और विचित्र वेशभूषा देखकर निजामुद्दीन औलिया भी हंसने लगे और अवसादग्रस्त अवस्था से निजात पा गए।

हास्य एक स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। हंसता हुआ चेहरा देखकर हंसी आ ही जाती है क्योंकि हंसी संक्रामक होती है। हंसना एक ऐसा सकारात्मक भाव है जो हमारे मन-मस्तिष्क में बहुत तेजी से प्रतिक्रिया करता है। जब हम किसी को खिलखिलाकर हंसते हुए देखते हैं तो हमारा मस्तिष्क अनायास ही चेहरे की मांसपेशियों को हंसने के लिए विवश कर देता है और हम मुस्कुरा देते हैं। हंसना शारीरिक बीमारियों और मानसिक व्याधियों से निजात पाने का सर्वोत्तम उपाय है। मनुष्य के जीवन में हंसी से मूल्यवान और कुछ भी नहीं है। ठहाके लगाने और खिलखिलाकर हंसने से छाती और पेट के मध्य स्थित डायफ्राम में स्पंदन होता है। हंसने से डायाफ्राम की झिल्ली सक्रिय हो जाती है। फलस्वरूप पेट फेफड़े और लीवर की स्वाभाविक मालिश होती है।

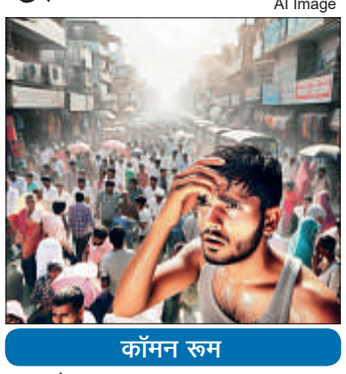

हंसने से समस्त शरीर की कोशिकाओं में ऑक्सिजन का संचार होता है। हृदय की शिराओं में रक्त का परिसंचरण सुचारू ढंग से होने लगता है। ठहाके लगाकर हंसने से तन की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने वाले और मन को खुशी प्रदान करने वाले महत्वपूर्ण रसायन एंडोर्फिन और सेरोटोनिन का पर्याप्त मात्रा में उत्सर्जन होता है। सत्य यह भी है कि हंसने का बेशकीमती उपहार इस चराचर जगत में परमेश्वर ने केवल मनुष्य को ही दिया है।

स्वस्थ रहने के लिए हंसना बहुत जरूरी है। जब आप समग्र हंसी में होते हैं तो आपका अहंकार गायब हो जाता है। जो मानसिक विकार हमारे मन की शांति और चेहरे की मुस्कुराहट नष्ट करते हैं, वे हैं दंभ, अभिमान, क्रोध और भय। यदि हम करुणा और प्रेम अपने भीतर विकसित करें, तो इन तमाम विकारों से निजात पाना बहुत आसान है।

आर.एन.आई. नं. 510/57© सर्वाधिकार सुरक्षित। लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। स्वत्वाधिकारी बैनेट, कोलमैन एण्ड कम्पनी लिमिटेड के लिए राजीव यादव द्वारा, 7 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा **टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस, साइट IV, औद्योगिक क्षेत्र साहिबाबाद** और प्लॉट नंबर 7-8, सेक्टर M-11, ट्रांसपोर्ट हब, इंडस्ट्रियल मॉडल टाउनशिप, मानेसर, हरियाणा से मुद्रित। फोन : 23302000 फैक्सः 23492047, पंजीकृत कार्यालय : दादाभाई नौरोजी रोड, मुंबई-400001। विमान सेवा शुल्क : 1 रु. प्रति कॉपी। नेपाल में कुल मूल्य : सोमवार से शनिवार : नेपाली 5 रु. ; रविवार : नेपाली 6 रु.
संपादक (दिल्ली मार्केट) : आशीष पांडे (इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अन्तर्गत उत्तरदायी)

https://t.me/AINewsPaperPaid

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्
भगवान इस जग के कण-कण में विद्यमान हैं।

पंजाब केसरी संपादकीय

संस्थापक: शहीद शिरोमणि लाला जगतनारायण जी, अमर शहीद रमेश चन्द्र जी एवं कलम के योद्धा अश्विनी कुमार जी

मानव-वन्य जीव संघर्ष

मानव और वन्य जीव संघर्ष एक गम्भीर समस्या बन चुकी है। हालांकि वन्य जीवों के संरक्षण के लिए वन विभाग की भारी-भरकम मशीनरी लाखों रुपए खर्च करती है लेकिन वह भी इस गम्भीर समस्या के आगे असहाय नजर आ रही है। आए दिन शहरों में खतरनाक वन्य जीव घुस आते हैं और मनुष्यों पर हमले कर देते हैं जिससे मौतें भी होती हैं और वन्य जीवों को भी पकड़ने के लिए काफी मशक्कत करनी पड़ती है। कई बार वन्य जीवों को भी जान से हाथ धोना पड़ता है। देश की राजधानी दिल्ली की एक रिहायशी बस्ती में आमदखोर तेंदुए ने घुसकर एक दर्जन लोगों पर हमला किया। उसके हमले में पांच लोग घायल हो गए। पूरे इलाके में खौफ कायम है। इस आदमखोर तेंदुए को पकड़ने के लिए वन विभाग की टीम को काफी मेहनत करनी पड़ी। इससे पहले भी पिछले वर्ष दिसम्बर में हाई प्रोफाइल इलाके सैनिक फार्म में तेंदुए ने दहशत फैला दी थी। हालांकि कई घंटों बाद उसे दबोच लिया गया था। महानगरों में ही नहीं बल्कि उत्तराखंड और कुछ अन्य राज्यों में ऐसी घटनाएं लगातार देखने को मिल रही हैं।

अब सवाल यह है कि वन्य जीवों के शहरों में घुसने की समस्या के लिए जिम्मेदार किसे माना जाए। क्या इसके लिए केवल वन विभाग को जिम्मेदार माना जाए या फिर मानव को इसके लिए जिम्मेदार माना जाए। कोई जानवर किसी इंसान की जान का दुश्मन कब बनता है? आज क्यों दोनों ही एक-दूसरे की बलि लेने पर अमादा हो जाते हैं? आखिर वन्य प्राणी अपने आश्रय स्थलों को छोड़ने के लिए विवश क्यों हुए? दरअसल वनों पर अत्यधिक मानवीय हस्तक्षेप ही वन्य जीवों के साथ मानव के संघर्ष का प्रथम कारण बना। वनों का व्यावसायिक उपयोग, उद्योग जगत का विस्तार और आधुनिक जीवनशैली तथा बाजारीकरण और नगरीय सभ्यता के विकास ने दुनिया के कोने-कोने में कंक्रीट के जंगल खड़े कर दिए। सड़कों का जाल ऐसे बिछा कि जंगल के बाशिंदे भोजन और आवास के लिए तरसने लगे। परिणामस्वरूप उनका पदार्पण मानव बस्तियों की ओर होने लगा। तो क्या विकासपरक नीतियां ही मानव और वन्य जीवों के संघर्ष के पीछे महत्वपूर्ण कारक है? जंगलों के दोहन के साथ सेंचुरी और नेशनल पार्क के निर्माण ने वनों के आस-पास निवास करने वाले स्थानीय निवासियों को उनके हक से वंचित किया है। जबकि यह वही स्थानीय निवासी थे जिन्होंने सदियों से बिना व्यावसायिक दोहन के हमेशा वनों का उचित उपयोग करते हुए उसके संरक्षण का भी काम किया था। विडंबना ही कहेंगे कि इस मुद्दे को सिरे से नकार दिया जाता है। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाले विमर्श हाशिये के समाजों की जीवनशैली को समझने में असमर्थ ही रहे हैं।

> आदमखोर तेंदुए को पकड़ने के लिए वन विभाग की टीम को काफी मेहनत करनी पड़ी। इससे पहले भी पिछले वर्ष दिसम्बर में हाई प्रोफाइल इलाके सैनिक फार्म में तेंदुए ने दहशत फैला दी थी। हालांकि कई घंटों बाद उसे दबोच लिया गया था। महानगरों में ही नहीं बल्कि उत्तराखंड और कुछ अन्य राज्यों में ऐसी घटनाएं लगातार देखने को मिल रही हैं। अब सवाल यह है कि वन्य जीवों के शहरों में घुसने की समस्या के लिए जिम्मेदार किसे माना जाए। क्या इसके लिए केवल वन विभाग को जिम्मेदार माना जाए या फिर मानव को इसके लिए जिम्मेदार माना जाए। कोई जानवर किसी इंसान की जान का दुश्मन कब बनता है?

सरकार जंगलों को बचाने के लिए भले ही लाख प्रयास करे लेकिन हकीकत यह है कि वन्य क्षेत्र लगातार कम होते जा रहे हैं। जंगल काट-काट कर रिहायशी कॉलोनियां बसाई जा चुकी हैं। पर्यटन के नाम पर जंगलों को कमाई का केन्द्र बना दिया है। वन क्षेत्र में सफारी और जंगल रिजॉर्ट बना दिए गए हैं। इस सबसे वन्य जीवों की निजता का हनन हो रहा है। यही कारण है कि वन्य जीव इंसानी बस्तियों में आने लगे हैं। इतने सारे वन्य संरक्षण पार्क और सेंचूरी बन जाने के बावजूद वन्य जीवनों का हमला बढ़ता जा रहा है। हालांकि इस समस्या के कई अन्य कारण भी हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि जंगलों में शिकार की कमी और पानी की कमी भी वन्य जीवों का शहरों की तरफ आना भी कारण है। यह एक ऐसी समस्या है जो पहाड़ी राज्यों के जीवन, जीविका और समाज को सीधे तौर पर प्रभावित करते हैं। उत्तराखंड के गांव में रहने वाले लोग आमदखोर जानवरों के आतंक की वजह से अपने गांव छोड़कर शहरी इलाकों में बसने लगे हैं।

सबसे अधिक आतंक गुलदारों का है जो घर, आंगन और खेत-खलिहानों में धमक कर जान के खतरे का सबब बने हुए हैं। गुलदार तो आबादी वाले क्षेत्र में ऐसे घूम रहे हैं जैसे मवेशी हों। बाघ भी गांव में घुसकर हमले कर रहे हैं। कभी हाथी मेरे साथी की कहावत बहुत मशहूर थी लेकिन अब हाथी मानव के साथ नहीं रहे हैं। झारखंड, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल और केरल आदि राज्यों में गजराज के हमलों में लोग मारे जा रहे हैं। वन्य जीवों के हिंसक हो जाने के भी कई कारण हैं। आमदखोर जानवर महिलाओं, बच्चों को अपना निवाला बना रहे हैं। वन विभाग इन्हें पकड़ भी लेता है लेकिन उन्हें दूसरी जगह रेलोकेट नहीं किया जाता जो एक खतरनाक प्रक्रिया है। यह भी सच है कि देश में इनका अवैध शिकार भी लगातार हो रहा है। इस गम्भीर समस्या का समाधान अब गम्भीरता से करना होगा। जब तक इनके लिए आरक्षित क्षेत्रों में इंसानी दखलंदाजी को रोका नहीं जाता, जंगलों की अंधाधुंध कटाई रोकी नहीं जाती और विकास के नाम पर विनाश की प्रक्रिया बंद नहीं की जाती तब तक वन्य जीव बनाम इंसान संघर्ष जारी रहेगा।

आदित्य नारायण चोपड़ा
Adityachopra@punjabkesari.com

चुनावों में एक अलग ही दृश्य...

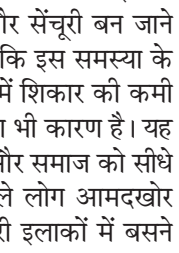

चुनावों में एक अलग ही दृश्य उभर कर आता है,
जब नेताजी हाथ जोड़े और आवाम सीना तानकर खड़ा पाता है,
पर हाथ लगते ही कुर्सी की चाबी सब कुछ बदल जाता है,
और फिर 5 वर्ष तक जनता को नेताजी का चेहरा नजर नहीं आता है...!!

गीता पाढा

सोपोर में आतंकियों के 3 सहयोगी गिरफ्तार

श्रीनगर, (आईएएनएस): जम्मू-कश्मीर पुलिस ने उत्तरी कश्मीर के बारामूला जिले के सोपोर इलाके से सुरक्षाकर्मियों के साथ मिलकर आतंकियों को सहायता प्रदान करने वाले तीन लोगों को गिरफ्तार किया है। इसके अलावा इनके पास से कई ऐसे सबूत भी बरामद किए हैं जो इनके ऊपर लग रहे आरोपों को पुख्ता कर रहे हैं। पुलिस ने कहा, जम्मू-कश्मीर पुलिस ने सैनिकों और सीआरपीएफ जवानों के साथ मिलकर फ्रूट मंडी से तीन संदिग्ध लोगों को चिन्हित किया। इस दौरान इन संदिग्धों ने वहां से भागने का प्रयास किया, लेकिन पुलिस ने बहुत ही सूझबूझ से धर-दबोचा।

गिरफ्तार हुए लोगों की पहचान फैसल अहमद काचरू, बाबा यूसुफ निवासी सोपोर, आकिब मेहराज काना के रूप में हुई है। पुलिस ने कहा, तलाशी के दौरान इनके पास से मोबाइल फोन और कई अन्य ऐसी सामग्री बरामद की गई हैं, जिससे इन पर प्रत्यक्ष रूप से दोष साबित होता है। यहां यह बताना उचित है कि इन लोगों के पास से जो साक्ष्य बरमद हुए हैं, उसके बारे में ये लोग उचित जानकारी देने में विफल रहे हैं।

मुस्लिम बाहुबलियों की जेल में मौत और मुसलमान

फिरोज बख्त अहमद

लंबे अर्से से यही देखने में आता है कि राजनीति में आने के बाद कुछ लोग समझते हैं कि वे कुछ भी कर सकते हैं और अपराधों की दुनिया में लिप्त चाहे वे लूट-खसोट कर दौलत के अंबार लगाएं, लोगों की जमीनों पर जबरन कब्जे करें, बलात्कार करें, हत्याएं करें या करवाएं अथवा कोई अन्य अपराध करें, उन्हें कोई भी कुछ भी नहीं कह सकता, उनका कानून कुछ बिगाड़ नहीं सकता। जैसा कि माफिया डॉन शहाबुद्दीन, अतीक, मुख्तार, शाहजहां शेख आदि के मामलों में देखने में आया है। न जाने राजनीति में कौन सा चुंबक है कि चाहे वह कोई डॉक्टर हो, बड़े अधिकारी या कोई फिल्मी सेलेब्रिटी हो, सभी सियासत की चकाचौंध में लिप्त हो जाना चाहते हैं। वास्तव में जनमानस सेवा का यह कार्य स्वयं सेवा और बेतहाशा राजनीतिक लाभ और रोटियां सेंकने का धंधा बन गया है। यादि हर राजनेता मात्र 20-30 प्रतिशत भी मोदी जैसा बन जाए तो भारत के भाग्य ही बदल जाए।

जब मुस्लिम बाहुबली, पहले बिहार के शहाबुद्दीन, फिर उत्तर प्रदेश के अतीक बंधु और अब मुख्तार अंसारी, तीनों की मौत जिस प्रकार से रमजान के महीने में पुलिस के संरक्षण या अस्पताल में हुई है, बावजूद इसके कि इन तीनों पर दर्जनों हत्या, डकैती, फिरौती, ज़मीन माफियागीरी आदि के मुकदमे दर्ज थे, जिस प्रकार से इनकी मौत हुई, वह बकौल मुस्लिम तबके, शक की सूई के दायरे में आता है, क्योंकि बहुत से मुसलमान और विशेष रूप से मुख्तार के भाई अफजाल इसे, जेल प्रशासन के होते क्रूर हत्याएं मानते हैं कि मुख्तार को ज़हर दिया गया है, जैसा कि उन्होंने यह बात अपने बेटे उमर को बताई थी। मुस्लिम समाज की भी लगभग यही सोच है कि मुख्तार की हत्या धीमा ज़हर दिए जाने पर ही हुई है। भले ही सरकारी रिपोर्टें कुछ भी कहें, भीड़ तंत्र की अपनी अलग ही सोच होती है। कोई कुछ भी कहे, मगर विश्वास इन्हीं रिपोर्टों पर किया जाता है, क्योंकि उनसे बाहर कोई नहीं जा सकता क्योंकि इन पर सरकारी अफसरों के हस्ताक्षर और ठप्पे होते हैं और इनको नकारने का अर्थ है, सरकारी तंत्र को झुठलाना।

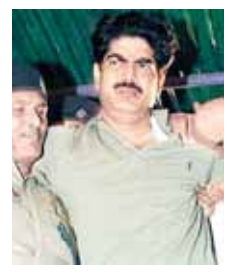

मुख्तार की अंतिम शव यात्रा में कुछ अनहोनी देखने को मिली कि उनकी मैय्यत को कांधा देने व मिट्टी देने हजारों लोग उनके मुहम्मदाबाद पैतृक क़ब्रिस्तान काली बाग के रास्ते में पहुंच गए। हालांकि रात से ही मुख्तार अब्बास अंसारी की दिल के दौरे से हुई मृत्यु की खबर सुनते ही बावजूद इसके कि रमज़ान का पाक महीना चल रहा है, हज़ारों लोग अंसारी के "फाटक" पर पहुंच गए जिनसे मुख्तार के बड़े भाई, सिबगतुल्लाह अंसारी ने वापिस जाने को कहा, मगर वे माने नहीं। दिन होते-होते मुख्तार के हजारों चाहने वाले उनके आखिरी सफ़र पर कांधा देने के लिए हाज़िर हो गए। एक तो रमज़ान का दिन, उस पर रोज़ा और फिर धूप, बावजूद इन तमाम बातों के, लोगों का एक सैलाब उमड़ा पड़ा था।

गाजीपुर के एक हमारे प्रोफेसर मित्र ने बावजूद इसके कि मुख्तार के ऊपर नाना प्रकार के 66 केस लगे थे, 8 केसों के चलते उनको जेल में डाला गया था और आने वाले दिनों में हत्या, फिरौती आदि के और भी केस खुलते और उनको शायद तमाम ज़िंदगी जेल में काटनी पड़ती, उनकी प्रशंसा करते हुए बोले कि वह व्यक्ति लोगों का मसीहा था। यही कारण है कि मिट्टी देने आए लोगों को श्रद्धांजलि अर्पित करने से रोकने में प्रशासन असमर्थ रहा। हालांकि इस संबंध में अफजाल अंसारी की डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट से बहस भी हो गई, जिनका कहना था कि धारा 144 लगी हुई है और केवल परिवार के लोग ही मिट्टी देने जा सकते हैं, जिस पर अफजाल ने कहा कि ऐसा कोई क़ानून नहीं जो श्रद्धालुओं को मिट्टी देने से रोके अथवा उन पर पाबंदी लगाए। इससे ये बात स्थापित हो गई कि भले ही मुख्तार एक जघन्य अपराधी था, उसका बड़ा दबदबा था और गाज़ीपुर के लोगों में उसकी छवि मसीहा और रॉबिन हुड समान थी। यह कुछ इसी प्रकार से था जैसे कुख्यात सियासी अपराधी शहाबुद्दीन अपने चाहने वालों के लिए मसीहा और रॉबिन हुड थे। यहां इन बदनाम जमानत राजनेताओं के गुनाह धोकर उन्हें सफ़ेद पोश बना कर पेश करने का कोई यत्न नहीं है, बल्कि तस्वीर का दूसरा रुख दिखाने का प्रयास है, क्योंकि अपराधी चाहे कितना भी बड़ा रॉबिन हुड क्यों न हो, क़ानून के लंबे हाथों से बच नहीं सकता।

रही बात सीवान (बिहार) के बाहुबली शहाबुद्दीन की तो कोविड-19 संक्रमण के कारण निधन हो गया। मृत्यु से पूर्व वह जेल में ही कोरोना वायरस के संक्रमण की चपेट में आया था और दिल्ली स्थित दीन दयाल उपाध्याय अस्पाल में इलाज चल रहा था। राष्ट्रीय जनता दल के पूर्व नेता शहाबुद्दीन को सुप्रीम कोर्ट के आदेश के बाद 2018 में बिहार की सीवान जेल से तिहाड़ जेल लाया गया था, क्योंकि उसके विरुद्ध भी कई आपराधिक मुकदमे थे। एक मित्र, जो पेशे से वकील थे, उन्होंने शहाबुद्दीन की मृत्यु पर रोष प्रकट करते हुए कहा कि वह एक दयावान व्यक्ति थे क्योंकि जब एक बार वह ट्रेन से फर्स्ट क्लास डिब्बे में यात्रा कर रहे थे और उनकी एक सीट कम थी तो शहाबुद्दीन के पास एक अतिरिक्त सीट थी, जिसे उन्होंने बिना कुछ लिए उनको दे दिया।

जहां तक लैंड माफिया अतीक और उनके भाई अशरफ की बात है तो उसके बारे में कुछ भी कहना काम है, क्योंकि लोगों के सामने ही और पुलिस के होते हुए हत्यारों ने गोलियों से भून दिया और पुलिस हाथ पर हाथ धरे बैठी रही। अतीक के क्षेत्र के लोगों का कहना है कि कई बार के विधायक, अतीक और उनके भाई को जिस प्रकार से अस्पताल ले जाते समय मौत के घाट उतार दिया गया, प्रशासन और पुलिस को शक के दायरे में लाता है। चाहे वह शाहबुद्दीन हो, अतीक व उनका भाई हो या मुख्तार अंसारी हो, तीनों को डर था कि न्यायिक हिरासत में वे सुरक्षित नहीं हैं और उनके साथ कुछ भी अनहोनी हो सकती है, मगर तस्वीर का दूसरा पहलू यह भी है कि कोर्ट ने मुख्तार को जेल में ज़हर दिए जाने के बारे में उनके पुत्र उमर द्वारा लगाए गए आरोप पर इंक्वायरी का आदेश दिया है।

मुख्तार के कुछ रिश्तेदारों का मानना है कि पूर्ण प्रशासन पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट से लेकर न्यायालय तक इंक्वायरी कराए जाने तक सब मिले हुए हैं और कोई भी ठीक रिपोर्ट नहीं देने वाला। वास्तव में ऐसा नहीं सोचना चाहिए, मगर कई लोगों का यह शगल होता है कि राजनीती से अधिकतम रेवड़ियां कमाने के लिए वे किसी भी दूषित विचाराधारा से चिपट जाते हैं। कहीं न कहीं प्रशासन पर भरोसा करना ही पड़ता है, और हमें अंत में सब कुछ भगवान पर छोड़ देना चाहिए।

जांच एजेंसियों की कार्रवाई पर राजनीति ठीक नहीं

राजेश माहेश्वरी

केंद्र की मोदी सरकार भ्रष्टाचार पर नो टालरेंस की नीति पर सख्ती से अमल कर रही है। अक्सर राजनीतिक दलों और नेताओं के भ्रष्टाचार पर मौन सहमति के दिन अब लद गए हैं। अब जांच एजेंसियां भ्रष्टाचार से जुड़े हर छोटे-बड़े मामले पर तत्परता से कार्रवाई कर रही हैं। जांच एजेंसियों की राडार पर सरकारी अफसर, कर्मचारी, नेता और कंपनिया हैं। पिछले दो-तीन साल में जांच एजेंसियों ने ताबड़तोड़ कार्रवाई भ्रष्टाचारियों के खिलाफ एक्शन लेकर नई मिसाल कायम की है लेकिन जब बात राजनीतिक भ्रष्टाचार की होती है तो इस मुद्दे पर सारे राजनीतिक दलों में मौन सहमति और समझ दिखाई देती है लेकिन 2014 में प्रधानमंत्री की कुर्सी पर बैठने के बाद प्रधानमंत्री मोदी ने 'न खाऊंगा और न खाने दूंगा' का नारा देकर भ्रष्टाचार के खिलाफ जो मुहिम चलाई थी, आज उसका असर साफ तौर पर दिखाई देता है। इस मुहिम में सबसे खास बात यह है कि अब जांच एजेंसिया सिर्फ सरकारी अफसरों और कर्मचारियों को ही नहीं राजनीतिक दलों और नेताओं के भ्रष्टाचार पर भी ताबड़तोड़ कार्रवाई कर रही हैं।

जांच एजेंसियों की कार्रवाई जब किसी नेता पर होती है तो वो इसे सरकार की साजिश और राजनीति से प्रेरित बताने में पलभर की भी देरी नहीं करता। वहीं जांच एजेंसियों के छापों को निंदा और आलोचना भी शुरू हो जाती है। जांच एजेंसियों की निष्पक्षता पर सवाल खड़े किये जाते हैं। और तो और कई मामलों में जांच एजेंसी पर जानलेवा हमले तक किये जाते हैं। जांच एजेंसियां भले ही सरकार के अधीन आती हैं लेकिन उनकी भी जवाबदेही देश के कानून और संविधान के प्रति है। जांच एजेंसियां बिना किसी कारण के या सुबूत के अभाव में कैसे किसी पर कोई कार्रवाई कर सकती हैं। जांच एजेंसियों को सरकार का टूल बताना असल में यह साबित करता है कि ऐसे लोगों का देश के संविधान के प्रति कोई सम्मान नहीं है।

असल में जांच एजेंसियां सरकार के अधीन कार्य करती हैं और उसी के आदेश पर कार्रवाई करती हैं। इस कारण उनकी हर कार्रवाई को राजनीतिक चश्मे से देखा जाता है। किसी भी देश में जांच एजेंसियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। भारत की कुछ जांच एजेंसियों की विश्वभर में साख है। कार्रवाई करने पर विपक्ष का हो-हल्ला शुरू हो जाता है। विपक्ष ऐसी कार्रवाई को सत्ता से प्रभावित मान सवाल उठाता है।

पिछले दो-तीन महीने में ऐसे कई प्रकरण सामने आए जब राजनीतिक दलों और नेताओं ने जांच एजेंसियों को सवालों के कठघरे में खड़ा किया। बीती जनवरी को प्रवर्तन निदेशालय यानी ईडी पश्चिम बंगाल के राशन घोटाले में तृणमूल कांग्रेस के नेता शाहजहां शेख के आवासों पर छापेमारी करने गई थी। इस दौरान ईडी के अधिकारियों की गाड़ियों पर पत्थरबाजी की गई। आरोप टीएमसी नेता शाहजहां शेख के समर्थकों पर लगा। अधिकारियों पर हमले के बाद राज्यपाल सीवी आनंद बोस ने ममता सरकार को कानून व्यवस्था संभालने की हिदायत दी।

ईडी ने एक बयान में कहा कि हमलावर लाठी, पत्थर और ईंट से लैस थे। इस घटना में ईडी के तीन अधिकारी गंभीर रूप से घायल हो गए। घायल ईडी अधिकारियों को इलाज के लिए अस्पताल में भर्ती कराया गया है। हिंसक भीड़ ने ईडी अधिकारियों के निजी और आधिकारिक सामान जैसे उनके मोबाइल फोन, लैपटॉप, नकदी, वॉलेट आदि भी छीन लिए। इसके साथ ही ईडी के कुछ वाहनों को भी बुरी तरह क्षतिग्रस्त कर दिया गया।

वहीं भ्रष्टाचार के आरोपों में घिरे झारखंड के मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन को ईडी जांच के लिए समन पर समन भेजती रही लेकिन वो जांच एजेंसी के सामने पेश नहीं हुए। आखिरकार दबाव पड़ने के बाद हेमंत सोरेन की गिरफ्तारी हो पाई। ऐसा ही मामला दिल्ली के मुख्यमंत्री केजरीवाल से जुड़ा है। करोड़ों रुपये के शराब घोटाले में जांच एजेंसी केजरीवाल से पूछताछ करना चाहती थी। एजेंसी ने 9 समन केजरीवाल का भेजे, लेकिन वो कोई न कोई बहाना बनाकर समन को टालते रहे। कोर्ट से जब उन्हें राहत नहीं मिली तो ईडी ने उन्हें गिरफ्तार करने में देरी नहीं की। केजरीवाल और उनकी पार्टी के नेता केजरीवाल की गिरफ्तारी के बाद भी झूठे तथ्य और खबरें फैलाने से बाज नहीं आ रहे हैं। ये हालात तब हैं जब इसी मामले में आम आदमी पार्टी के दो बड़े नेता मनीष सिसोदिया और संजय सिंह महीनों से जेल की रोटियां खाने को मजबूर हैं।

आम आदमी पाटी के नेता केजरीवाल की गिरफ्तारी से बुरी तरह बौखलाये हुए हैं। आप नेता केंद्र सरकार पर जांच एजेंसियों के दुरुपयोग का आरोप लगा रहे हैं। दिल्ली के शराब घोटाले के तार दक्षिण भारत तक से जुड़े बताये जाते हैं। आम आदमी पार्टी के नेताओं के अलावा आधा दर्जन से ज्यादा इस केस से जुड़े लोग भी सलाखों के पीछे हैं। बावजूद इसके आप के नेता बड़ी बेशर्मी से जांच एजेंसी की निष्पक्षता और कार्रवाई पर सवाल उठाने से बाज नहीं आ रहे। जो केजरीवाल किसी समय में खुद को कट्टर ईमानदार बताते थे। अगर वो इतने ही पाक साफ हैं तो उन्हें स्वयं जांच एजेंसी के सामने पेश होकर अपनी स्थिति साफ करनी चाहिए थी लेकिन वो जांच एजेंसी के सामने पेश होने से बचते रहे। केजरीवाल का यही आचरण उन्हें संदेह के घेरे में लाता है और आज अपने कर्मों की वजह से ही वो गिरफ्तार भी हुए हैं और अगर वो पाक साफ हैं तो उन्हें न्यायालय से जरूर न्याय भी मिलेगा।

जांच एजेंसियां न तो किसी राजनीतिक दल के अधीन होती हैं, न केंद्र सरकार का ही कोई हस्तक्षेप रहता है। यह पुख्ता साक्ष्य के बाद संवैधानिक रूप से समन जारी करती हैं और अपनी बेगुनाही के प्रमाण प्रस्तुत करने का अवसर भी देती हैं। ऐसे में जब किसी राजनीतिक दल के भ्रष्टाचारी को ये जांच एजेंसियां पकड़ती हैं तो वे इन पर आरोप लगाने लगते हैं। सही तो यही होगा कि शोर मचाने और आरोप लगाने के बजाय जांच एजेंसियों को अपना काम करने दें।

जांच एजेंसियां अपना काम निष्पक्ष होकर बढ़िया तरीके से करती हैं लेकिन राजनीतिक पार्टियों की दखलंदाजी की वजह से चर्चाओं में आ जाती हैं। जिस दल के नेता पर कार्यवाही होती है वही बेवजह टीका-टिप्पणी करने लगते हैं। सीबीआई हो या ईडी में काम करने वाले हैं तो अपने ही समाज के। कई बार तो जांच एजेंसियों वाले कार्मिकों का तुरंत तबादला भी हो जाता है। भ्रष्टाचार इतना फैल रहा है जिसकी कोई सीमा नहीं। अपने दांव-पेंच लगाकर मामलों को रफा-दफा करने के चक्कर के कारण भी ये चर्चा में आ जाती हैं।

जांच एजेंसियां सत्ताधारी राजनीतिक दल के हाथों की कठपुतलियां बन गई हैं, यह सोच विपक्षी दलों ने बना ली है। इन विरोधियों ने अपनी इस सोच के सहारे जनता को भी काफी हद तक अपने प्रभाव में ले लिया है। यही वजह है कि जांच एजेंसियां अपना काम अच्छा करे या बुरा, बुराई का ठीकरा इनके सिर ही फोड़ने का सिलसिला चल निकला है। कोई भी जांच हो, देश भर में उनके विरोध में बार-बार सवाल उठाना एक चलन-सा बनता जा रहा है। आजकल जांच एजेंसियों पर राजनीति हावी है। जांच एजेंसियों का गठन संविधान के नियमों के अंतर्गत हुआ है। ऐसे में जांच एजेंसियों की भी यह जिम्मेदारी बनती है कि वो किसी के भी दबाव में न आकर निष्पक्ष और स्वतंत्र रहकर ही कार्य करें ताकि उन पर कोई उंगली न उठा सके और आम आदमी को कभी उनकी निष्पक्षता पर संदेह न हो।

मेरी जीत लोकसभा से मेरे निष्कासन का करारा जवाब होगी : मोइत्रा

कोलकाता, (पंजाब केसरी): पश्चिम बंगाल की कृष्णानगर सीट से बड़े अंतर से अपनी जीत का दावा करते हुए टीएमसी की वरिष्ठ नेता महुआ मोइत्रा ने कहा कि उनकी जीत पिछले साल उन्हें लोकसभा से निष्कासित करने और 'नकद के बदले सवाल पूछने' के मामले में केंद्रीय एजेंसियों द्वारा उनकी प्रतिष्ठा को धूमिल करने की साजिश का करारा जवाब होगी। मोइत्रा ने कहा कि संवैधानिक लोकतंत्र को खत्म करने के भाजपा के सभी प्रयासों के बावजूद, भारत इतना महान देश है कि इसे फासीवादी ताकतें नष्ट नहीं कर सकतीं। टीएमसी ने मोइत्रा को पिछले साल लोकसभा से निष्कासित किए जाने के बाद कृष्णानगर सीट से फिर से टिकट दिया है। उन्होंने ईडी और सीबीआई पर भगवा खेमे के राजनीतिक एजेंट के तौर पर काम करने का आरोप लगाया।

> ● भाजपा के सभी प्रयासों के बावजूद, भारत इतना महान देश है कि इसे फासीवादी ताकतें नष्ट नहीं कर सकती

मोइत्रा ने साक्षात्कार में कहा कि निर्वाचन आयोग ने अपनी स्वतंत्रता खो दी है क्योंकि आयुक्तों का चयन उस समिति द्वारा किया जाता है जहां केंद्र के पास दो-तिहाई बहुमत है। मेरी जीत में कोई संदेह नहीं है। यह इस बारे में है कि अंतर कितना बड़ा होगा, जिसका फैसला चार जून को होगा। मैं यहां रहती हूं और पिछले पांच वर्षों से अपने लोगों के बीच हूं और उससे पहले भी एक विधायक के रूप में उनके बीच थी। इसलिए यह एक बहुत मजबूत संबंध है, और सच कहूं, तो यहां ऐसा बिल्कुल नहीं लग रहा है कि कोई चुनाव हो रहा है।

मोइत्रा ने 2019 के चुनाव में 60,000 से अधिक मतों के अंतर से जीत हासिल की थी और उन्हें कुल 45 प्रतिशत मत मिले थे। मेरी जीत मुझे निष्कासित करने और मेरी प्रतिष्ठा धूमिल करने की साजिश का करारा जवाब होगी। लोकसभा में अपनी मुखरता और उग्र बहस के लिए जानी जाने वाली मोइत्रा को पिछले साल दिसंबर में निचले सदन से निष्कासित कर दिया गया था। संसदीय आचार समिति की रिपोर्ट में उन्हें उपहार और रिश्वत स्वीकार करने का दोषी ठहराया गया था। जेपी मॉर्गन चेस की पूर्व निवेश बैंकर ने आचार समिति की सिफारिशों को कंगारू अदालत द्वारा पूर्वनिर्धारित मैच करार दिया था। उन्होंने दावा किया कि भाजपा देश में लोकतंत्र को खत्म करने का प्रयास कर रही है। मैं यह बात संसद में अपने पहले भाषण से ही कह रही हूं। भाजपा भारत में संवैधानिक लोकतंत्र खत्म कर रही है, लेकिन भारत इतना महान राष्ट्र है कि इन फासीवादी ठगों द्वारा इसे नष्ट नहीं किया जा सकता। यह पूछे जाने पर कि उनके निर्वाचन क्षेत्र के लोग भाजपा द्वारा प्रचारित कहानी के बजाय उनके पक्ष पर विश्वास क्यों करेंगे तो उन्होंने कहा कि वह माटी की बेटी हैं। यह मेरी कर्मभूमि और मेरी धर्मभूमि है। मेरे लोग मेरा 100 प्रतिशत समर्थन करेंगे।

नकद के बदले सवाल पूछने के विवाद की वजह से भले ही उन्हें संसद से निष्कासित कर दिया गया हो, लेकिन इसने पार्टी में उनका कद बढ़ाया है। टीएमसी के शीर्ष नेतृत्व से और समूचे विपक्ष से उन्हें समर्थन मिला है।

इस मामले में अपने परिसरों पर सीबीआई की छापेमारी और ईडी के समन को लेकर मोइत्रा ने आरोप लगाया कि वे एजेंसियां भाजपा का अभिन्न अंग हैं। वह ईडी के समन पर उसके सामने पेश नहीं हुई थी।

मोइत्रा ने हाल में निर्वाचन आयोग से शिकायत कर आरोप लगाया गया था कि भाजपा उनके अभियान को बाधित करने और चुनाव से पहले उनकी छवि खराब करने के लिए सीबीआई और ईडी का इस्तेमाल कर रही है। हालांकि उन्होंने इस मामले पर आयोग द्वारा कोई कार्रवाई करने पर संदेह व्यक्त किया था। निर्वाचन आयोग अब अपनी स्वतंत्रता खो चुका है। आयुक्तों का चयन प्रधानमंत्री और गृह मंत्री के दो-तिहाई बहुमत से किया जाता है। (पिछले महीने अरुण गोयल के इस्तीफे के बाद दो निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति के लिए) 30 मिनट में 200 नाम चुनने के लिए दिए गए। पूरी कवायद एक दिखावा है। पश्चिम बंगाल विधानसभा में करीमपुर सीट का प्रतिनिधित्व कर चुकीं पूर्व विधायक ने कहा कि विपक्षी नेता और राजनीतिक दल अभी भी आयोग को पत्र लिखते हैं, क्योंकि हमें इसे इतिहास के लिए लिखने और दर्ज करने की ज़रूरत है, और यह महत्वपूर्ण भी है।

यह पूछे जाने पर कि दोबारा निर्वाचित होने पर क्या वह नीतिगत मुद्दों पर भाजपा पर उसी तरीके से हमला जारी रखेंगी, मोइत्रा ने कहा, आप क्या सोचते हैं... मैं अपनी सीट पर वापस जाऊंगी और भाजपा के लिए भजन गाऊंगी? टीएमसी नेता ने कहा कि सीएए नियमों के लागू होने से उनके निर्वाचन क्षेत्र पर ज्यादा प्रभाव नहीं पड़ेगा, जहां काफी संख्या में मतुआ लोग रहते हैं।

दिल्ली आर.एन.आई. नं. 40474/83
पंजाब केसरी
दिल्ली कार्यालय :
फोन आफिस: 011-30712200, 45212200,
प्रसार विभाग: 011-30712224
विज्ञापन विभाग: 011-30712229
सम्पादकीय विभाग: 011-30712292-93
मैगजीन विभाग: 011-30712330
फैक्स : 91-11-30712290, 30712384, 011-45212383, 84
Email: Editorial@punjabkesari.com

स्वत्वाधिकारी दैनिक समाचार लिमिटेड, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, नजदीक वजीरपुर डीटीसी डिपो, दिल्ली-110035 के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक अनिल शारदा द्वारा पंजाब केसरी प्रिंटिंग प्रैस, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से मुद्रित तथा 2, प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से प्रकाशित।

रक्षा निर्यात में बड़ी वृद्धि

वित्त वर्ष 2023-24 में देश का रक्षा निर्यात 21,083 करोड़ रुपये के स्तर पर पहुंच गया, जो 2022-23 की तुलना में 32.5 प्रतिशत अधिक है. यदि इस भारी बढ़ोतरी की तुलना वित्त वर्ष 2013-14 से की जाए, तो निर्यात में बीते एक दशक में 31 गुना वृद्धि हुई है. साल 2004-05 और 2013-14 तथा 2014-15 और 2023-24 की वृद्धि की तुलना करें, तो निर्यात 21 गुना बढ़ा है. वर्ष 2004-05 और 2013-14 के बीच 4,312 करोड़ रुपये के रक्षा उत्पादों का निर्यात हुआ था, जबकि 2014-15 से 2023-24 की अवधि में यह आंकड़ा 88,319 करोड़ रुपये जा पहुंचा. इन आंकड़ों से रक्षा उत्पादन के क्षेत्र में तीव्र विकास का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है. हालिया वर्षों में रक्षा क्षेत्र के विकास के लिए केंद्र सरकार ने अनेक महत्वपूर्ण निर्णय लिये हैं. इनमें सबसे प्रमुख है रक्षा क्षेत्र में निजी भागीदारी और विदेशी निवेश की अनुमति. इससे निवेश के साथ-साथ तकनीक हासिल करने की सुविधा भी बढ़ी तथा रोजगार के नये अवसरों का सृजन भी हुआ. तकनीक और संसाधन बढ़ने से शोध एवं अनुसंधान में भी प्रगति आयी है. नीतिगत सुधारों की सफलता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि निर्यात में 60 प्रतिशत योगदान निजी क्षेत्र है और 40 प्रतिशत की हिस्सेदारी रक्षा क्षेत्र के सार्वजनिक उपक्रमों का है. प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने उचित ही इस उपलब्धि को देश की बढ़ती क्षमता की अभिव्यक्ति बताया है. उत्पादन और निर्यात बढ़ने की दूसरी मुख्य वजह यह है कि सरकार अपनी रक्षा जरूरतों के लिए देश में बने उत्पादों को प्राथमिकता दे रही है. सरकार ने बहुत सी चीजों की एक सूची बनायी है, जिनकी खरीद देश में ही हो सकती है यानी उनका आयात नहीं किया जा सकता है. यह सूची समय-समय पर संशोधित होती है और इसमें नये उत्पादों को जोड़ा जाता है. इस निर्णय का दूसरा सकारात्मक पहलू यह है कि देश में ही खरीद कर हम बहुमूल्य विदेशी मुद्रा की बचत भी कर रहे हैं तथा आयात पर हमारी निर्भरता भी घट रही है. नीतिगत सुधारों और सरकार की खरीद से गुणवत्तापूर्ण उत्पादन को भी प्रोत्साहन मिल रहा है. इन प्रयासों से विभिन्न देशों में भारतीय रक्षा उत्पादों के प्रति भरोसा बढ़ा है और वे भारत से अपना आयात बढ़ा रहे हैं. रक्षा निर्यात को बढ़ावा देने में डिजिटल व्यवस्था से भी मदद मिली है. इससे समूची प्रक्रिया तेज और पारदर्शी हुई है. रक्षा निर्यात आर्थिक विषय होने तथा देश को आत्मनिर्भर बनाने में योगदान देने के साथ-साथ रणनीतिक और सैन्य दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है. इससे हमारी रक्षा क्षमता को मजबूती तो मिलती ही है, साथ में आयातक देशों के साथ सामरिक संबंध भी बेहतर होते हैं.

रक्षा निर्यात आर्थिक विषय होने तथा देश को आत्मनिर्भर बनाने में योगदान देने के साथ-साथ रणनीतिक और सैन्य दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है.

उत्तर-दक्षिण विभाजन की झूठी कहानी

डॉ अश्विनी महाजन
राष्ट्रीय सह-संयोजक
स्वदेशी जागरण मंच
ashwanimahajan@rediffmail.com

जैसे खाद्यान्न उपलब्ध कराने में उत्तरी राज्यों का महत्वपूर्ण योगदान है, वैसे ही औद्योगिक उत्पादन, विशेषकर इलेक्ट्रॉनिक और आईटी उत्पाद, मुहैया कराने में दक्षिणी राज्यों का बड़ा योगदान है. इस प्रकार भारत एक परिवार की तरह है और सभी राज्य इसके सदस्य हैं. परिवार में कोई छोटा या बड़ा नहीं होता, इसमें अमीर-गरीब का कोई विचार नहीं है. जरूरत इस बात की है कि सब मिलकर काम करें और अपने अभिन्न परिवार यानी भारत को समृद्ध बनाएं.

हाल में लंदन से प्रकाशित 'द इकोनॉमिस्ट' पत्रिका ने एक शरारती लेख के जरिये उत्तर और दक्षिण भारत के बीच विभाजन की नयी परिभाषा गढ़ने की कोशिश की है. पत्रिका यह दावा करने की कोशिश करती है कि दक्षिण भारतीय राज्य आर्थिक दृष्टि से शेष भारत से अलग हैं क्योंकि भारत की केवल 20 प्रतिशत आबादी पांच दक्षिणी राज्यों (आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु और तेलंगाना) में रहती है, लेकिन इन्हें कुल विदेशी निवेश का 35 प्रतिशत प्राप्त होता है. इन राज्यों ने देश के अन्य हिस्सों की तुलना में अधिक विकास किया है और जहां 1993 में ये राज्य देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में 24 प्रतिशत का योगदान करते थे, वहीं अब यह 31 प्रतिशत हो गया है. दक्षिण में 46 प्रतिशत टेक यूनिकॉर्न हैं और भारत का 46 प्रतिशत इलेक्ट्रॉनिक्स निर्यात इन्हीं पांच राज्यों से होता है. पत्रिका यह भी लिखती है कि 66 फीसदी आइटी सेवाओं का निर्यात भी दक्षिणी राज्यों से होता है. कुछ एजेंडाधर्मी लोगों को छोड़, सारा विश्व जानता है कि उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक भारत एक है. इस उपमहाद्वीप में रहने वाले लोग विविध धर्मों, जातियों, भाषाओं, क्षेत्रों, वेशभूषा और खानपान के बावजूद स्वयं को भारतीय मानते हैं. यह सच है कि भारत में अलग-अलग क्षेत्रों पर अलग-अलग समय में अलग-अलग शासकों का शासन था, लेकिन भारत के सभी लोगों के बीच एक अटूट संबंध बना रहा. देश के विभिन्न हिस्सों में स्थित हमारे ज्योतिर्लिंग, तीर्थ और धाम इस बात के गवाह हैं कि सभी भारतीय पूरे राष्ट्र को अपना राष्ट्र मानते रहे हैं और विविधताएं कभी भी इसमें बाधक नहीं बनीं.

अफसोस की बात है कि विदेशी शासन के दौरान ब्रिटिश सरकार द्वारा ऐसा साहित्य रचा गया और जानबूझकर इतिहास लेखन के माध्यम से झूठी कहानियां गढ़ी गयीं, जिससे दक्षिण भारत के लोगों के मन में उत्तर भारतीयों के खिलाफ जहर भर गया. झूठा इतिहास रचा गया कि आर्य बाहर से आये थे और उनके आक्रमण से द्रविड़ आहत होकर दक्षिण की ओर जाने को मजबूर हुए. ऐसी स्थिति में हिंदी भाषा के प्रति शत्रुता को दक्षिणी राज्यों, विशेषकर तमिलनाडु, में बढ़ावा दिया गया. कहा जाता है कि इस झूठी कहानी की शुरुआत एक जर्मन प्राच्यविद और भाषाशास्त्री ने की थी. आज प्रचुर मात्रा में वैज्ञानिक प्रमाण मौजूद हैं, जो साबित करते हैं कि आर्य आक्रमण सिद्धांत मिथक, मनगढ़ंत और काल्पनिक है. फिर भी भारत के तेज विकास से ईर्ष्या करने वाले पश्चिमी देशों द्वारा यह एजेंडा चलाया जा रहा है. दक्षिण में हुए विकास का सहारा लेकर पत्रिका ने शरारतपूर्ण तरीके से इस मुद्दे को राजनीति से जोड़ा है और कहा है कि सत्तारूढ़ भाजपा के पास दक्षिणी राज्यों में मजबूत आधार नहीं है. पत्रिका का तर्क है कि इसलिए यह कहा जा सकता है कि वर्तमान सरकार के पास पूरे देश का जनादेश नहीं है. गौरतलब है कि जिस ब्रिटेन में 'द इकोनॉमिस्ट' प्रकाशित होती है, वहां अब तक किसी भी प्रधानमंत्री को पूरे देश से समान जनादेश नहीं मिला है. क्या इसका मतलब यह है कि प्रधानमंत्री के पास पूरे देश का जनादेश नहीं है? दुनियाभर के लोकतंत्र के इतिहास में ऐसे बहुत कम उदाहरण हैं, जब सभी क्षेत्रों से समान रूप से बहुमत वोट प्राप्त कर सरकार बनी हो.

इसी तरह दक्षिण भारत के कुछ नेता भी ऐसे तर्क देकर अलगाववादी राजनीति को बढ़ावा दे रहे हैं. हम जानते हैं कि कुछ भ्रष्ट और अयोग्य नेताओं के कारण कई राज्यों का विकास बाधित हुआ, जिनमें दक्षिणी राज्य भी शामिल थे. पूर्वोत्तर के कई राज्य पूर्ववर्ती केंद्र सरकार की उपेक्षा के शिकार रहे हैं, लेकिन जम्मू-कश्मीर जैसे अनेक राज्यों को जनसंख्या के अनुपात से अधिक संसाधन मिलते रहे. हमें यह भी समझना होगा कि हमारे सभी राज्यों का विकास एक-दूसरे के सहयोग से ही हो सकता है. जहां तक विकास का सवाल है, सबसे ज्यादा प्रति व्यक्ति आय वाले दस राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों में से केवल दो दक्षिण से हैं और वह भी पांचवें और छठे स्थान पर हैं. इसकी वजह आईटी क्षेत्र है. जैसे खाद्यान्न उपलब्ध कराने में उत्तरी राज्यों का महत्वपूर्ण योगदान है, वैसे ही औद्योगिक उत्पादन, विशेषकर इलेक्ट्रॉनिक और आईटी उत्पाद, मुहैया कराने में दक्षिणी राज्यों का बड़ा योगदान है. इस प्रकार भारत एक परिवार की तरह है और सभी राज्य इसके सदस्य हैं. परिवार में कोई छोटा या बड़ा नहीं होता, इसमें अमीर-गरीब का कोई विचार नहीं है. जरूरत इस बात की है कि सब मिलकर काम करें और भारत को समृद्ध बनायें. इसके अलावा, हम 'वसुधैव कुटुंबकम' यानी संपूर्ण पृथ्वी को एक परिवार मानते हैं.

राजनीतिक उद्देश्यों वाले लोगों ने अब दक्षिणी राज्यों को कर धन के हस्तांतरण में भेदभाव का मुद्दा उठाकर उत्तर-दक्षिण विभाजन को एक और आयाम दे दिया है. कहा जा रहा है कि दक्षिणी राज्यों को केंद्रीय करों से उनके वैध हिस्से से वंचित किया गया है. उल्लेखनीय है कि कर हिस्सेदारी वित्त आयोग की सिफारिशों के आधार पर तय की जाती है. पंद्रहवें वित्त आयोग की कार्यवाही के दौरान इन राज्यों ने केंद्र सरकार के समक्ष शिकायत व्यक्त की, जिसके अनुसार वित्त आयोग को पिछले आयोग द्वारा उपयोग की जाने वाली जनसंख्या को 1971 के बजाय 2011 की जनगणना के अनुसार उपयोग करने का निर्देश दिया गया था. आयोग ने जनसांख्यिकीय प्रदर्शन यानी जनसंख्या नियंत्रण को भी महत्व दिया. दक्षिणी राज्यों में धीमी जनसंख्या वृद्धि वहां की शिक्षा और औद्योगिक विकास के कारण थी, पर अधिकतर दक्षिणी राज्य जनसांख्यिकीय लाभांश को जनसंख्या नियंत्रण द्वारा पार कर चुके हैं और प्रवासी श्रमिकों पर उनकी निर्भरता लगातार बढ़ रही है, जो आपसी सहयोग के महत्व को दर्शाता है. केंद्रीय कर हस्तांतरण में आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और केरल की हिस्सेदारी पिछले वित्त आयोग की तुलना में 15वें वित्त आयोग की सिफारिशों में कमोबेश वही रही, जबकि कर्नाटक की हिस्सेदारी 4.71 प्रतिशत से घटकर 3.64 प्रतिशत और केरल की हिस्सेदारी 2.5 प्रतिशत से घटकर 1.92 प्रतिशत हो गयी. लेकिन केंद्रीय राजस्व में हिस्सेदारी के अलावा, इन राज्यों को महत्वपूर्ण राजस्व घाटा अनुदान भी दिया गया है. इसलिए, तथ्य वित्त आयोग के कथित पूर्वाग्रह को साबित नहीं करते. राष्ट्रीय एकता और क्षेत्रीय सद्भाव के मुद्दों पर हमें अलगाववादी बयानों से बचना चाहिए क्योंकि इससे राष्ट्रीय एकता और जन कल्याण पर प्रभाव पड़ सकता है. अलगाववादी एजेंडे में शामिल अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों और मीडिया से भी सख्ती से निपटा जाना चाहिए.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

अर्थशास्त्र का नोबेल पुरस्कार पाने वाले एक मनोवैज्ञानिक

मधुरेंद्र सिन्हा
आर्थिक विशेषज्ञ
mpsinha9@gmail.com

कानमैन ने बड़ी अच्छी बात बतायी कि 100 डॉलर मिलने पर खुशी तो होती है, लेकिन इतने का नुकसान होने पर दुख उसका दुगना होता है, जबकि यह उसके बराबर ही होना चाहिए. यह एक स्वाभाविक और व्यावहारिक सी बात है. उन्होंने यह भी बताया कि अपने खरीदे हुए शेयरों के भाव जानने के लिए हमेशा स्टॉक मार्केट में अपने शेयरों की कीमतें नहीं देखते रहना चाहिए.

नोबेल पुरस्कारों की दुनिया में एक ऐसा यादगार नाम भी है, जिसे अपने विषय की बजाय दूसरे विषय में पुरस्कार मिला. हम बात कर रहे हैं डैनियल कानमैन की. उनका मूल विषय मनोविज्ञान था, जिसमें वे खूब सम्मानित हुए थे, लेकिन अपने शोध से वे एक अर्थशास्त्री की भी भूमिका निभाने लगे. वे मनुष्य के सामान्य व्यवहार से इतर यह मानते थे कि पैसे और खर्च के मामले में मानवीय व्यवहार हमेशा तर्कसंगत नहीं रहता, यानी मनुष्य हमेशा नपे-तुले ढंग से खर्च नहीं करता और न ही उसकी सोच उस पर आधारित होती है. वह तर्कों से परे भी सोचता है. इसे व्यवहारपरक अर्थशास्त्र कहते हैं. इस विषय को कानमैन ने अपने सहयोगी एमोस टेवेरस्की के साथ खोजा. 1996 में टेवेरस्की के निधन के बाद इस विषय पर कानमैन अकेले ही काम करते रहे. इसी विषय पर 2002 में कानमैन को प्रतिष्ठित नोबेल पुरस्कार मिला. चूंकि यह सम्मान मरणोपरांत नहीं मिलता, इसलिए टेवेरस्की इस ख्याति से वंचित रह गये. इसका दुख कानमैन को जीवन भर रहा. उनका कहना था कि मेरा दोस्त भी नोबेल पुरस्कार का उतना ही अधिकारी था जितना मैं.

कानमैन ने जो शोध किया और बताया, वह यह था कि मनुष्य की सोच खर्च के मामले में व्यवहारपरक होती है. यह था उनका व्यवहारपरक अर्थशास्त्र. इस सिद्धांत ने काफी हलचल मचायी और परंपरागत अर्थशास्त्र से इतर एक नया अर्थशास्त्र गढ़ दिया. यह अर्थशास्त्र मनोविज्ञान पर आधारित है और यही मनुष्य के निर्णयों और व्यवहार को नियंत्रित करता है. यह मनोविज्ञान से प्रभावित होती है. कानमैन ने इसे मनुष्य के दिमाग की गुत्थी बताया और कहा कि घाटा होने पर मनुष्य का व्यवहार बदल जाता है, क्योंकि वह इससे नफरत करता है और उसके अनुसार ही सोच रखता है. कानमैन ने बड़ी अच्छी बात बतायी कि 100 डॉलर मिलने पर खुशी तो होती है, लेकिन इतने का नुकसान होने पर दुख उसका दुगना होता है, जबकि यह उसके बराबर ही होना चाहिए. यह एक स्वाभाविक बात है. उन्होंने यह भी बताया कि अपने खरीदे हुए शेयरों के भाव जानने के लिए हमेशा स्टॉक मार्केट में अपने शेयरों की कीमतें नहीं देखते रहना चाहिए. इससे एक अलग तरह की तकलीफ होती है, जिसकी वजह से व्यक्ति बहुत अस्थिर और हताश सा होने लगता है. यह एक सामान्य व्यवहार है.

कानमैन के सिद्धांतों को 2011 में प्रकाशित उनकी पुस्तक 'थिंकिंग फास्ट एंड स्लो' ने स्थापित किया. यह पुस्तक न केवल विद्वानों, बल्कि आम जनता को इतनी पसंद आयी कि अपने समय की बेस्ट सेलर किताब बन गयी. यह विज्ञान की सर्वश्रेष्ठ किताबों में शुमार की गयी. इसमें कानमैन ने मनुष्य के पूर्वाग्रहों के बारे में विस्तार से चर्चा की है और बताया है कि ये उसके फैसलों में बदलाव ले आते हैं. कानमैन के शागिर्द और विद्वान शेन फ्रेडरिक, जो अमेरिका के प्रसिद्ध येल स्कूल ऑफ मैनेजमेंट के प्रोफेसर हैं, उनके सिद्धांतों की प्रशंसा करते हुए कहते हैं कि कानमैन ने अर्थशास्त्र को एक सच्चा व्यवहारपरक विज्ञान बना दिया है. वह अस्थिर धारणाओं के समूह का महज एक गणितीय अभ्यास नहीं रह गया है. यह मानवीय व्यवहार पर पूरी तरह आधारित है. मनुष्य का विवेक समय और परिस्थितियों के साथ बदल जाता है.

स्मृति शेष

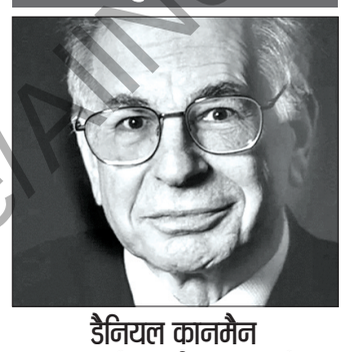

डैनियल कानमैन
जन्म : 05 मार्च 1934, निधन : 27 मार्च 2024

नब्बे साल की आयु में कानमैन का निधन 27 मार्च, 2024 को हो गया. उनका जन्म तेल अवीव में हुआ था. उन्होंने मनुष्यों के फैसले लेने के मनोविज्ञान पर गहरा अध्ययन किया था. उन्होंने आधुनिक आर्थिक सिद्धांतों पर मानवीय विवेक की बात को चुनौती दी और इस तरह से व्यवहारपरक अर्थशास्त्र को जन्म दिया. यहूदी होने के कारण अपने प्रारंभिक जीवन में उन्हें तकलीफ उठानी पड़ी. बाद में वे परिवार के साथ पेरिस चले गये थे. नाजियों के शासन काल में वे पेरिस में ही थे. वर्ष 1954 में उन्होंने यूनिवर्सिटी ऑफ यरुशलम से विज्ञान में स्नातक की डिग्री ली. उनका मुख्य विषय अर्थशास्त्र था. साल 1958 में वे आगे पढ़ने के लिए अमेरिका चले गये. वहां उन्होंने यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया से मनोविज्ञान में पीएचडी किया. उनका विवाह इराह से हुआ, जिनका 1978 में निधन हो गया. इसके बाद उन्होंने ऐनी ट्रीसमैन से विवाह किया, जो एक अर्थशास्त्री थीं, लेकिन 2018 में वे भी चल बसीं. कानमैन अमेरिका के प्रिंसटन यूनिवर्सिटी में 1993 से 2024 तक जुड़े रहे. कानमैन के कार्यों को बीसवीं सदी के विज्ञान की एक शानदार उपलब्धि माना जाता है. उन्होंने अर्थशास्त्र को मनोविज्ञान से जोड़कर उसके बारे में सोचने का तरीका ही बदल दिया.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

देश दुनिया

हैती के शरणार्थियों को लेकर अमेरिकी योजना

मार्च में, हैती में सामूहिक हिंसा भड़कने और आपातकाल की घोषणा के बीच अमेरिका ने स्पष्ट कर दिया कि हमेशा की तरह अपनी जान बचाकर भागने वाले हैतीवासियों का अमेरिकी तटों पर स्वागत नहीं किया जायेगा. संभवतः इसी कारण हैती के शरणार्थियों को अमेरिका जाने से रोकने के लिए उन्हें ग्वांतानामो खाड़ी में नौसैनिक अड्डे पर ले जाने की तैयारी की जा रही है, जो क्यूबा के कब्जे वाले क्षेत्र में स्थित है. ऐसा पहली बार नहीं हुआ है जब अमेरिका ने हैती शरणार्थियों को ग्वांतानामो खाड़ी में भेज उन्हें देश में प्रवेश करने से रोक दिया है.

वास्तव में, 1990 के दशक में इस नौसैनिक अड्डे पर पहले मेहमान हैतीवासी ही बने थे. वह भी तब जब 1991 में हैती के तत्कालीन राष्ट्रपति जीन-बर्ट्रेंड अरिस्टाइड के विरुद्ध अमेरिका समर्थित सैन्य तख्तापलट के बाद हजारों लोगों ने हैती से भागने का प्रयास किया था और ऐसा करने वाले हजारों लोगों को अनिश्चित काल के लिए हिरासत में ले लिया गया था. यह 2001 में 'आतंकवाद के विरुद्ध युद्ध' की शुरुआत से लगभग एक दशक पहले की बात है. वर्ष 2010 में आये विनाशकारी भूकंप के बाद एक बार फिर उसी वर्ष ग्वांतानामो को हैती के शरणार्थियों के लिए संभावित शरणस्थली के रूप में नामित किया गया था. यहां पूर्वानुमानित समुद्री पलायन नहीं हुआ था, परंतु, अमेरिकी वायु सेना के एक मालवाहक विमान को तुरंत ही भूकंप से तबाह हुए स्थान पर प्रतिदिन पांच घंटे उड़ान भरने के लिए भेजा गया था. उस उड़ान से अमेरिका में हैती के राजदूत रेमंड जोसेफ का एक संदेश प्रसारित किया गया था कि देश छोड़ने के लिए नावों पर मत जाओ, क्योंकि यदि तुम्हें लगता है कि अमेरिका पहुंचने पर तुम्हें अपने लिए वहां के दरवाजे खुले मिलेंगे, तो ऐसा बिल्कुल नहीं है. फिलहाल, यह देखना बाकी है कि क्या इस मामले में इतिहास दोहराया जाता है.

-बेलेन फर्नांडीस

बोधि वृक्ष

संसार और परिवर्तन

'जो बच्चा जन्म लेता है, वह मुट्ठी में भाग्य बंद करके आता है. बच्चे से कितना भी खुलवाइए, वह इसे नहीं खोलता. केवल पुरुषार्थ से यह भाग्य खुलता है. वास्तव में, हर व्यक्ति अपना भाग्य आजमाने अकेला आया है. उसे एक परिवार, कुछ धन-वैभव मिला है. उम्र के प्रभाव से वह बड़ा होता है, मकान बनाता, लोगों को काम पर रखता, उनका पेट भरता है. कितनों पर अधिकार जमाता है, कितनों के सामने गिड़गिड़ाता है. पर जाते समय उसके हाथ फैल जाते हैं, उंगलियां तन जाती हैं. बंद मुट्ठी को खुली लेकर जाता है. मानव जीवन की यही विचित्रता है. मनुष्य जो भाग्य लेकर आया था, उसे पुरुषार्थ से पाया, आजमाया, फिर चल दिया. यह विचित्र परिवर्तन ही संसार का नियम है. जीवन में इन परिवर्तनों से शरीर ही नहीं, मन-भाव, सोच-विचार, संकल्प-धारणाएं, आवश्यकताएं, योजनाएं सब कुछ बदलती हैं. वे बहुत सौभाग्यशाली होते हैं, जो इन परिवर्तनों को समझ पाते और इनके बीच अपने को संभाल पाते हैं. हमारे ऋषियों ने शोध करके बदलती दुनिया व बदलते आयु के बीच मनुष्य को संभलने के लिए जीवन के चार आश्रम- ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं संन्यास बनाये और इन्हें जीवन को अमर बना लेने के राजमार्ग का दर्जा दिया. इन बदलावों के साथ जो परिश्रम करते, संतोष पाते हैं. शरीर-मन से काम करते, भावनाओं के साथ पवित्रता अपनाते, ईश्वर-गुरु को अपना हृदय-बुद्धि सौंप कर चलते हैं, वे अंत समय तक हंसते-खिलखिलाते, सुख-संतोष से भरे रहते हैं. गुरु-ईश्वर से जुड़े व्यक्तियों का जीवन शानदार बीतता है. पर जो ईश्वर व गुरु अनुशासन को तोड़ते हैं, उनके साथ जटिलताएं आती हैं. इसके बावजूद आयु के साथ मनोदशा का बदलना कटु सत्य है. ऋषियों एवं स्वास्थ्य विज्ञान के अनुसार मानक अपनाया जाए, तब भी मानसिकता एवं शरीर विन्यास अपनी उम्र अनुरूप लक्षण प्रकट करने ही लगते हैं. अतः जरूरी है कि व्यक्ति आयु के अनुसार संतों-ऋषियों द्वारा निर्धारित मानकों का पालन तो करे ही, आयु अनुसार प्रकट होने वाले लक्षणों को लेकर सावधान भी रहे.

-श्री सुधांशु जी महाराज

कुछ अलग

बना रहे मेलजोल का मानस

डॉ मोनिका शर्मा
टिप्पणीकार
monikasharma.writing@gmail.com

भारतीय संस्कृति में रचे-बसे अधिकतर पर्व मेलजोल और सामाजिकता को बढ़ावा देते हैं. मन-जीवन के साझेपन को पोसते हैं. भावनाओं की कड़ियां जोड़ते हैं. संवेदनाओं को आधार देते हैं. जिसके चलते हर स्तर पर आपसी जुड़ाव को बल मिलता है. विचारणीय है कि पहले यह जुड़ाव केवल मिल-जुलकर पर्व मानने तक ही सीमित नहीं था. समग्र जीवन ही सहभागिता की धुरी पर दौड़ता था. हां, बदलते मौसम की दस्तक और परंपराओं के रंग साथ लाने वाले पर्व-त्योहार इसे और गति देने वाले जरूर साबित होते.

हालिया बरसों में जुड़ाव का यह रंग-ढंग पूरी तरह बदल गया है. बड़े शहरों की सोसायटी, योजनागत त्योहारी आयोजनों और थीम आधारित उत्सवीय कार्यक्रमों में भागीदार बनने वाले लोग अगले ही दिन से फिर अकेले हो जाते हैं. एक दिन की धूमधाम और साथ के बाद आम दिनचर्या में किसी का किसी से कोई मेलजोल नहीं रहता. यही वजह है कि उत्सवीय रौनक में भी बहुत कुछ औपचारिक सा लगता है. न अकेलापन पीछा छोड़ता है, न ही असामाजिकता का स्याह घेरा टूटता है. ऐसे हालात मन और शरीर दोनों को प्रभावित करते हैं. सहभागी समाज बनाने के बजाय एकाकीपन को बढ़ावा देते हैं. यूएस सेंटर फॉर डिजीज कंट्रोल एंड प्रिवेंशन के मुताबिक, नियमित सामाजिक बंधनों की दृढ़ता को जीने वाले लोगों के जीवित रहने की संभावना उनकी तुलना में 50 प्रतिशत अधिक होती है, जिनके सामाजिक संबंध कम होते हैं. भावनात्मक समर्थन हर दिन जीवन में नयी ऊर्जा का संचार करता है. यह हर आयुवर्ग के लोगों को प्रभावित करता है. असल में सामाजिक संबंधों को सार्थक और नियमित सामाजिक आदान-प्रदान, दूसरों के साथ गहरे जुड़ाव और जरूरत के समय सहायता के लिए किसी व्यक्ति का साथ देने के रूप में समझा जाता है. अध्ययन बताते हैं कि परिवार, मित्र, पड़ोसी, सहकर्मी या दूसरे लोगों के साथ सहज स्थायी संबंध रखने वाले लोग अधिक खुश एवं स्वस्थ रहते हैं. ऐसे में त्योहारी मौके पर एक तयशुदा समय के लिए साथ रहने के बाद आपस में सहज संवाद तक न रहना तकलीफदेह है.

बुनियादी रूप से हर मनुष्य सामाजिकता को जीने वाला होता है. कभी परिस्थितियां, तो कभी मनःस्थिति, लोगों से दूरी बनाने की ओर ले जाती हैं. हमारे पर्व-त्योहार इसी दूरी को पाटने का माध्यम रहे हैं. इसे अपने परिवेश से कहीं पीछे छूट जाने वाले मनुष्य को फिर साथ ले लेने की सुंदर सार्थक रणनीति भी कहें, तो गलत नहीं होगा. कितनी मानवीय रीति-नीति ऐसी है जो उमंग और साथ को जीने का अवसर बनाती है. जरूरत इस बात की है कि मन का गठजोड़ आम दिनों में भी बना रहे. सहभागिता के रंग हर दिन हमारे जीवन को नयी आभा से रंगते रहें.

आपके पत्र

महंगा हुआ चुनाव मैदान में उतरना

साधारण व्यक्ति भारत में चुनाव लड़ने की सोच भी नहीं सकता. क्योंकि चुनाव मैदान में उतरने के लिए उसके पास करोड़ों रुपये होने चाहिए. इस बार लोकसभा चुनाव में प्रचार की खर्च सीमा चुनाव आयोग ने 95 लाख रुपये तय की है. लेकिन, जमीनी सच्चाई कुछ और है. अनुमान है कि 2019 के चुनाव में 60 हजार करोड़ रुपये का खर्च हुआ होगा. इस बार इससे दोगुना खर्च होने का अनुमान है. दरअसल, चुनाव जीतने के लिए राजनीतिक पार्टियां और उम्मीदवार पानी की तरह पैसा बहाते हैं. इस पर लगाम जरूरी है.

युगल किशोर राही, छपरा

अतिथि शिक्षकों को हटाना गलत

बिहार सरकार के आदेशानुसार 38 जिलों में छह वर्षों से कार्यरत 4257 अतिथि शिक्षकों की सेवा एक अप्रैल से समाप्त कर दी गयी है. यह न्यायसंगत नहीं है. इससे एक झटके में सभी अतिथि शिक्षक बेरोजगार हो गये हैं. अब इन शिक्षकों के सामने परिवार के भरण-पोषण का संकट खड़ा हो गया है. अतिथि शिक्षक इसका विरोध भी जता रहे हैं. लेकिन, सरकार या शिक्षा विभाग अपने फैसले पर विचार करने के मूड में नहीं दिखता है. सरकार को चाहिए कि अतिथि शिक्षकों को एडजस्ट करना चाहिए.

बंधु मुन्ना, मरौना (सुपौल)

दैनिक जागरण

इच्छाशक्ति से किसी भी बाधा को दूर किया जा सकता है

कच्चातिवु पर तकरार

चुनावों के समय कब कोई नया मुद्दा उठ जाए या किसी पुराने मुद्दे को नए सिरे धार दे दी जाए, इसका ठिकाना नहीं होता। कच्चातिवु का मुद्दा ऐसा ही है। भाजपा इस मुद्दे पर इसीलिए आक्रामक है, क्योंकि तमिलनाडु में सत्तारूढ़ द्रमुक जब-तब यह मांग करती रही है कि एक समझौते के तहत श्रीलंका को सौंपे गए इस द्वीप को वापस लिया जाए। वह इस मांग को लेकर मोदी सरकार पर दबाव भी बनाती रही है, लेकिन सूचना अधिकार कानून से मिली इस जानकारी ने उसे निरुत्तर सा कर दिया है कि प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने जब इस द्वीप को श्रीलंका को देने का समझौता किया था तो उस समय तमिलनाडु में सत्तारूढ़ द्रमुक भी इसके पक्ष में थी। भाजपा ने इस तथ्य को सामने रखकर जो सवाल उठाए हैं, उनका जवाब न तो द्रमुक को देते बन रहा और न ही कांग्रेस को। जहां द्रमुक के पास केवल यही कहने को है कि आखिर भाजपा को अब यह मसला क्यों याद आ रहा है, वहीं कांग्रेस कच्चातिवु समझौते पर कुछ कहने के स्थान पर यह आरोप उछाल रही है कि मोदी सरकार ने भी तो बांग्लादेश को कुछ इलाके दिए थे। वह यह भूल रही है कि बांग्लादेश को कुछ इलाके दिए गए थे तो कुछ उससे लिए भी गए थे। कच्चातिवु को श्रीलंका को सौंपने से तो भारत घाटे में ही रहा।

यह ठीक है कि कच्चातिवु को श्रीलंका को सौंपने के दशकों पुराने समझौते को आसानी से तोड़ा नहीं जा सकता, लेकिन इसकी तह तक तो जाना ही चाहिए कि आखिर इस द्वीप को श्रीलंका को देने के बदले भारत को हासिल क्या हुआ? इस समझौते के चलते तमिलनाडु के मछुआरों को खासी परेशानी का सामना करना पड़ता है, क्योंकि पहले उन्हें इस द्वीप तक जाने और वहां अपने जाल सुखाने की सुविधा थी। समझौते के बाद भारतीय मछुआरों से न केवल यह अधिकार छिन गया, बल्कि श्रीलंका की नौसेना को उन्हें तंग करने और गिरफ्तार करने का अधिकार मिल गया। श्रीलंका की नौसेना आए दिन तमिलनाडु के मछुआरों की गिरफ्तार करने के साथ उनकी नौकाएं भी जब्त कर लेती है। साफ है कि इन मछुआरों के लिए यह एक भावनात्मक मुद्दा भी है और उनकी रोजी-रोटी से जुड़ा मसला भी। कांग्रेस जिस तरह कच्चातिवु समझौते से भारत को होने वाले लाभ गिनाने की स्थिति में नहीं, उसी तरह उसके पास इस सवाल का भी कोई ठोस जवाब नहीं कि जम्मू-कश्मीर का एक हिस्सा पाकिस्तानी सेना के कब्जे में बने रहने के बाद भी तत्कालीन प्रधानमंत्री नेहरू ने युद्धविराम करना क्यों तय किया? यह प्रश्न इसलिए विचलित करता है, क्योंकि भारतीय सेना इस इलाके में घुस आई पाकिस्तानी सेना को खदेड़ने की स्थिति में थी और यदि उसे कुछ दिन का समय और मिल जाता तो पूरा जम्मू-कश्मीर भारत का हिस्सा होता और कश्मीर समस्या सिरदर्द नहीं बनी होती।

मेहनत का फल

बिहार बोर्ड के मैट्रिक का सुखद परिणाम बता रहा कि राज्य की शिक्षा व्यवस्था सही दिशा में आगे बढ़ रही है। 82.91 प्रतिशत छात्र-छात्राओं ने परीक्षा पास कर पिछले छह वर्षों में सबसे बेहतर परिणाम हासिल करने का कीर्तिमान बनाया है। टाप टेन की लिस्ट में शामिल होने की तो ऐसी मारामारी रही कि इसमें 51 छात्र-छात्राओं ने अपना नाम सुनहरे अक्षरों में अंकित कर लिया। टापरों की लिस्ट में कोई मजदूर का बेटा है तो कोई किसान का। यानी, इन्होंने बताया कि प्रतिभा संसाधनों की मोहताज नहीं, बस उन्हें उचित मंच चाहिए। शिक्षा विभाग ने यह मंच उपलब्ध कराया है। शिक्षा व्यवस्था में सुधार के लिए हाल के दिनों में कई कदम उठाए गए हैं। अब मासिक परीक्षाओं से पढ़ाई का सतत मूल्यांकन होता है। जो बच्चे पढ़ाई में कमजोर होते हैं उनके लिए विशेष कक्षाओं के इंतजाम होते हैं। बच्चों और शिक्षकों की उपस्थिति की सघन निगरानी से यह सुनिश्चित हुआ है कि बच्चे स्कूल आएं और उन्हें पढ़ाने के लिए वहां शिक्षक मौजूद मिलें। कुछ वर्षों पूर्व तक आलम यह था कि मास्टर साहब महीने में एक बार हाजिरी लगा जाते थे, बच्चे मिड डे मील खाकर घर चले जाते थे। कड़े अनुशासन से तस्वीर बदल गई है। इसका सर्वाधिक फायदा उन मां-बाप को हुआ है, जो अपने बच्चों को बेहतर शिक्षा तो देना चाहते थे, लेकिन सरकारी स्कूलों में उन्हें मन मसोस कर ही पढ़ाते थे। अब हालात बदलने के बाद अभिभावकों के सपनों को पंख लग रहे हैं। उनकी खुली आंखें देख रहीं कि किसान-मजदूर का बेटा भी सरकारी स्कूलों में पढ़कर निजी स्कूलों के बच्चों के समतुल्य खड़ा हो सकता है। हालांकि यह इतराने का समय नहीं। स्कूलों की पढ़ाई को और बेहतर करने के संकल्प लेने का समय है। वैसे 17 प्रतिशत विद्यार्थी, जो परीक्षा में असफल हो गए, उनके सफल न होने का कारण ढूंढ़ने पर भविष्य में और शानदार परिणाम हासिल होना सुनिश्चित होगा। जैसे-जैसे कमियां दूर होंगी, बिहार बोर्ड के बच्चे और शान के साथ सीबीएसई-आइसीएसई बोर्ड के बच्चों के साथ कदमताल कर रहे होंगे।

बदलाव की प्रतीक्षा में नौकरशाही

प्रेमपाल शर्मा

भारतीय प्रशासनिक सेवा की रीढ़ कही जाने वाली नौकरशाही को ठीक किए बिना अमृतकाल में विकसित भारत का सपना साकार होना कठिन है

अवधेश राजपूत

भारत की जिस नौकरशाही को देश के पहले गृहमंत्री 'लौहपुरुष' सरदार वल्लभ भाई पटेल ने 'इस्पाती ढांचे' की संज्ञा दी थी, उसी ढांचे को लेकर अब सरकार के भीतर से ही सवाल उठे हैं। प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद के सदस्य संजीव सान्याल ने बीते दिनों कहा, '20 से 30 साल के लाखों युवा अपने जीवन के बहुमूल्य आठ साल सिविल सेवा परीक्षा की तैयारी में बर्बाद कर देते हैं। आइएएस, आइपीएस और दूसरी सेवाओं में जाने की मृगतृष्णा हर वर्ष लाखों युवाओं की ऊर्जा को बर्बाद कर रही है। कोचिंग संस्थान भी इसी रवैये की उपज हैं।' सान्याल की बातों के आलोक में सिविल सेवा परीक्षा से संबंधित कुछ बुनियादी बातों पर गौर करना उपयोगी होगा।

वर्तमान में इस परीक्षा में बैठने की आयु 21 वर्ष से 37 वर्ष के बीच है। सामान्य वर्ग के अभ्यर्थियों के लिए आयुसीमा 32, ओबीसी के लिए 35 और एससी-एसटी के लिए 37 वर्ष है। सामान्य वर्ग का अभ्यर्थी छह बार परीक्षा दे सकता है। ओबीसी नौ बार और एससी-एसटी से 16 बार। पहला प्रश्न आयुसीमा और प्रयासों की संख्या को लेकर ही उठता है। 1979 में दौलत सिंह कोठारी समिति की सिफारिश पर सभी परीक्षाओं को मिलाकर एक सिविल सेवा परीक्षा शुरू की गई और उम्र 26 से बढ़कर 28 वर्ष की गई। उसमें तीन प्रयास सामान्य वर्ग के लिए और शेष के लिए रियायत के साथ दिए गए। उससे पहले उम्र 24 और 26 तक ही सीमित थी। 28 वर्ष करने के पीछे तर्क था कि तब तक देश में साक्षरता दर कम थी और ग्रामीण क्षेत्र के अभ्यर्थियों को मौका देने के लिए इसकी जरूरत थी। वस्तुतः, मौजूदा आइएएस परीक्षा ब्रिटिशकालीन आइसीएस परीक्षा का बदला हुआ नाम है। ब्रिटिश शासन में इस सेवा में भर्ती की उम्र 19 वर्ष और फिर बढ़ाकर 21 वर्ष की गई थी। इसके पीछे यही सोच रहा कि प्रशासन चलाने के लिए हमें युवा चाहिए और युवाओं के बल पर ही ब्रिटेन ने दुनिया पर राज किया।

स्वतंत्रता के बाद हमारी गरीबी और विशेष परिस्थितियों में सुधार की जरूरत थी, लेकिन सुधार के नाम पर बिगाड़ की नहीं। हमारी साक्षरता बढ़ी है, समाज के सभी वर्ग उच्च शिक्षा हासिल कर रहे हैं। बावजूद इसके प्रशासनिक क्षमता को दरकिनार करते हुए राजनीतिक रेवड़ी के नाम पर उम्र लगातार बढ़ाई जाती रही। मंडल आयोग के बाद उम्र 28 से बढ़ाकर 30 की गई। फिर संप्रग सरकार ने 2004 में आयुसीमा बढ़ाकर 30 से 32 कर दी। प्रश्न यह है कि क्या 30 की उम्र पार कर चुके अभ्यर्थी आइआइटी आदि से निकले हुए उन नौजवानों का मुकाबला कर सकते हैं, जिनकी उम्र 21 से 25 साल की होती है। अधिक आयुसीमा और प्रयासों पर कई बार अंगुली उठाई गई है। यह स्वाभाविक प्रतिभाशाली का चुनाव नहीं है। सुविधाओं के लिए देश के नीति-नियंता बनने की चाह में रट्टा मारकर कोचिंग संस्थानों में डेरा डाले चंद युवाओं का मैदान ज्यादा है। प्रशासनिक सुधार आयोग ने अपनी रिपोर्ट में भी आयु की सीमा और प्रयासों को कम करने की बात कही है। इस संबंध में कई समितियों की सिफारिशें भी लंबित पड़ी हैं। आयुसीमा घटाने के सवाल पर कुछ लोग गरीबों की दुहाई देने लगते हैं, लेकिन यह समझने की आवश्यकता है कि गरीबों का भला एक सक्षम, पारदर्शी और योग्य नौकरशाही ही कर सकती है। लुंज-पुंज और अपेक्षाकृत उम्रदराज लोग नहीं।

कुछ और सुधारों की भी जरूरत लगती है। यूपीएससी को इसका अहसास होगा कि 2011 में शुरू हुई सीसैट परीक्षा लगभग लाटरी का खेल बन चुकी है। उससे पूर्व के आंकड़े बताते हैं कि पहले ऐसा नहीं था। मौजूदा प्रारंभिक परीक्षा में एक तरह की तुक्केबाजी हो रही है। पहली बार में इन सेवाओं में सफल होने वाला कई-कई बार प्रारंभिक परीक्षा में भी फेल होता रहता है और लगातार प्रारंभिक परीक्षा में फेल होने वाला अचानक टापर्स में भी शामिल हो जाता है। नौजवानों की मानसिक स्थिति पर भी इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है और आत्महत्या तक की खबरें आती हैं। कोठारी समिति की मूल सिफारिशों में मुख्य परीक्षा का एक विषय प्रारंभिक परीक्षा में भी शामिल था। या तो उसे तुरंत वैसे ही वापस लाया जाए या मुख्य परीक्षा से भी वैकल्पिक विषय को बाहर किया जाए। 2000 में प्रोफेसर अलघ कमेटी ने कानून और लोक प्रशासन जैसे विषय जोड़े जाने की बात कही थी, जिनकी जरूरत हर नौकरशाह को अपने पूरे कार्यकाल में रहती है। ट्रेनिंग के दौरान इन विषयों को फिर से पढ़ने की जरूरत भी नहीं रहेगी। पिछले 10 वर्षों में इस सुझाव को भी पूरी तरह लागू नहीं किया गया है कि जो भी अभ्यर्थी मुख्य परीक्षा पास करके साक्षात्कार देते हैं, उनकी योग्यता के अनुसार उन्हें राज्य स्तर और दूसरे संस्थान मौका दें। लाखों उम्मीदवारों में से यूपीएससी जैसे संस्थान से इस स्तर तक पहुंचे हुए नौजवानों में कुछ तो योग्यता होगी ही। उन्हें ऐसा अवसर न मिलने पर वे शहर दर शहर दूसरी परीक्षा में बैठते रहेंगे और कोचिंग संस्थान भी कुकुरमुत्ते की तरह बढ़ते रहेंगे।

सरकार और यूपीएससी को इसका अहसास होना चाहिए कि फिलहाल देश की सर्वश्रेष्ठ प्रतिभाओं की पहली प्राथमिकता यूपीएससी नहीं है। 21वीं सदी के अनुकूल उनकी योग्यता का फायदा अमेरिका, इंग्लैंड से लेकर पूरी दुनिया उठा रही है, लेकिन हम उन्हें सही अवसर देने में असफल रहे हैं। दुनिया भर के विश्वविद्यालयों की तरफ भागते छात्रों की भीड़ और दुनिया की दिग्गज बहुराष्ट्रीय कंपनियों के शीर्ष पर आसीन भारतीय नौजवान इसका प्रमाण हैं। आत्मनिर्भर भारत के लिए सुधार के कदम उठाने की जरूरत है-केंद्र के स्तर पर भी और राज्य के प्रशासनिक स्तर पर भी। संजीव सान्याल का सुझाव सही है और उचित होगा कि आम चुनाव के बाद नई सरकार 'स्टील फ्रेम' में लगी हुई जंग को सबसे पहले ठीक करे। भारतीय प्रशासनिक सेवा की रीढ़ कही जाने वाली नौकरशाही को ठीक किए बिना अमृतकाल में विकसित भारत का सपना साकार होना मुश्किल है। मोदी सरकार ने आजादी के बाद के उलझे हुए कई मसलों को सुलझाने में अपनी मजबूत इच्छाशक्ति दिखाई है। अब समय आ गया है कि नौकरशाही में भी आमूलचूल बदलाव किया जाए।

(लेखक पूर्व संयुक्त सचिव एवं शिक्षाविद् हैं)

response@jagran.com

पाठ्यक्रम परिवर्तन का अधूरा एजेंडा

राजीव सचान

मोदी सरकार ने बीते दस वर्षों में बहुत कुछ किया है, लेकिन शिक्षा के मोर्चे पर कुछ विशेष नहीं हो सका

नई शिक्षा नीति लागू होने के बाद भी शिक्षा में सुधार के मोर्चे पर स्थिति संतोषजनक नहीं, इसका ताजा उदाहरण है राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद की ओर से प्रकाशित कक्षा नौ की अंग्रेजी की पुस्तक को लेकर राज्य के शिक्षा मंत्री की आपत्ति। उनकी एक आपत्ति यह है कि आखिर यह पुस्तक सत्र समाप्त होने के बाद क्यों आई? दूसरी आपत्ति यह है कि इस पुस्तक के आवरण पर ब्रिटेन का ध्वज क्यों प्रकाशित किया गया है? उन्होंने माध्यमिक शिक्षा निदेशक को मामले की जांच के आदेश दिए हैं। इसी बीच गुजरात से यह खबर आई कि कच्छ जिले के गांधीग्राम में एक निजी स्कूल में अंग्रेजी की पुस्तक के एक पाठ में बच्चों को यह पढ़ने को मिल रहा था कि गाय काली और सफेद होती है। वह घास खाती है। हम इसका दूध पीना पसंद करते हैं और हम उसका मांस भी खा सकते हैं। इस पर जब अभिभावकों ने आपत्ति जताई तो स्कूल ने क्षमा मांगते हुए गलती दूर करने की बात कही। ये इकलौते मामले नहीं हैं। करीब डेढ़ वर्ष पहले दिल्ली के एक निजी स्कूल में कक्षा चार के बच्चों की द ब्लू प्लैनेट नामक पुस्तक में यह बताया गया था कि अनुसूचित जाति एवं जनजाति क्या होती है? अनुसूचित जाति का मतलब बताया गया था-भारत की अछूत जाति। जब कुछ सजग अभिभावकों ने आपत्ति जताई तो स्कूल प्रिंसिपल ने यह सफाई दी कि हमने पाठ्यक्रम की जांच नहीं की थी। हमने प्रकाशक को सूचित कर दिया है। प्रकाशक ने कहा कि यह टाइपिंग की गलती हो सकती है। हम इसे शीघ्र ठीक कराकर नई पुस्तक देंगे।

नई शिक्षा नीति को लागू हुए चार वर्ष होने वाले हैं। इसके अमल में लंबा समय लगेगा, लेकिन इस शिक्षा नीति का मूल्य-महत्व तभी है, जब पाठ्यपुस्तकों में आवश्यक परिवर्तन किए जाएं। यह काम हो तो रहा है, लेकिन कच्छप गति से। इसका प्रमाण पिछले सप्ताह की यह खबर है कि राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) कक्षा तीन और छह के लिए नया पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें जारी करेगी। इस बारे में सीबीएसई की ओर से सभी स्कूलों को एक पत्र लिखकर सूचित कर दिया गया है। इस पत्र में यह भी लिखा गया है कि शैक्षणिक वर्ष 2024 के लिए अन्य कक्षाओं के लिए पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों में कोई बदलाव नहीं होगा। इसका अर्थ है नौ दिन चले अढ़ाई कोस। यह स्थिति तब है, जब भाजपा ने 2014 के अपने घोषणा पत्र में नई शिक्षा नीति लाने का वादा किया था। यह शिक्षा नीति मोदी सरकार के दूसरे कार्यकाल यानी जुलाई 2020 में आ सकी। नई शिक्षा नीति में देरी को देखते हुए पाठ्यक्रम में संशोधन एवं परिवर्तन के साथ नई पाठ्यपुस्तकें तैयार करने का काम द्रुत गति से होना चाहिए था, लेकिन ऐसा नहीं हो सका और इसका प्रमाण यह है कि अभी तक केवल कक्षा तीन और छह की ही नई पाठ्यपुस्तकें तैयार हो सकी हैं। बीते दस वर्षों में तीन शिक्षा मंत्री बदल गए। धर्मेंद्र प्रधान चौथे शिक्षा मंत्री हैं। इस कालखंड में मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम बदलकर शिक्षा मंत्रालय तो कर दिया गया, लेकिन पाठ्यक्रम बदलने का जो काम प्राथमिकता के आधार पर होना चाहिए था, वह न के बराबर हो सका। यह और कुछ नहीं, इच्छाशक्ति की कमी है।

अभी भी पढ़ाई जा रही पुरानी पाठ्यसामग्री। फाइल

इच्छाशक्ति हो तो कठिन कार्य भी आनन-फानन में हो सकते हैं। इसका एक उदाहरण संप्रग शासन के समय मानव संसाधन विकास मंत्री अर्जुन सिंह ने दिया था। उन्होंने यह मंत्रालय संभालते ही पाठ्यक्रम में परिवर्तन की पहल की और एक वर्ष के अंदर यह काम कर दिखाया। मोदी सरकार के चार शिक्षा मंत्री दस वर्ष में भी यह काम नहीं कर सके। कम से कम उन्हें नई शिक्षा नीति लागू होने के बाद तो इस काम को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी ही चाहिए थी। कोई नहीं जानता कि यह कार्य प्राथमिकता सूची से बाहर क्यों बना रहा? निःसंदेह कोरोना काल में बच्चों की पढ़ाई प्रभावित होने के कारण उन्हें परीक्षा के दबाव से मुक्त करने के लिए स्कूली पाठ्यक्रम में कुछ कटौती की गई थी, लेकिन पाठ्यक्रम परिवर्तन के मामले में जो वांछित था, वह नहीं हो सका।

यदि स्कूली पाठ्यक्रम में आवश्यक बदलाव नहीं किए जाते तो नई शिक्षा नीति को प्रभावी ढंग से लागू करने और उसके माध्यम से भावी पीढ़ी को देश की आवश्यकतानुसार तैयार करने का उद्देश्य पूरा होने वाला नहीं है। मोदी सरकार के मंत्री पाठ्यक्रम में संशोधन-परिवर्तन की जरूरत तो जताते रहे हैं, लेकिन उनके पास इस प्रश्न का उत्तर नहीं कि आखिर इस जरूरत की पूर्ति क्यों नहीं हो पाई? आखिर भावी पीढ़ी को वही पाठ्यपुस्तकें क्यों पढ़ाई जा रही हैं, जिनकी पाठ्य सामग्री से शिकायत है? सबसे अधिक शिकायत इतिहास की पाठ्यपुस्तकों से है। यह एक तथ्य है कि भारत के इतिहास के नाम पर छात्रों को दिल्ली का इतिहास ही अधिक पढ़ाया जाता है। यह इतिहास भी एकपक्षीय है। इसमें देश के समग्र इतिहास की झलक मिलना तो दूर रहा, यह तक पता नहीं चलता कि देश के दूसरे हिस्सों में सुहेलदेव, लचित बारफुकन और मार्तंड वर्मा जैसे ऐसे अनेक शासक हुए, जिन्होंने बाहरी आक्रमणकारियों से न केवल लोहा लिया, बल्कि उनके दांत भी खट्टे किए। इसके अतिरिक्त उन्होंने भव्य भवन बनवाए और जनकल्याण के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किए। इससे इन्कार नहीं कि मोदी सरकार ने बीते दस वर्षों में देश की तस्वीर बदलने के साथ अनुच्छेद-370 हटाने जैसे ऐसे साहसिक कार्य किए हैं, जिसके बारे में कल्पना करना भी कठिन था, लेकिन यह भी सही है कि शिक्षा के मोर्चे पर जो कुछ अपेक्षित था, वह नहीं हो सका।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)

response@jagran.com

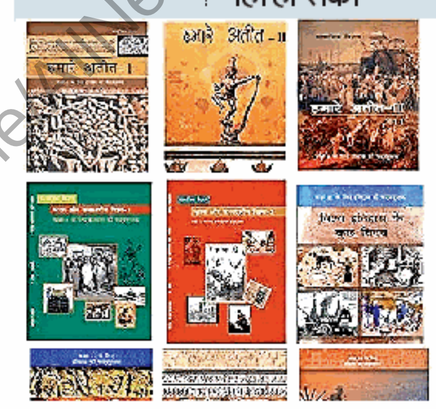

https://t.me/AllNewsPaperPaid

ऊर्जा

इच्छाएं

जीवन है तो इच्छाओं का होना भी स्वाभाविक है। हालांकि एक समस्या यह भी है कि एक इच्छा पूरी होते ही दूसरी कामना सिर उठा लेती है। वहीं, यह भी एक समस्या है कि यदि इच्छाएं ही नहीं होंगी तो संभव है कि व्यक्ति की प्रगति की राह ही अवरुद्ध हो जाए। इस सांसारिक जगत की वास्तविकता ही यही है कि कोई भी व्यक्ति, संस्था या समाज इच्छाओं से पृथक नहीं। संस्थाएं भी किसी न किसी उद्देश्य से गठित की जाती हैं और अपने उद्देश्य की पूर्ति ही उनकी कामना होती है। यहां तक कि धर्म के प्रचार-प्रसार के केंद्र में भी अपने विस्तार की इच्छा का समावेश होता है।

इच्छाएं महज कल्पना हेतु नहीं हैं। इच्छाएं तो प्रेरणा और उत्साह की संवाहक हैं। उनकी पूर्ति के लिए श्रम के साथ ही साथ सकारात्मक ऊर्जा का होना भी आवश्यक है। सकारात्मकता की शक्ति व्यक्ति को इच्छा पूर्ति हेतु सही राह दिखाने में मदद करती है। उसे उन माध्यमों से परिचित कराती है, जिनके द्वारा वह अपने उद्देश्य के गंतव्य तक पहुंच पाता है। इस यात्रा में उत्साह की भी अहम भूमिका होती है। उत्साह का अभाव कामनापूर्ति में बाधक होता है। आलसी मन खुली आंखों से स्वप्न तो दिखा सकता है, किंतु उन्हें पूर्ण करने की दिशा में पुरुषार्थ के लिए प्रेरित नहीं कर पाता।

इच्छाओं को मन में अवश्य स्थान दें, किंतु यह जरूर ध्यान रखें कि आपकी इच्छाएं समग्रता में कल्याणकारी हों। किसी का अहित करने वाली न हों। स्वहितकारी एवं परहितकारी इच्छाओं का पूर्ण होना ही श्रेयस्कर है। अन्यथा इच्छाओं का अपूर्ण रह जाना ही उचित होगा। इच्छा और कुत्सित इच्छा के अंतर को समझकर सही चुनाव करने पर ब्रह्मांड की शक्तियां भी सहायक बन जाती हैं। इस प्रकार जब वे पूर्ण होती हैं तो व्यक्ति को पूर्ण संतुष्टि और सुख का असीम आनंद प्राप्त होता है जो उसके प्रभामंडल की आभा में वृद्धि करता है।

मेघा राठी

देश का अनोखा 'गिद्ध रेस्तरां'

सुधीर कुमार

इसमें गिद्धों के लिए विभिन्न मृत पशुओं के मांस परोसे जाएंगे, जो 'डाइक्लोफेनाक' जैसी पशुधन दवाओं से मुक्त होंगे

झारखंड के कोडरमा जिले में गिद्धों के लिए एक रेस्तरां स्थापित किया गया है। इसमें गिद्धों के लिए विभिन्न मृत पशुओं के मांस परोसे जाएंगे। ये आहार 'डाइक्लोफेनाक' जैसी पशुधन दवाओं से मुक्त होंगे, जिससे गिद्धों को स्वस्थप्रद भोजन मुहैया कराया जा सकेगा। इस पहल का दूरगामी मकसद गिद्धों की घटती संख्या को बढ़ाना तथा उनके संरक्षण को लेकर जागरूकता फैलाना है।

गिद्ध धरती पर 'प्राकृतिक सफाईकर्मी' की भूमिका निभाते हैं, लेकिन पारिस्थितिकी महत्ता रखने वाले गिद्धों की तादाद तेजी से कम हो रही है। पिछले तीन दशक में देश में गिद्धों की संख्या चार करोड़ से घटकर चार लाख से भी कम रह गई है। गिद्ध जानवरों के शवों का उपभोग करते हैं, इससे पारिस्थितिकी संतुलन बना रहता है। इससे वायु प्रदूषण नियंत्रित होता है और बीमारियों को फैलने से रोका जा सकता है। गिद्धों की विलुप्ति का सबसे बड़ा कारण पशुओं के उपचार में प्रयोग की जाने वाली 'डाइक्लोफेनेक' नामक दवा की पुष्टि गिद्धों की मौत के लिए एक कारक के रूप में हुई है। जब पशुओं की मृत्यु होती है, तो यही दवा जहर के रूप में जानवर के शरीर में बचा रह जाता है, जिसका भक्षण करने से गिद्धों के गुर्दे और यकृत खराब हो जाते हैं, जिससे उनकी मृत्यु हो जाती है। पशुओं के इलाज में प्रयुक्त उक्त दवा के विकल्प के रूप में 'मेलोक्सिकन' का प्रयोग किया जा सकता है, जिसका गिद्धों पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं होता है। गिद्धों की संख्या में कमी आने की दूसरी बड़ी वजह-प्राकृतिक पर्यावास का विखंडन होना है। गिद्ध आमतौर पर अपने घोंसले यूकेलिप्टस, शीशम, सेमल, इमली और पीपल जैसे पेड़ों पर बनाते हैं, लेकिन वनोन्मूलन के कारण न सिर्फ इन वृक्षों की संख्या में कमी आई है, बल्कि जंगलों से गुजरती वैकासिक गतिविधियों ने गिद्धों को भयभीत कर दिया है। बिजली की तारों से सटने और अवैध शिकार की वजह से भी गिद्धों का अस्तित्व खत्म होता जा रहा है। आइयूसीएन यानी अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ ने अपनी रेड लिस्ट में 2002 में ही भारतीय गिद्ध (जिप्स इंडिकस) को 'गंभीर रूप से संकटग्रस्त' घोषित किया था, पर दो दशक बाद भी गिद्धों को संरक्षित करने में कामयाबी नहीं मिल पाई है।

गिद्धों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय वन्यजीव बोर्ड द्वारा 2020-2025 के बीच एक कार्य योजना को मंजूरी प्रदान की गई है। इसके तहत पांच राज्यों-उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, त्रिपुरा, महाराष्ट्र और तमिलनाडु में गिद्ध संरक्षण एवं प्रजनन केंद्र तथा चार शहरों-गुवाहाटी, भोपाल, हैदराबाद और पिंजौर में बचाव केंद्रों की स्थापना की जानी है। गिद्ध जैव विविधता के महत्वपूर्ण अंग हैं। अतः इस प्रजाति के संरक्षण के प्रति सभी को संजीदा होना होगा।

(लेखक बीएचयू में शोधार्थी हैं)

उद्यमिता की भावना को मिले संबल

'विकसित देशों से सीख ले भारत' शीर्षक से प्रकाशित आलेख में शिवकांत शर्मा ने सही सुझाव दिया है कि केवल नौकरी के भरोसे कोई देश प्रगति नहीं कर सकता। हाल के वर्षों में भारत में उद्यमिता को लेकर सोच बदला है, लेकिन यह परिवर्तन भी अभी केवल महानगरों के स्तर पर ही प्रत्यक्ष हो रहा है। हमारे देश में नौकरी और विशेषकर सरकारी नौकरी का आकर्षण अभी भी बना हुआ है। यहां तक कि निजी क्षेत्र की आकर्षक नौकरियों को भी उतनी प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं। यह सब सुरक्षात्मक रवैये के चलते है कि सरकारी नौकरी में कोई जोखिम नहीं होता। जबकि तरक्की का मूलमंत्र ही यही है कि 'नो रिस्क-नो गेन' यानी जोखिम के बिना प्रगति संभव नहीं। जोखिम से बचने की प्रवृत्ति हमारी संभावनाओं को भुनाने में बाधक बनती है। पश्चिम के उदाहरण को देखें तो टेस्ला, गूगल, एपल से लेकर माइक्रोसाफ्ट और मेटा जैसे तमाम वैश्विक ब्रांड ऐसे हैं, जिन्हें पहली पीढ़ी के उद्यमियों ने ही स्थापित किया है। यह तभी संभव हो सका जब इन कंपनियों के प्रवर्तकों के भीतर जोखिम लेने का भाव था और किसी असफलता की स्थिति में सामाजिक उपेक्षा का कोई डर नहीं था। हमें भारत में भी ऐसा समाज विकसित करना होगा जो संभावित उद्यमियों के भीतर साहस का संचार कर सके ताकि वे अपने सपनों को पूरा करने के अतिरिक्त देश को आर्थिक रूप से आगे बढ़ाने के साथ ही विश्व में भारतीय उद्यमिता के ध्वज को फहरा सकें।

रवि वार्ष्णेय, बुलंदशहर

मेलबाक्स

विपक्ष की संकीर्ण मानसिकता

इस वर्ष भारतरत्न से पांच महान विभूतियों को सम्मानित किया गया है। इनमें एमएस स्वामीनाथन, कर्पूरी ठाकुर, चौधरी चरण सिंह एवं पीवी नरसिंहराव को मरणोपरांत राष्ट्रपति भवन में भारत रत्न से सम्मानित किया गया। अस्वस्थ पूर्व उपप्रधानमंत्री लालकृष्ण आडवाणी को उनके आवास पर सम्मानित किया गया। इस अवसर की एक फोटो के केवल एक भाग को दिखाकर दुष्प्रचार किया जा रहा है कि राष्ट्रपति खड़ी हैं और प्रधानमंत्री बैठे हुए हैं। विपक्षी नेता इससे यह नैरेटिव फैलाने का प्रयास कर रहे हैं कि यह महिला राष्ट्रपति का अपमान है। जबकि यह बिल्कुल गलत आकलन है। प्रोटोकाल यह है कि पुरस्कृत करने वाला एवं पुरस्कार पाने वाला व्यक्ति खड़ा रहता है तथा शेष सभी व्यक्ति बैठे-बैठे ही करतल ध्वनि से स्वागत करते हैं। यहां भी ऐसा ही हुआ है। विपक्ष अपने संकीर्ण सोच के कारण अफवाह फैला रहा है।

धर्मेंद्र नाथ रस्तोगी, गाजियाबाद

व्यर्थ नहीं जाता कर्म

अपनी सुख-सुविधा एवं वैभव वृद्धि के लिए किसी को पीड़ा पहुचाना, कष्ट देना घोर अपराध है। इसका दुष्परिणाम संताप, कष्ट और पीड़ा के रूप में ही आएगा। हो सकता है, उसमें कुछ समय लगे। कर्मवाद सिद्धांत परम सत्य सिद्धांत है। विश्व के सभी विचारकों तत्वज्ञों ने इस सिद्धांत का समर्थन किया है। इस सिद्धांत की मूल दृष्टि है कि व्यक्ति जैसे कर्म करता है, उसके परिणाम वैसे ही आते हैं। जैसा किया वैसा पाया, इस सत्य को सिद्ध करने वाला लंबा इतिहास अपने पास है। वर्तमान में भी अनेक उदाहरण हमारे सामने हैं, जो कर्म के फल को व्यक्त कर रहे हैं। मानव की यह भ्रांति है कि मैं अपनी चालाकी से अपने पाप के दुष्फल से बच जाऊंगा। प्रकृति ऐसा अवसर किसी को प्रदान नहीं करती है। दोषी को प्रकृति परिणाम देकर रहती है। इसमें अविश्वास करना मूर्खता है। आज भारत में ही नहीं सारे विश्व में उत्पीड़न बढ़ गया है। इसका सबसे बड़ा कारण मानव का कर्मवाद में विश्वास कम होना है। व्यक्ति का उसमें विश्वास बना तो वह ऐसा कोई कार्य नहीं करेगा, जिसका परिणाम दुःखद और संताप पूर्ण हो। धर्म के द्वारा प्रदत्त इस कर्मवाद की धारणा से ही शांति और अमन का विस्तार हो सकता है। कानून के फंदे और कारावास के भय से पापों का रुकना संभव नहीं है। अधर्म को रोकने के लिए धर्म के संस्कारों की स्थापना करनी होगी।

कांतिलाल मांडोत, नई दिल्ली

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक- संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

इच्छाशक्ति से किसी भी बाधा को दूर किया जा सकता है

कच्चातिवु पर तकरार

चुनावों के समय कब कोई नया मुद्दा उठ जाए या किसी पुराने मुद्दे को नए सिरे धार दे दी जाए, इसका ठिकाना नहीं होता। कच्चातिवु का मुद्दा ऐसा ही है। भाजपा इस मुद्दे पर इसीलिए आक्रामक है, क्योंकि तमिलनाडु में सत्तारूढ़ द्रमुक जब-तब यह मांग करती रही है कि एक समझौते के तहत श्रीलंका को सौंपे गए इस द्वीप को वापस लिया जाए। वह इस मांग को लेकर मोदी सरकार पर दबाव भी बनाती रही है, लेकिन सूचना अधिकार कानून से मिली इस जानकारी ने उसे निरुत्तर सा कर दिया है कि प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने जब इस द्वीप को श्रीलंका को देने का समझौता किया था तो उस समय तमिलनाडु में सत्तारूढ़ द्रमुक भी इसके पक्ष में थी। भाजपा ने इस तथ्य को सामने रखकर जो सवाल उठाए हैं, उनका जवाब न तो द्रमुक को देते बन रहा और न ही कांग्रेस को। जहां द्रमुक के पास केवल यही कहने को है कि आखिर भाजपा को अब यह मसला क्यों याद आ रहा है, वहीं कांग्रेस कच्चातिवु समझौते पर कुछ कहने के स्थान पर यह आरोप उछाल रही है कि मोदी सरकार ने भी तो बांग्लादेश को कुछ इलाके दिए थे। वह यह भूल रही है कि बांग्लादेश को कुछ इलाके दिए गए थे तो कुछ उससे लिए भी गए थे। कच्चातिवु को श्रीलंका को सौंपने से तो भारत घाटे में ही रहा। यह ठीक है कि कच्चातिवु को श्रीलंका को सौंपने के दशकों पुराने समझौते को आसानी से तोड़ा नहीं जा सकता, लेकिन इसकी तह तक तो जाना ही चाहिए कि आखिर इस द्वीप को श्रीलंका को देने के बदले भारत को हासिल क्या हुआ? इस समझौते के चलते तमिलनाडु के मछुआरों को खासी परेशानी का सामना करना पड़ता है, क्योंकि पहले उन्हें इस द्वीप तक जाने और वहां अपने जाल सुखाने की सुविधा थी। समझौते के बाद भारतीय मछुआरों से न केवल यह अधिकार छिन गया, बल्कि श्रीलंका की नौसेना को उन्हें तंग करने और गिरफ्तार करने का अधिकार मिल गया। श्रीलंका की नौसेना आए दिन तमिलनाडु के मछुआरों की गिरफ्तार करने के साथ उनकी नौकाएं भी जब्त कर लेती है। साफ है कि इन मछुआरों के लिए यह एक भावनात्मक मुद्दा भी है और उनकी रोजी-रोटी से जुड़ा मसला भी। कांग्रेस जिस तरह कच्चातिवु समझौते से भारत को होने वाले लाभ गिनाने की स्थिति में नहीं, उसी तरह उसके पास इस सवाल का भी कोई ठोस जवाब नहीं कि जम्मू-कश्मीर का एक हिस्सा पाकिस्तानी सेना के कब्जे में बने रहने के बाद भी तत्कालीन प्रधानमंत्री नेहरू ने युद्धविराम करना क्यों तय किया? यह प्रश्न इसलिए विचलित करता है, क्योंकि भारतीय सेना इस इलाके में घुस आई पाकिस्तानी सेना को खदेड़ने की स्थिति में थी और यदि उसे कुछ दिन का समय और मिल जाता तो पूरा जम्मू-कश्मीर भारत का हिस्सा होता और कश्मीर समस्या सिरदर्द नहीं बनी होती।

मेहनत का फल

बिहार बोर्ड के मैट्रिक का सुखद परिणाम बता रहा कि राज्य की शिक्षा व्यवस्था सही दिशा में आगे बढ़ रही है। 82.91 प्रतिशत छात्र-छात्राओं ने परीक्षा पास कर पिछले छह वर्षों में सबसे बेहतर परिणाम हासिल करने का कीर्तिमान बनाया है। टाप टेन की लिस्ट में शामिल होने की तो ऐसी मारामारी रही कि इसमें 51 छात्र-छात्राओं ने अपना नाम सुनहरे अक्षरों में अंकित कर लिया। टापरों की लिस्ट में कोई मजदूर का बेटा है तो कोई किसान का। यानी, इन्होंने बताया कि प्रतिभा संसाधनों की मोहताज नहीं, बस उन्हें उचित मंच चाहिए। शिक्षा व्यवस्था में सुधार के लिए हाल के दिनों में कई कदम उठाए गए हैं। अब मासिक परीक्षाओं से पढ़ाई का सतत मूल्यांकन होता है। जो बच्चे पढ़ाई में कमजोर होते हैं उनके लिए विशेष कक्षाओं के इंतजाम होते हैं। बच्चों और शिक्षकों की उपस्थिति की सघन निगरानी से यह सुनिश्चित हुआ है कि बच्चे स्कूल आएं और उन्हें पढ़ाने के लिए वहां शिक्षक मौजूद मिलें। कुछ वर्षों पूर्व तक आलम यह था कि मास्टर साहब महीने में एक बार हाजिरी लगा जाते थे, बच्चे मिड डे मील खाकर घर चले जाते थे। कड़े अनुशासन से तस्वीर बदल गई है। इसका सर्वाधिक फायदा उन मां-बाप को हुआ है, जो अपने बच्चों को बेहतर शिक्षा तो देना चाहते थे, लेकिन सरकारी स्कूलों में उन्हें मन मसोस कर ही पढ़ाते थे। अब हालात बदलने के बाद अभिभावकों के सपनों को पंख लग रहे हैं। उनकी खुली आंखें देख रहीं कि किसान-मजदूर का बेटा भी सरकारी स्कूलों में पढ़कर निजी स्कूलों के बच्चों के समतुल्य खड़ा हो सकता है। हालांकि, यह इतराने का समय नहीं। स्कूलों की पढ़ाई को और बेहतर करने के संकल्प लेने का समय है। वैसे 17 प्रतिशत विद्यार्थी, जो परीक्षा में असफल हो गए, उनके सफल न होने का कारण ढूंढने पर भविष्य में और शानदार परिणाम हासिल होना सुनिश्चित होगा।

मैट्रिक की परीक्षा का परिणाम बता रहा कि राज्य की शिक्षा व्यवस्था सही राह पर है।

कह के रहेंगे

माधव जोशी

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या अरविंद केजरीवाल को जेल से सरकार चलाने के बजाय इस्तीफा देना चाहिए?

आज का सवाल
क्या हार्दिक पांड्या की अनावश्यक हूटिंग हो रही है?

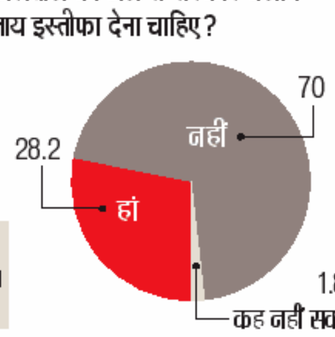

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

बदलाव की प्रतीक्षा में नौकरशाही

प्रेमपाल शर्मा

भारतीय प्रशासनिक सेवा की रीढ़ कही जाने वाली नौकरशाही को ठीक किए बिना अमृतकाल में विकसित भारत का सपना साकार होना कठिन है

भारत की जिस नौकरशाही को देश के पहले गृहमंत्री 'लौहपुरुष' सरदार वल्लभ भाई पटेल ने 'इस्पाती ढांचे' की संज्ञा दी थी, उसी ढांचे को लेकर अब सरकार के भीतर से ही सवाल उठे हैं। प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद के सदस्य संजीव सान्याल ने बीते दिनों कहा, '20 से 30 साल के लाखों युवा अपने जीवन के बहुमूल्य आठ साल सिविल सेवा परीक्षा की तैयारी में बर्बाद कर देते हैं। आइएएस, आइपीएस और दूसरी सेवाओं में जाने की मृगतृष्णा हर वर्ष लाखों युवाओं की ऊर्जा को बर्बाद कर रही है। कोचिंग संस्थान भी इसी रवैये की उपज हैं।' सान्याल की बातों के आलोक में सिविल सेवा परीक्षा से संबंधित कुछ बुनियादी बातों पर गौर करना उपयोगी होगा।

वर्तमान में इस परीक्षा में बैठने की आयु 21 वर्ष से 37 वर्ष के बीच है। सामान्य वर्ग के अभ्यर्थियों के लिए आयुसीमा 32, ओबीसी के लिए 35 और एससी-एसटी के लिए 37 वर्ष है। सामान्य वर्ग का अभ्यर्थी छह बार परीक्षा दे सकता है। ओबीसी नौ बार और एससी-एसटी से 16 बार। पहला प्रश्न आयुसीमा और प्रयासों की संख्या को लेकर ही उठता है। 1979 में दौलत सिंह कोठारी समिति की सिफारिश पर सभी परीक्षाओं को मिलाकर एक सिविल सेवा परीक्षा शुरू की गई और उम्र 26 से बढ़कर 28 वर्ष की गई। उसमें तीन प्रयास सामान्य वर्ग के लिए और शेष के लिए रियायत के साथ दिए गए। उससे पहले उम्र 24 और 26 तक ही सीमित थी। 28 वर्ष करने के पीछे तर्क था कि तब तक देश में साक्षरता दर कम थी और ग्रामीण क्षेत्र के अभ्यर्थियों को मौका देने के लिए इसकी जरूरत थी। वस्तुत:, मौजूदा आइएएस परीक्षा ब्रिटिशकालीन आइसीएस परीक्षा का बदला हुआ नाम है। ब्रिटिश शासन में इस सेवा में भर्ती की उम्र 19 वर्ष और फिर बढ़ाकर 21 वर्ष की गई थी। इसके पीछे यही सोच रहा कि प्रशासन चलाने के लिए हमें युवा चाहिए और युवाओं के बल पर ही ब्रिटेन ने दुनिया पर राज किया।

स्वतंत्रता के बाद हमारी गरीबी और विशेष परिस्थितियों में सुधार की जरूरत थी, लेकिन सुधार के नाम पर बिगाड़ की नहीं। हमारी साक्षरता बढ़ी है, समाज के सभी वर्ग उच्च शिक्षा हासिल कर रहे हैं। बावजूद इसके प्रशासनिक क्षमता को दरकिनार करते हुए राजनीतिक रेवड़ी के नाम पर उम्र लगातार बढ़ाई जाती रही। मंडल आयोग के बाद उम्र 28 से बढ़ाकर 30 की गई। फिर संप्रग सरकार ने 2004 में आयुसीमा बढ़ाकर 30 से 32 कर दी। प्रश्न यह है कि क्या 30 की उम्र पार कर चुके अभ्यर्थी आइआइटी आदि से निकले हुए उन नौजवानों का मुकाबला कर सकते हैं, जिनकी उम्र 21 से 25 साल की होती है। अधिक आयुसीमा और प्रयासों पर कई बार अंगुली उठाई गई है। यह स्वाभाविक प्रतिभाशाली का चुनाव नहीं है। सुविधाओं के लिए देश के नीति-नियंता बनने की चाह में रट्टा मारकर कोचिंग संस्थानों में डेरा डाले चंद युवाओं का मैदान ज्यादा है। प्रशासनिक सुधार आयोग ने अपनी रिपोर्ट में भी आयु की सीमा और प्रयासों को कम करने की बात कही है। इस संबंध में कई समितियों की सिफारिशें भी लंबित पड़ी हैं। आयुसीमा घटाने के सवाल पर कुछ लोग गरीबों की दुहाई देने लगते हैं, लेकिन यह समझने की आवश्यकता है कि गरीबों का भला एक सक्षम, पारदर्शी और योग्य नौकरशाही ही कर सकती है। लुंज-पुंज और अपेक्षाकृत उम्रदराज लोग नहीं।

अवधेश राजपूत

कुछ और सुधारों की भी जरूरत लगती है। यूपीएससी को इसका अहसास होगा कि 2011 में शुरू हुई सीसैट परीक्षा लगभग लाटरी का खेल बन चुकी है। उससे पूर्व के आंकड़े बताते हैं कि पहले ऐसा नहीं था। मौजूदा प्रारंभिक परीक्षा में एक तरह की तुक्केबाजी हो रही है। पहली बार में इन सेवाओं में सफल होने वाला कई-कई बार प्रारंभिक परीक्षा में भी फेल होता रहता है और लगातार प्रारंभिक परीक्षा में फेल होने वाला अचानक टापर्स में भी शामिल हो जाता है। नौजवानों की मानसिक स्थिति पर भी इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है और आत्महत्या तक की खबरें आती हैं। कोठारी समिति की मूल सिफारिशों में मुख्य परीक्षा का एक विषय प्रारंभिक परीक्षा में भी शामिल था। या तो उसे तुरंत वैसे ही वापस लाया जाए या मुख्य परीक्षा से भी वैकल्पिक विषय को बाहर किया जाए। 2000 में प्रोफेसर अलघ कमेटी ने कानून और लोक प्रशासन जैसे विषय जोड़े जाने की बात कही थी, जिनकी जरूरत हर नौकरशाह को अपने पूरे कार्यकाल में रहती है। ट्रेनिंग के दौरान इन विषयों को फिर से पढ़ने की जरूरत भी नहीं रहेगी। पिछले 10 वर्षों में इस सुझाव को भी पूरी तरह लागू नहीं किया गया है कि जो भी अभ्यर्थी मुख्य परीक्षा पास करके साक्षात्कार देते हैं, उनकी योग्यता के अनुसार उन्हें राज्य स्तर और दूसरे संस्थान मौका दें। आखिर लाखों उम्मीदवारों में से यूपीएससी जैसे संस्थान से इस स्तर तक पहुंचे हुए नौजवानों में कुछ तो योग्यता होगी ही। उन्हें ऐसा अवसर न मिलने पर वे शहर दर शहर दूसरी परीक्षा में बैठते रहेंगे और कोचिंग संस्थान भी कुकुरमुत्ते की तरह बढ़ते रहेंगे। इन सुधारों से देश के सर्वश्रेष्ठ मेधावी और अधिक उत्साह से इस परीक्षा में भाग लेने लगेंगे। सुधारों को और आगे नहीं टाला जा सकता।

सरकार और यूपीएससी को इसका अहसास होना चाहिए कि फिलहाल देश की सर्वश्रेष्ठ प्रतिभाओं की पहली प्राथमिकता यूपीएससी नहीं है। 21वीं सदी के अनुकूल उनकी योग्यता का फायदा अमेरिका, इंग्लैंड से लेकर पूरी दुनिया उठा रही है, लेकिन हम उन्हें सही अवसर देने में असफल रहे हैं। दुनिया भर के विश्वविद्यालयों की तरफ भागते छात्रों की भीड़ और दुनिया की दिग्गज बहुराष्ट्रीय कंपनियों के शीर्ष पर आसीन भारतीय नौजवान इसका प्रमाण हैं। आत्मनिर्भर भारत के लिए सुधार के कदम उठाने की जरूरत है-केंद्र के स्तर पर भी और राज्य के प्रशासनिक स्तर पर भी। संजीव सान्याल का सुझाव सही है और उचित होगा कि आम चुनाव के बाद नई सरकार 'स्टील फ्रेम' में लगी हुई जंग को सबसे पहले ठीक करे। भारतीय प्रशासनिक सेवा की रीढ़ कही जाने वाली नौकरशाही को ठीक किए बिना अमृतकाल में विकसित भारत का सपना साकार होना मुश्किल है। मोदी सरकार ने आजादी के बाद के उलझे हुए कई मसलों को सुलझाने में अपनी मजबूत इच्छाशक्ति दिखाई है। अब समय आ गया है कि नौकरशाही में भी आमूलचूल बदलाव किया जाए।

(लेखक पूर्व संयुक्त सचिव एवं शिक्षाविद् हैं)

response@jagran.com

पाठ्यक्रम परिवर्तन का अधूरा एजेंडा

राजीव सचान

मोदी सरकार ने बीते दस वर्षों में बहुत कुछ किया है, लेकिन शिक्षा के मोर्चे पर कुछ विशेष नहीं हो सका

नई शिक्षा नीति लागू होने के बाद भी शिक्षा में सुधार के मोर्चे पर स्थिति संतोषजनक नहीं, इसका ताजा उदाहरण है राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद की ओर से प्रकाशित कक्षा नौ की अंग्रेजी की पुस्तक को लेकर राज्य के शिक्षा मंत्री की आपत्ति। उनकी एक आपत्ति यह है कि आखिर यह पुस्तक सत्र समाप्त होने के बाद क्यों आई? दूसरी आपत्ति यह है कि इस पुस्तक के आवरण पर ब्रिटेन का ध्वज क्यों प्रकाशित किया गया है? उन्होंने माध्यमिक शिक्षा निदेशक को मामले की जांच के आदेश दिए हैं। इसी बीच गुजरात से यह खबर आई कि कच्छ जिले के गांधीग्राम में एक निजी स्कूल में अंग्रेजी की पुस्तक के एक पाठ में बच्चों को यह पढ़ने को मिल रहा था कि गाय काली और सफेद होती है। वह घास खाती है। हम इसका दूध पीना पसंद करते हैं और हम उसका मांस भी खा सकते हैं। इस पर जब अभिभावकों ने आपत्ति जताई तो स्कूल ने क्षमा मांगते हुए गलती दूर करने की बात कही। ये इकलौते मामले नहीं हैं। करीब डेढ़ वर्ष पहले दिल्ली के एक निजी स्कूल में कक्षा चार के बच्चों की द ब्लू प्लैनेट नामक पुस्तक में यह बताया गया था कि अनुसूचित जाति एवं जनजाति क्या होती है? अनुसूचित जाति का मतलब बताया गया था-भारत की अछूत जाति। जब कुछ सजग अभिभावकों ने आपत्ति जताई तो स्कूल प्रिंसिपल ने यह सफाई दी कि हमने पाठ्यक्रम की जांच नहीं की थी। हमने प्रकाशक को सूचित कर दिया है। प्रकाशक ने कहा कि यह टाइपिंग की गलती हो सकती है। हम इसे शीघ्र ठीक कराकर नई पुस्तक देंगे।

नई शिक्षा नीति को लागू हुए चार वर्ष होने वाले हैं। इसके अमल में लंबा समय लगेगा, लेकिन इस शिक्षा नीति का मूल्य-महत्व तभी है, जब पाठ्यपुस्तकों में आवश्यक परिवर्तन किए जाएं। यह काम हो तो रहा है, लेकिन कच्छप गति से। इसका प्रमाण पिछले सप्ताह की यह खबर है कि राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) कक्षा तीन और छह के लिए नया पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें जारी करेगी। इस बारे में सीबीएसई की ओर से सभी स्कूलों को एक पत्र लिखकर सूचित कर दिया गया है। इस पत्र में यह भी लिखा गया है कि शैक्षणिक वर्ष 2024 के लिए अन्य कक्षाओं के लिए पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों में कोई बदलाव नहीं होगा। इसका अर्थ है नौ दिन चले अढ़ाई कोस। यह स्थिति तब है, जब भाजपा ने 2014 के अपने घोषणा पत्र में नई शिक्षा नीति लाने का वादा किया था। यह शिक्षा नीति मोदी सरकार के दूसरे कार्यकाल यानी जुलाई 2020 में आ सकी। नई शिक्षा नीति में देरी को देखते हुए पाठ्यक्रम में संशोधन एवं परिवर्तन के साथ नई पाठ्यपुस्तकें तैयार करने का काम द्रुत गति से होना चाहिए था, लेकिन ऐसा नहीं हो सका और इसका प्रमाण यह है कि अभी तक केवल कक्षा तीन और छह की ही नई पाठ्यपुस्तकें तैयार हो सकी हैं। बीते दस वर्षों में तीन शिक्षा मंत्री बदल गए। धर्मेंद्र प्रधान चौथे शिक्षा मंत्री हैं। इस कालखंड में मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम बदलकर शिक्षा मंत्रालय तो कर दिया गया, लेकिन पाठ्यक्रम बदलने का जो काम प्राथमिकता के आधार पर होना चाहिए था, वह न के बराबर हो सका। यह और कुछ नहीं, इच्छाशक्ति की कमी है।

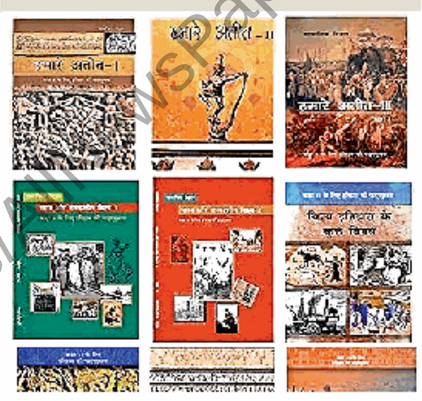

अभी भी पढ़ाई जा रही पुरानी पाठ्यसामग्री ● फाइल

इच्छाशक्ति हो तो कठिन कार्य भी आनन-फानन में हो सकते हैं। इसका एक उदाहरण संप्रग शासन के समय मानव संसाधन विकास मंत्री अर्जुन सिंह ने दिया था। उन्होंने यह मंत्रालय संभालते ही पाठ्यक्रम में परिवर्तन की पहल की और एक वर्ष के अंदर यह काम कर दिखाया। मोदी सरकार के चार शिक्षा मंत्री दस वर्ष में भी यह काम नहीं कर सके। कम से कम उन्हें नई शिक्षा नीति लागू होने के बाद तो इस काम को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी ही चाहिए थी। कोई नहीं जानता कि यह कार्य प्राथमिकता सूची से बाहर क्यों बना रहा? निःसंदेह कोरोना काल में बच्चों की पढ़ाई प्रभावित होने के कारण उन्हें परीक्षा के दबाव से मुक्त करने के लिए स्कूली पाठ्यक्रम में कुछ कटौती की गई थी, लेकिन पाठ्यक्रम परिवर्तन के मामले में जो वांछित था, वह नहीं हो सका।

यदि स्कूली पाठ्यक्रम में आवश्यक बदलाव नहीं किए जाते तो नई शिक्षा नीति को प्रभावी ढंग से लागू करने और उसके माध्यम से भावी पीढ़ी को देश की आवश्यकतानुसार तैयार करने का उद्देश्य पूरा होने वाला नहीं है। मोदी सरकार के मंत्री पाठ्यक्रम में संशोधन-परिवर्तन की जरूरत तो जताते रहे हैं, लेकिन उनके पास इस प्रश्न का उत्तर नहीं कि आखिर इस जरूरत की पूर्ति क्यों नहीं हो पाई? आखिर भावी पीढ़ी को वही पाठ्यपुस्तकें क्यों पढ़ाई जा रही हैं, जिनकी पाठ्य सामग्री से शिकायत है? सबसे अधिक शिकायत इतिहास की पाठ्यपुस्तकों से है। यह एक तथ्य है कि भारत के इतिहास के नाम पर छात्रों को दिल्ली का इतिहास ही अधिक पढ़ाया जाता है। यह इतिहास भी एकपक्षीय है। इसमें देश के समग्र इतिहास की झलक मिलना तो दूर रहा, यह तक पता नहीं चलता कि देश के दूसरे हिस्सों में सुहेलदेव, ललित बारफुकन और मार्तंड वर्मा जैसे ऐसे अनेक शासक हुए, जिन्होंने बाहरी आक्रमणकारियों से न केवल लोहा लिया, बल्कि उनके दांत भी खट्टे किए। इसके अतिरिक्त उन्होंने भव्य भवन बनवाए और जनकल्याण के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किए। इससे इन्कार नहीं कि मोदी सरकार ने बीते दस वर्षों में देश की तस्वीर बदलने के साथ अनुच्छेद-370 हटाने जैसे ऐसे साहसिक कार्य किए हैं, जिसके बारे में कल्पना करना भी कठिन था, लेकिन यह भी सही है कि शिक्षा के मोर्चे पर जो कुछ अपेक्षित था, वह नहीं हो सका।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

इच्छाएं

जीवन है तो इच्छाओं का होना भी स्वाभाविक है। हालांकि एक समस्या यह भी है कि एक इच्छा पूरी होते ही दूसरी कामना सिर उठा लेती है। वहीं, यह भी एक समस्या है कि यदि इच्छाएं ही नहीं होंगी तो संभव है कि व्यक्ति की प्रगति की राह ही अवरुद्ध हो जाए। इस सांसारिक जगत की वास्तविकता ही यही है कि कोई भी व्यक्ति, संस्था या समाज इच्छाओं से पृथक नहीं। संस्थाएं भी किसी न किसी उद्देश्य से गठित की जाती हैं और अपने उद्देश्य की पूर्ति ही उनकी कामना होती है। यहां तक कि धर्म के प्रचार-प्रसार के केंद्र में भी अपने विस्तार की इच्छा का समावेश होता है।

इच्छाएं महज कल्पना हेतु नहीं हैं। इच्छाएं तो प्रेरणा और उत्साह की संवाहक हैं। उनकी पूर्ति के लिए श्रम के साथ ही साथ सकारात्मक ऊर्जा का होना भी आवश्यक है। सकारात्मकता की शक्ति व्यक्ति को इच्छा पूर्ति हेतु सही राह दिखाने में मदद करती है। उसे उन माध्यमों से परिचित कराती है, जिनके द्वारा वह अपने उद्देश्य के गंतव्य तक पहुंच पाता है। इस यात्रा में उत्साह की भी अहम भूमिका होती है। उत्साह का अभाव कामनापूर्ति में बाधक होता है। आलसी मन खुली आंखों से स्वप्न तो दिखा सकता है, किंतु उन्हें पूर्ण करने की दिशा में पुरुषार्थ के लिए प्रेरित नहीं कर पाता।

इच्छाओं को मन में अवश्य स्थान दें, किंतु यह जरूर ध्यान रखें कि आपकी इच्छाएं समग्रता में कल्याणकारी हों। किसी का अहित करने वाली न हों। स्वहितकारी एवं परहितकारी इच्छाओं का पूर्ण होना ही श्रेयस्कर है। अन्यथा इच्छाओं का अपूर्ण रह जाना ही उचित होगा। इच्छा और कुत्सित इच्छा के अंतर को समझकर सही चुनाव करने पर ब्रह्मांड की शक्तियां भी सहायक बन जाती हैं। इस प्रकार जब वे पूर्ण होती हैं तो व्यक्ति को पूर्ण संतुष्टि और सुख का असीम आनंद प्राप्त होता है जो उसके प्रभामंडल की आभा में वृद्धि करता है। ऐसा व्यक्ति अपने संपर्क में आने वाले व्यक्तियों में भी सकारात्मक ऊर्जा का संचार करता है।

मेघा राठी

पाठकनामा

pathaknama@pat.jagran.com

उद्यमिता की भावना को मिले संबल

'विकसित देशों से सीख ले भारत' शीर्षक से प्रकाशित आलेख में शिवकांत शर्मा ने सही सुझाव दिया है कि केवल नौकरी के भरोसे कोई देश प्रगति नहीं कर सकता। हाल के वर्षों में भारत में उद्यमिता को लेकर सोच बदला है, लेकिन यह परिवर्तन भी अभी केवल महानगरों के स्तर पर ही प्रत्यक्ष हो रहा है। हमारे देश में नौकरी और विशेषकर सरकारी नौकरी का आकर्षण अभी भी बना हुआ है। यहां तक कि निजी क्षेत्र की आकर्षक नौकरियों को भी उतनी प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं। यह सब सुरक्षात्मक रवैये के चलते है कि सरकारी नौकरी में कोई जोखिम नहीं होता। जबकि तरक्की का मूलमंत्र ही यही है कि 'नो रिस्क-नो गेन' यानी जोखिम के बिना प्रगति संभव नहीं। जोखिम से बचने की प्रवृत्ति हमारी संभावनाओं को भुनाने में बाधक बनती है। पश्चिम के उदाहरण को देखें तो टेस्ला, गूगल, एपल से लेकर माइक्रोसाफ्ट और मेटा जैसे तमाम वैश्विक ब्रांड ऐसे हैं, जिन्हें पहली पीढ़ी के उद्यमियों ने ही स्थापित किया है। यह तभी संभव हो सका जब इन कंपनियों के प्रवर्तकों के भीतर जोखिम लेने का भाव था और किसी असफलता की स्थिति में सामाजिक उपेक्षा का कोई डर नहीं था। हमें भारत में भी ऐसा समाज विकसित करना होगा जो संभावित उद्यमियों के भीतर साहस का संचार कर सके ताकि वे अपने सपनों को पूरा करने के अतिरिक्त देश को आर्थिक रूप से आगे बढ़ाने के साथ ही विश्व में भारतीय उद्यमिता के ध्वज को फहरा सकें।

रवि वार्ष्णेय, बुलंदशहर

रंगमंच हमेशा प्रासंगिक

रंगमंच पर रंगकर्मी जीवंत अभिनय करते हैं। नाटकों के माध्यम से किसी भी संदेश को आम आदमी तक आसानी से पहुंचाया जाता है। नाटकों के कई स्वरूप हैं। हास्य व्यंग्य, अंधविश्वास व भ्रष्टाचार पर चोट के साथ किसी तानाशाह का भी विरोध करती है। समाज की कुरीतियां जैसे दहेज प्रथा, बाल विवाह आदि को हतोत्साहित करने के लिए नाटक किए जाते हैं। पर्यावरण संरक्षण, प्रदूषण की रोकथाम, वृक्ष लगाओ, जल संचय, मिट्टी का कटाव, पहाड़ों का क्षरण जैसी ज्वलंत समस्याओं पर भी नाटक लिखे जा रहे हैं। अभी चुनाव का समय है। ऐसे में मतदान प्रतिशत बढ़ाने के लिए लोगों को नुक्कड़ नाटक के माध्यम से जागरूक किया जा रहा है। हिंदी रंगमंच के पुरोधा भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अनेक नाटक लिखे, जिनका आज भी मंचन होता है। उनकी सत्य हरिश्चंद्र, अंधेर नगरी आदि कालजयी रचना हैं। हिंदी रंगमंच दिवस हर वर्ष तीन अप्रैल को मनाया जाता है। तीन अप्रैल 1868 को बनारस में पहली बार शीतला प्रसाद त्रिपाठी कृत हिंदी नाटक जानकी मंगल का मंचन हुआ था। हिंदी रंगमंच ने ना जाने कितने अनमोल कलाकारों को जन्म दिया। नाटकों में अभिनय करते समय सही उच्चारण के साथ संवाद बोलना बड़ी बात होती है। देश की आजादी में अभिव्यक्ति व्यक्त करने का सशक्त माध्यम रहा है रंगमंच। शांतपूर्ण ढंग से किसी विषय का प्रतिकार करने का भी सर्वश्रेष्ठ माध्यम रंगमंच है। नाटक के माध्यम से कलाकार समाज की कुरीतियों पर प्रहार करते हैं और सकारात्मक संदेश देते हैं। यह अभिव्यक्ति को व्यक्त करने का उचित और प्रभावकारी माध्यम है।

प्रसिद्ध यादव, बाबूचक, पटना

न्यायपालिका पर भरोसा करें केजरीवाल

संपादकीय आलेख 'जेल में केजरीवाल' पढ़ा। दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल को संवैधानिक पद से त्याग पत्र देकर संविधान की रक्षा करते हुए स्वयं पर लगाए गए आरोपों का मजबूती से सामना करना चाहिए। देश में केजरीवाल ही एकमात्र मुख्यमंत्री नहीं हैं, जो भ्रष्टाचार के आरोप में जेल में हैं। इसके पूर्व जयललिता, लालू प्रसाद यादव, मधु कोड़ा, हेमंत सोरेन भी भ्रष्टाचार के आरोप में घिर कर जेल गए हैं, परंतु इसके पहले मुख्यमंत्री पद का त्याग किया था। जेल से शासन चलाना बेमानी व हास्यास्पद है। विदेशों में यही संदेश जाएगा कि क्या भारत का संविधान इसकी अनुमति देता है? कोई मुख्यमंत्री कैसे चोर, डकैतों, अपराधियों आदि की शरणस्थली जेल से पुलिस कमिश्नरेट, मुख्य सचिव आदि वरिष्ठ अधिकारियों को दिशा-निर्देश जारी कर सकता है? क्या वह जेल में कैबिनेट की बैठक करेंगे? इन सभी प्रश्नों पर संविधान मौन है। फिर भी इसका आशय यह नहीं हुआ कि संविधान में छूट गई बातों की अनदेखी कर हम गलती पर गलती करते जाएं। जांच में समय लगेगा। ऐसा नहीं है कि केजरीवाल को जेल में डाल कर मामला खत्म कर दिया गया। जांच एजेंसी सघन जांच में जुटी हुई है। समय लगेगा। केजरीवाल को धैर्य रखने के साथ न्यायपालिका पर विश्वास करना होगा। हमारी न्यायपालिका ने कई ऐसे फैसले दिए हैं जो देश-दुनिया के लिए नजीर रहे हैं।

युगल किशोर राही, छपरा, बिहार

पोस्ट

चेन्नई सुपर किंग्स के विरुद्ध मैच में रिषभ पंत ने जो पारी खेली, उसके दूसरे हिस्से में पुराने पंत की झलक नजर आई। उन्हें अपनी लय में खेलते देखने का अनुभव बहुत अद्भुत था।

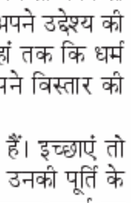

हर्षा भोगले@bhogleharsha

विपक्षी नेता राम मंदिर के दर्शन करने गए क्या? प्राण प्रतिष्ठा का न्योता ठुकरा कर बोले थे, 'यह भाजपा का कार्यक्रम है, हम बाद में जाएंगे।' लगता है कि अब चुनाव के बाद ही जाएंगे। मानक गुप्ता@manakgupta

संजय सिंह को जमानत मिलने से आम आदमी पार्टी को फिर से अनुभवी नेतृत्व मिला है। अरविंद केजरीवाल की गिरफ्तारी के बाद पूरा शीर्ष नेतृत्व जेल में पहुंच गया था। अब संजय सिंह के आने का मतलब है कि अरविंद केजरीवाल के दिशानिर्देश में पार्टी का जिम्मा उनके कंधों पर रहेगा। शरद शर्मा@sharadsharma1

सर्वोच्च न्यायालय ने चुनाव आयोग को नोटिस देकर ईवीएम के साथ वीवीपैट की गणना करने पर उत्तर की अपेक्षा की है। पहले औचक तरीके से उठाकर मिलान कर लिया जाता था। अब मांग है कि हर मत मिलाया जाए। इसमें बाधा है अनावश्यक गिनती बढ़ने का। परिणाम देरी से आएंगे, जबकि हासिल वही होगा- सिफर। डा. रमाकांत राय@RamaKRoy

जनपथ

हम भी बीजिंग को कहें चलो अयोध्या धाम,
शंघाई में भी बसें जा करके प्रभु राम।
जा करके प्रभु राम फर्क क्या इससे पड़ता,
जो अरुणाचल राज्य चीन की आंखों गड़ता।
नामकरण को छोड़ कभी दिखलाए दम भी,
देंगे उचित जवाब उसे निश्चित ही हम भी।

- ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एजीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त

जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5, C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पाटलिपुत्रा, पटना - 800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प.बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्रा * दूरभाष : 0612-2277071, 2277072, 2277073
E.mail : patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097* इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि.नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 24 अंक 348

****

हिन्दुस्तान
1936
सत्य • सार्थक • सदैव

दवाओं की गुणवत्ता

स्वामी रामदेव और पतंजलि आयुर्वेद के प्रबंध निदेशक आचार्य बालकृष्ण के खिलाफ दायर भारतीय चिकित्सा संघ (आईएमए) की याचिका की सुनवाई करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने मंगलवार को जो कुछ कहा है, उसके गहरे निहितार्थ हैं और इसे व्यक्ति या संस्थान विशेष के मामले के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। शीर्ष अदालत ने दोटूक कहा है कि 'न सिर्फ सुप्रीम कोर्ट, बल्कि देश के किसी भी न्यायालय ने यदि कोई आदेश पारित किया है, तो उसका अक्षरशः पालन किया जाना चाहिए।' अदालत ने अपनी टिप्पणियों में एक बार फिर जता दिया है कि कोई कितना भी रसूखदार क्यों न हो, कानून की महिमा सबसे ऊपर है! निस्संदेह, भारतीय न्यायपालिका की दुनिया भर में साख है और यह प्रतिष्ठा उसने एक-दो महीने या साल में नहीं अर्जित की है, यह इंसाफ के प्रति उसकी दशकों की प्रतिबद्धता का फलितार्थ है। ऐसे में, सर्वोच्च न्यायालय ने इस मामले में अपने आदेश की नाफरमानी को उचित ही गंभीरता से लिया है। स्वामी रामदेव व आचार्य बालकृष्ण की शीर्ष अदालत में सशरीर उपस्थिति और उनके माफीनामे पर अदालत की प्रतिकूल टिप्पणी इस बात की तस्दीक करती है। अदालत ने अगली सुनवाई में भी इन दोनों को उपस्थित रहने का आदेश दिया है।

दरअसल, भ्रामक विज्ञापनों का पूरा मसला ही अपने आप में एक बड़ा मामला है, खासकर दवाओं के मामले में इसके परिणामों की प्रकृति इसे और गंभीर बना देती है। ऐसे में, अदालत ने केंद्र व राज्य सरकारों के रवैये पर जो टिप्पणी की है, वह भी सत्ता-प्रतिष्ठानों को आईना दिखाने के लिए काफी है। विडंबना यह है कि जिस आईएमए ने पतंजलि आयुर्वेद के भ्रामक विज्ञापन और इसके ऊंचे ओहदेदारों के बड़बोलेपन के खिलाफ अदालत की शरण ली है, वह अपने पेशेवरों के आचरण की निगरानी का कोई अचूक तंत्र अब तक विकसित नहीं कर पाया है! सोशल मीडिया में हर कुछ दिन पर चिकित्सकों की लापरवाही या मरीजों से मार-पीट के वीडियो वायरल होते रहते हैं। आईएमए कितनों के खिलाफ कार्रवाई करता है? आईएमए को इस पहलू पर भी चिंता करनी चाहिए।

समय आ गया है कि आयुर्वेदिक दवा की परीक्षण-प्रणाली की ठोस निगरानी सुनिश्चित की जाए। सत्यापित दवाओं के विज्ञापन से किसी को क्या गुरेज होगा?

इसमें कोई दोराय नहीं कि हमारे देश में आयुर्वेद की बेहद समृद्ध चिकित्सा पद्धति है और करोड़ों लोग इस प्रणाली से लाभान्वित भी हुए हैं। इस बात से आधुनिक चिकित्सा पद्धति (एलोपैथी) या आईएमए का कोई झगड़ा या विरोध भी नहीं है, परेशानी प्रामाणिकता की कसौटी पर खरी आधुनिक चिकित्सा पद्धति को निराधार चुनौती देने और लोगों को गुमराह करने को लेकर है। इन दोनों पद्धतियों के पेशेवरों और दवाओं का अंतिम उद्देश्य मरीजों को स्वस्थ करना है। मगर दुर्योग से दोनों पद्धतियों में कुछ लोभी कारोबारी नकली दवाओं के जरिये बेबस लोगों की सेहत से खिलवाड़ करते हैं। अभी कितने दिन हुए होंगे, जब कैंसर जैसी जानलेवा बीमारी की नकली एलोपैथिक दवाओं की फैक्टरियां गाजियाबाद से हैदराबाद तक पकड़ी गईं? अभी तीन दिन पहले ही उत्तर प्रदेश सरकार ने 22 से अधिक नकली या मिलावटी आयुर्वेदिक दवाओं की बिक्री पर रोक लगाई है। समय आ गया है, आयुर्वेदिक दवाओं के निर्माण से जुड़ी कंपनियों की दवा परीक्षण-प्रणाली की ठोस निगरानी सुनिश्चित की जाए। सत्यापित दवाओं के विज्ञापन से किसी को क्या गुरेज हो सकता है? इससे न सिर्फ आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली की प्रतिष्ठा दुनिया भर में बढ़ेगी, बल्कि निरीह मरीजों को किसी छलावे का शिकार बनने से भी बचाया जा सकेगा।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 03 अप्रैल, 1949

युद्ध की चिनगारी

एटलांटिक समझौते की शर्तों की घोषणा के बाद अंतरराष्ट्रीय स्थिति आरोपों तथा प्रत्यारोपों से और भी जटिल बन गई है। कोई भी दिन ऐसा नहीं जाता जब ब्रिटिश-अमरीकी गुट तथा रूसी गुट के नेता तथा समर्थक एक-दूसरे पर अभियोग नहीं लगाते। अविश्वास तथा मनोमालिन्य के विषाक्त वातावरण में घटनाचक्र भी अवांछनीय दिशा में चलने लगता है। एटलांटिक समझौते की शर्तों के प्रकाशित होते ही उस समझौते से संबंधित देशों के कम्युनिस्टों ने खुलेआम कह दिया कि वे रूस का साथ देंगे। एटलांटिक तथा प्रशांत में 'रक्षा-तैयारियों', जिन्हें सोवियत रूस तथा उसके समर्थक देश कम्युनिस्ट विरोधी तैयारियां कहते हैं, से उत्तेजित होकर चीन के कम्युनिस्ट रेडियो ने भी ''अमरीकी साम्राज्यवाद'' को चुनौती दे डाली तथा एशियाई जनता से संगठित होकर उसका सामना करने के लिए अपील की। शेन्सी रेडियो हिन्देशिया की जनता से डच साम्राज्यवाद के उन्मूलन के लिए जिस तरह जोरदार अपील कर रहा है, उसका निश्चय ही हिन्देशियाई जनता पर प्रभाव पड़ेगा क्योंकि डच हिन्देशिया को मुक्त नहीं करना चाहते। वे तरह-तरह के कूटनीतिक कुचक्रों से काम ले रहे हैं और ब्रिटेन, अमरीका तथा उनके साथियों को डचों के अन्याय के प्रतिकार के लिए कोई सशक्त कदम उठाने का साहस नहीं हो रहा। इसका स्पष्ट प्रमाण संयुक्त राष्ट्र संघ में स्वीकृत कनाडा का प्रस्ताव है। यह तो एक प्रकार से संयुक्त राष्ट्र संघ का आदेश नहीं, बल्कि उसकी अनुनय-विनय है और इसमें संदेह है कि डच इसको भी वास्तविक अर्थों में स्वीकार करेंगे।

अपनी आंख के शहतीर को न देखकर दूसरे की आंख के तिल को देखने वाले युद्ध की तैयारियों की चर्चा करते रहते हैं। ब्रिटेन तथा अमरीका में अदूरदर्शी व्यक्ति बार-बार दुर्धर्ष लाल सेना तथा सोवियत फौजी तैयारियों का भय दिखाते रहते हैं। हाल ही में एक अमरीकी प्रवक्ता ने कहा था कि परमाणु-बम निर्णायक अस्त्र नहीं होगा, क्योंकि रूस ने उसके प्रतिकार के साधन खोज लिये हैं। और वह भी परमाणु-अस्त्रों के निर्माण में समर्थ है। एक अन्य अमरीकी प्रवक्ता ने यह भी कहा कि अमरीका में रूसी जासूसों का जाल बिछा हुआ है। जहां एक ओर यह प्रचार हो रहा है, वहां सोवियत रूस की ओर से बार-बार अमरीकी जंगी तैयारियों का खाका खींचा जा रहा है।

गाजा में कब तक गरजेंगी बंदूकें

नेतन्याहू की चिंता यह भी है कि गाजा से बाहर निकलने के बाद इजरायल के लिए मुश्किलें कहीं बढ़ न जाएं। आशंका है, ईरान जैसे देशों की मदद से हमास ताकतवर बन जाएगा।

यहां स्कैन करें

अश्विनी महापात्र | प्रोफेसर, जेएनयू

सीरिया में ईरान के वाणिज्य दूतावास पर इजरायल के कथित हमले में सात लोगों की मौत ने हमास-इजरायल जंग को एक नया मोड़ दे दिया है, वहीं दूसरी तरफ, प्रधानमंत्री नेतन्याहू के ऊपर संघर्ष-विराम का चौतरफा दबाव बढ़ने लगा है। पिछले रविवार को काफी बड़ी संख्या में इजरायली प्रदर्शनकारी हमास से युद्ध के खिलाफ नेतन्याहू सरकार को घेरते हुए सड़कों पर उतर आए। प्रदर्शनकारी हमास द्वारा बंधक बनाए गए इजरायलियों को अब तक न छुड़ा पाने की सरकार की नाकामी से नाराज थे। वे संघर्ष-विराम और जल्द आम चुनाव कराने की मांग भी कर रहे थे।

साफ है, हमास पर हमले का दांव प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू पर उल्टा पड़ रहा है। पहले जब कभी ऐसे युद्ध हुए हैं, एकाध महीने के बाद बंदूकें खामोश हो जाती थीं और इजरायल व फलस्तीन अपनी-अपनी राह बढ़ जाते थे। मगर इस बार इजरायल ने आर-पार की लड़ाई लड़ने का मन बनाया था, जिसकी कई वजहें थीं। प्रधानमंत्री नेतन्याहू इसमें अपने लिए काफी संभावनाएं देख रहे थे। उन पर ऐसे-ऐसे आरोप लगे, जिनसे जनता में उनकी स्वीकार्यता घट गई थी, इसलिए इस युद्ध में डटे रहकर वह अपनी छवि मजबूत करना चाहते थे। मगर अब जिस तरह से उनके खिलाफ विरोध-प्रदर्शन तेज हो गया है, उनकी कोशिश जल्द से जल्द हमास के समूल विनाश की होगी, ताकि एक तरफ लोग उनका लोहा मान सकें और दूसरी तरफ फलस्तीन की तरफ से इजरायल को कोई खतरा भी न रहे।

फलस्तीन में विपक्ष कमजोर पड़ गया है और पिछले साल की 7 अक्तूबर की घटना के बाद से वहां हमास का जनाधार बढ़ गया है। ऐसे में, नेतन्याहू की चिंता यह भी होगी कि गाजा से बाहर निकलने के बाद इजरायल के लिए मुश्किलें कहीं बढ़ न जाएं। आशंका है, ईरान जैसे देशों की मदद से हमास अधिक ताकतवर बन जाए। नेतन्याहू के लिए घरेलू दबाव ही काफी नहीं था कि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में अमेरिका के बदले

रुख से भी इजरायल सकते में है। विगत 25 मार्च को पहली बार सुरक्षा परिषद ने गाजा में तत्काल संघर्ष-विराम की मांग की। जब इस संबंध में सुरक्षा परिषद में प्रस्ताव पेश किया गया, तो इजरायल को भरोसा था कि अमेरिका उसका साथ देगा और इस प्रस्ताव को वीटो करेगा, मगर वाशिंगटन ने इससे अलग रहना ही मुनासिब समझा और दबाव अब इजरायल पर आ गया है। इससे हमास को जरूर खुशी मिली होगी कि कम से कम अमेरिका की नीति तो बदली!

व्हाइट हाउस के लिए ऐसा करना अनिवार्य हो गया था। उसका कहना है कि इजरायल की जवाबी कार्रवाई में अब तक हजारों आम नागरिकों की मौत हो चुकी है, जिनमें बड़ी संख्या में महिलाएं और बच्चे शामिल हैं। तकरीबन 20 लाख फलस्तीनी राफा में पलायन करने को मजबूर हुए हैं, जहां मानवीय संकट चरम पर है। पिछले दिनों उत्तरी गाजा में विमानों से गिराए गए खाने के पैकेट पाने की कोशिश में 15 से अधिक लोगों को अपनी जान गंवानी पड़ी थी। ऐसे में, इजरायल के साथ शुरुआत में भले ही पूरी दुनिया की सहानुभूति थी, लेकिन गाजा संघर्ष के लंबा खिंचने के बाद उसके प्रति विश्व बिरादरी का विश्वास डिग गया है।

अमेरिका की घरेलू राजनीति भी अब इसकी इजाजत नहीं देती कि वह इजरायली सैन्य कार्रवाई का पूर्ववत समर्थन करता रहे। पहले की अमेरिकी सरकारों की नजर में इजरायल नरसंहार से पीड़ित ऐसा देश था, जिसके हितों की रक्षा आवश्यक थी, लेकिन अमेरिका की नई पीढ़ी यही मानती है कि जब डेमोक्रेट नेता लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति संजीदा हैं, तो उनकी सरकार फलस्तीनियों के अधिकारों पर चुप क्यों है? इसीलिए, संयुक्त राष्ट्र के संघर्ष-विराम प्रस्ताव को प्रकारांतर से सहमति देकर डेमोक्रेट नीति-निर्माताओं ने जन-आलोचना से बचने की राह निकाली। हालांकि, अमेरिकी यह भी मानते हैं कि संघर्ष-विराम की सूरत में इजरायल को हरसंभव मदद मिलनी चाहिए।

अभी तक इजरायल ने भले ही अपने पत्ते नहीं खोले हैं, लेकिन मौजूदा घटनाक्रम का मतलब यह नहीं है कि दुनिया के देश इजरायल से दूरी बनाना चाहते हैं। भारत सहित तमाम मुल्कों का यही मानना है कि जब कभी इजरायल पर हमला होगा, दुनिया उसके साथ एकजुटता दिखाएगी, लेकिन फलस्तीन विवाद का भी समाधान होना चाहिए। विदेश मंत्री एस जयशंकर ने तो हाल में ही दोहराया है कि फलस्तीन पर हम स्पष्ट हैं और उसे राष्ट्र का दर्जा मिलना चाहिए। हालांकि, यह किस रूप में होगा, यह एक अलग सवाल है।

इस सूरतेहाल में मुमकिन है कि गाजा में हम जल्द ही जंग थमते देखें। इजरायल अभी अमेरिका से नाराज है, लेकिन अमेरिकी हुकूमत इजरायली हितों की ही हिमायती है। वह इस क्षेत्र में लंबे समय तक सुरक्षा चाहती है, जिसके लिए बातचीत को ही वह उचित माध्यम मानती है। हो सकता है कि रमजान के महीने को देखते हुए कुछ शर्तों के साथ यहां सघर्ष-विराम लागू हो जाए। गाजा तक पहुंचने का रास्ता खोला जा सकता है, ताकि जरूरतमंदों तक मानवीय मदद पहुंच सके। हमास व इजरायल एक-दूसरे के बंधकों को भी छोड़ सकते हैं, जिसके लिए जरूरी बातचीत परदे के पीछे चल रही है।

यहां अरब देशों की भूमिका काफी महत्वपूर्ण है। कुछ अरब देश एक समय इजरायल से संबंध बेहतर बनाना चाहते थे, लेकिन मौजूदा तनातनी को देखते हुए इसे टाल दिया गया है। अरब देशों में इजरायल की छवि खराब हुई है। फिलहाल कोई इस्लामी मुल्क सार्वजनिक तौर पर उसके साथ अपने रिश्ते को आगे बढ़ाने का जोखिम नहीं उठाना चाहेगा। वे फलस्तीन पर रुख स्पष्ट करने का दबाव इजरायल पर बना सकते हैं। वे नहीं चाहेंगे कि इजरायल गाजा से सरकार चलाए।

यही कारण है कि भारत के लिए चुनौती बड़ी है। हमारी रुचि खासतौर से भारत-मध्य पूर्व-यूरोप आर्थिक गलियारे (आईएमईसी) में है, जिसका एक हिस्सेदार इजरायल भी है। यह प्रस्तावित गलियारा तभी साकार हो सकता है, जब पश्चिम एशिया में शांति हो। इस गलियारे से हमारी सामरिक मौजूदगी मध्य-पूर्व में बढ़ेगी, जो अमेरिका भी चाहता है और यूरोप भी। इस गलियारे से हमें आर्थिक लाभ मिलेगा और पश्चिम एशिया पर भी महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा। इसी कारण नई दिल्ली जल्द से जल्द इजरायल-हमास में संघर्ष-विराम चाहती है। हमारी सरकार का यही मानना है कि यहां किसी भी तरह से तत्काल शांति स्थापित हो। इसी में पूरे विश्व समुदाय के हित छिपे हैं।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

बहुत महंगे होते चुनाव कहीं लोकतंत्र पर बोझ तो नहीं

यहां स्कैन करें

सी पी राय | सामाजिक विचारक

साल 2024 के लोकसभा चुनाव की घोषणा हो चुकी है। प्रथम चरण के पर्चे भी भरे जा चुके हैं। सभी प्रत्याशियों का चुनाव प्रचार जोरों पर है और खर्च भी बेतहाशा हो रहा है। इस चुनाव में करीब 1.20 लाख करोड़ रुपया खर्च होने का अनुमान लगाया जा रहा है। खर्च इससे अधिक भी हो सकता है। साल 2019 के चुनाव में अनुमानतः 60 हजार करोड़ रुपया खर्च हुआ था, जो तब तक का सबसे महंगा चुनाव माना गया था, जबकि चुनाव 2014 में 9,357 करोड़ रुपया खर्च हुआ था।

आम चुनाव 1951-52 के कुल 10 करोड़ रुपये खर्च के मुकाबले अब खर्च तेजी से सुरसा के मुंह की तरह बढ़ता जा रहा है, जो देश के हालात, लोकतंत्र और चुनाव की शुचिता तथा चुनाव खर्चों की चिंता करने वालों को बहुत उद्वेलित कर रहा है। चुनाव इतना महंगा कैसे हो गया? महंगा होकर आम आदमी की पहुंच से दूर कैसे हो गया? अब तो चुनाव आयोग ने ही प्रत्याशी का खर्च 70 लाख रुपया कर दिया है और पार्टी द्वारा किया जाने वाला खर्च अलग है। कई चुनाव लड़े हुए साथियों से जब मैंने खर्च पूछा, तो चौंकाने वाली चीजें सामने आईं। समाज में एक बहुत प्रतिष्ठित दंपति ने बड़े शहर से मेयर का चुनाव लड़ा, जब उनसे बात की, तो उन्होंने बताया कि दोनों की कुल जमा-पूंजी से 35 लाख रुपये खर्च हो गए, फिर भी वह चुनाव हार गए। उनका मानना है कि यदि एक करोड़ रुपये होते, तो चुनाव लड़ा जा सकता था। बाकी साथियों ने बताया कि लोकसभा चुनाव लड़ने के लिए कम से कम दो करोड़ रुपये चाहिए। जीत के लिए यह आंकड़ा पांच से 10 करोड़ और उससे भी अधिक पर पहुंच जाता है। चुनाव लड़ चुके लोगों ने बताया कि लोकसभा चुनाव में हर ब्लॉक में कम से कम दो गाड़ी चलाना होता है और एक क्षेत्र में 15 से 18 तक ब्लॉक होते हैं, तो कम से कम 30 से 45 गाड़ी का खर्च कम से कम दो लाख रुपया प्रतिदिन होता है। प्रत्याशी, चुनाव एजेंट और अन्य सहयोगियों की भी कम से कम पांच से 10 तक गाड़ी चलती है। हर ब्लॉक पर कम से कम एक कार्यालय चलता है, जिसका खर्च पांच से 10 हजार रुपये प्रतिदिन होता है। केंद्रीय कार्यालय का खर्च भी 10 हजार प्रतिदिन होता है। यह चुनाव लड़ने के लिए होने वाले खर्चों की छोटी झलक है। हिसाब लगाया जा सकता है कि प्रत्याशी और पार्टी कितना खर्च करती है।

जरा यह भी देखिए कि एक सांसद को कुल कितना पैसा मिलता है। सांसद को एक लाख रुपये तनख्वाह मिलती है, तो 60 हजार रुपये कार्यालय भत्ता, 70 हजार रुपये क्षेत्र का भत्ता मिलता है। किसी भी तरह से सांसद की आय 15 से 18 लाख रुपये सालाना ही होती है। अधिक से अधिक एक करोड़ रुपये उसे पूरे पांच साल में मिलते हैं, तब यह सोचने वाली बात है कि वह चुनाव लड़ने के लिए पांच से 10 करोड़ रुपये कहां से खर्च करता है? जाहिर है, चुनाव लड़ने के लिए वह पैसे जुटाता है या उसकी पार्टी जुटाती है। यहीं से शुरू होती है भ्रष्टाचार की कहानी और इसको तब ज्यादा बल मिला, जब सांसदों और विधायकों को विकास के लिए फंड मिलने लगा, जो दो करोड़ से शुरू होकर पांच करोड़ पहुंच गया। एक अनुमान है कि इसमें से पांच से पचास प्रतिशत तक सांसदों की जेब में आ जाता है। इसका सच क्या है, यह तो सांसद ही जानते हैं।

पांच साल में एक सांसद को अधिकतम एक करोड़ रुपये मिलते हैं, पर वह पांच से दस करोड़ रुपये अपने चुनाव पर खर्च कर देता है।

बहरहाल, तय तो यह हुआ था कि इस देश में गरीब भी चुनाव लड़ेगा, पर यह शायद सपना ही रह जाएगा। चुनावों में पूंजीवाद का यह नंगा नाच क्यों और तरह-तरह से धन की यह लूट क्यों? ऐसे सवाल लोकतंत्र और संविधान से चिपक गए हैं और मुंह चिढ़ा रहे हैं।

अब सवाल यह है कि यही चलता रहेगा या इसका कुछ निदान भी खोजा जाएगा? निदान खोजेगा कौन? उससे भी बड़ा सवाल है कि जो जनता भ्रष्टाचार से आजिज आ चुकी है और उससे पिंड छुड़ाना चाहती है तथा अपने नेताओं को पाक साफ देखना चाहती है, वह खुद इस महंगे चुनाव का हिस्सा क्यों बन जाती है? क्यों नकद, कबाब, शराब और साड़ी के लिए फंस जाती है? लोग क्यों अपने नेता से एक दिन 500 रुपया लेते हैं और पांच साल निराश होकर कोसते हैं? क्यों सुविधाओं का रोना रोते हैं? शायद सुधार का यही सही रास्ता है कि लोगों को युद्ध स्तर पर जागरूक व प्रशिक्षित किया जाए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

धर्म में उत्पीड़न का क्या काम

उस धार्मिक संस्कृति ने, जिसे हिंदुत्व के नाम से जाना जाता है, अपना स्वयं कोई नाम नहीं रखा, क्योंकि उसने अपनी सांप्रदायिक सीमाएं नहीं बांधीं; वह एक धर्म-सिद्धांत अथवा पंथ कम, ईश्वरोन्मुख मानव आत्मा के प्रयास की निरंतर बढ़ती हुई परंपरा अधिक है।

पश्चिम की मनोवृत्ति बहुत समय से पूरी मानवता के लिए एक ही धर्म के तर्क-विरुद्ध विचार को पोषित करती आई है। एक ऐसा धर्म, जो अपनी संकीर्णता, धर्म-सिद्धांतों की एक श्रेणी, एक उपासना पद्धति, अनुष्ठानों की एक प्रणाली, विधि-निषेधों के एक विन्यास, एक धार्मिक अध्यादेश के ही बल पर सार्वभौम हो। वह संकीर्ण असंगति एक सच्चे धर्म के रूप में इठलाती फिरती है, जिसे यहां लोगों द्वारा उत्पीड़ित किए जाने के डर से और दूसरे लोकों में ईश्वर द्वारा अस्वीकार अथवा भयंकर अनंत दंड दिए जाने के डर से सभी को स्वीकार करना चाहिए। मानव तर्कहीनता का यह विकृत सृजन, इतनी अधिक असहिष्णुता, क्रूरता, रूढ़िवादिता और आक्रामक कट्टरपंथ का यह जनक भारत के स्वतंत्र और लचीले मानस को कभी भी दृढ़तापूर्वक पकड़ नहीं पाया है।

मनुष्यों में हर जगह एक जैसी कमजोरियां होती हैं और विशेष रूप से धार्मिक रीति-रिवाजों के मामले में भारत में भी असहिष्णुता और संकीर्णता रही है... परंतु इन चीजों का उतना अनुपात नहीं हो पाया, जितना एक समय यूरोप में हो गया था। अधिकतर असहिष्णुता खंडन-मंडन के छोटे-मोटे स्वरूपों अथवा सामाजिक बाधा या जाति से बहिष्कार तक ही सीमित रही है। बहुत ही कम उन्होंने रेखा पार करके बर्बर उत्पीड़न के उन गुरुतर स्वरूपों को अपनाया है, जिन्होंने यूरोप के धार्मिक इतिहास के पटल पर एक लंबा, लाल व वीभत्स दाग अंकित कर दिया है।

भारत में सदैव एक अधिक पवित्र आध्यात्मिक बुद्धि की रक्षाकारी सूझ-बूझ क्रियाशील रही है। भारतीय धर्म ने यह महसूस किया कि चूंकि मस्तिष्क, प्रवृत्तियां और लोगों के बौद्धिक संबंध अपनी विविधता में निस्सीम हैं, इसलिए व्यक्ति को पूजा की स्वतंत्रता दी जानी चाहिए।

वस्तुतः कोई भी व्यवस्था स्वयं वह परिवर्तन नहीं ला सकती, जिसकी मानवता को यथार्थ आवश्यकता है;

भारतीय धर्म ने हमेशा यह महसूस किया कि चूंकि मस्तिष्क, प्रवृत्तियां और लोगों के बौद्धिक संबंध अपनी विविधता में निस्सीम हैं, इसलिए व्यक्ति को पूजा की पूरी स्वतंत्रता दी जानी चाहिए।

क्योंकि वह परिवर्तन विकसित होकर अपनी उच्चतर प्रकृति की संभावनाओं को सुदृढ़ रूप से प्राप्त कर लेगा, तभी आ सकता है, और यह विकास बाह्य नहीं, बल्कि आंतरिक परिवर्तन पर निर्भर है। मगर बाह्य परिवर्तन कम से कम उस अधिक यथार्थ सुधार के लिए अनुकूल परिस्थितियां तो तैयार कर ही सकते हैं या इसके विपरीत वे ऐसी परिस्थितियां ला दें, जिससे केवल कल्कि की तलवार ही पृथ्वी को उदंड आसुरी मानवता के भार से मुक्त कर सके। चुनाव स्वयं मानव जाति के हाथ में है; क्योंकि जैसा वह बोएगी, वैसा ही वह फल पाएगी।

श्री अरविंद

शेखर कपूर | फिल्म निर्देशक

मोबाइल फोन को लेकर भारत में पहली बार जब चर्चा छिड़ी, तब लोग हैरान होकर सवाल पूछते थे कि देश की अशिक्षित विशाल आबादी स्मार्टफोन कैसे चलाएगी? नब्बे करोड़ स्मार्टफोन ने इसका उत्तर दे दिया है।

अनुलोम-विलोम
कच्चातिवु विवाद

मूल मुद्दों से ध्यान भटकाने की साजिश

क्या आम चुनाव में जीत हासिल करने के लिए कच्चातिवु द्वीप को मुद्दा बनाया जा रहा है? जब 1974 में समुद्री सीमा का समझौता हो चुका है, तब 50 साल बाद 2024 में इस मसले को ऐन चुनाव के वक्त क्यों उठाया जा रहा है? ऐसे में, तो इतिहास के कई गड़े मुर्दे उखाड़कर सभी अपनी-अपनी राजनीतिक रोटी सेंकते रहेंगे। इससे मतदाताओं की भावना से भी खिलवाड़ होता है, जिसके कारण चुनाव आयोग को यह देखना चाहिए कि राजनीतिक दल किन-किन मुद्दों पर जनता को लुभाने का प्रयास कर रहे हैं। अगर ऐसा कोई मुद्दा, जिससे किसी की भावना आहत होती हो, तो उस पर तत्काल रोक लगाई जानी चाहिए।

सबसे अच्छा उपाय तो यही है कि लोगों को इस द्वीप की सच्चाई बताई जाए। कच्चातिवु भारत और श्रीलंका के बीच स्थित ऐसा द्वीप है, जहां लोगों की रिहाइश नहीं है। यह द्वीप पहले पुर्तगालियों के अधीन था, जिसके बाद ब्रिटिश हुकूमत का यहां राज हुआ। चूंकि भारत सरकार ने इस पर अपने नियंत्रण का कभी दावा नहीं किया, इसलिए ब्रिटिश हुकूमत की एशिया उप-महाद्वीप से रवानगी के बाद यह श्रीलंका के पास आ गया। ऐसे में, इसे श्रीलंका को देने की बात बिल्कुल गलत है। 1974 के समझौते में भारत ने इस द्वीप पर श्रीलंका के दावे का कोई विरोध नहीं किया था। इतना ही नहीं, हमें यह भी देखना होगा कि अगर जमीन के ऐसे टुकड़े को, जो हमारे लिए किसी काम के न हों, पड़ोसी देश को देने से यदि आपसी संबंधों में गरमी आती है, तो ऐसा करने से किसी को ऐतराज नहीं होना चाहिए।

संभवतः इसी कारण मौजूदा केंद्र सरकार बांग्लादेश के साथ भूमि (एन्क्लेव) की अदला-बदली संबंधी समझौते पर सहमत हो गई थी, जिसे कांग्रेस सरकार ने तैयार किया था। इस समझौते में तो 162 एन्क्लेव की अदला-बदली हुई थी, जिनमें हमारे हिस्से 51 एन्क्लेव, तो बांग्लादेश के हिस्से में 111 एन्क्लेव आए। समझौते के तहत अदला-बदली की गई जमीनों की बात करें, तो हमने 17 हजार एकड़ भूमि बांग्लादेश को सौंपे, जबकि हमारे पास सिर्फ सात हजार एकड़ भूमि आई। इस तरह हमने करीब 10 हजार एकड़ जमीन बांग्लादेश को मुफ्त में दे दिए अथवा दान कर दिया। क्या इस नुकसान को भी अब चुनावी मसला बनाया जाना चाहिए? मेरा मानना है कि चुनाव विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य, अस्पताल, रोजी-रोटी, रोजगार जैसे जरूरी मुद्दों पर लड़ा जाना चाहिए, न कि पुराने मुद्दों पर। कच्चातिवु विवाद असल में मूल मुद्दों से ध्यान भटकाने का एक प्रयास जान पड़ता है।

जंग बहादुर सिंह, टिप्पणीकार

कच्चातिवु हमारी संप्रभुता से जुड़ा मसला

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने एक्स पर पोस्ट करते हुए जब लिखा कि कैसे कांग्रेस ने कच्चातिवु श्रीलंका को दे दिया, तो स्वाभाविक ही हर भारतीयों की कांग्रेस से नाराजगी बढ़ गई और उनमें यह बात फिर से घर कर गई कि इस पार्टी पर भरोसा नहीं करना चाहिए। यह तो भला हो सूचना के अधिकार कानून का कि ठीक वक्त पर लोगों को सच का पता चल गया। देखा जाए, तो कांग्रेस की यह पुरानी फितरत रही है। वह आपसी सौहार्द को मजबूत बनाने या दोस्ती बढ़ाने के नाम पर पड़ोसी देशों को चुपचाप भारतीय जमीनें हड़पने देती है। वह उसका विरोध नहीं करती। यही कारण है कि कच्चातिवु पर भारत ने अपना दावा छोड़ दिया और अब आंकड़े बताते हैं कि पिछले दो दशकों में श्रीलंकाई अधिकारियों ने यहां से छह हजार से अधिक भारतीय मछुआरों को पकड़ा है और उनकी अनगिनत नौकाएं जब्त की हैं। जरा सोचिए, हमारे मछुआरों को अपने ही क्षेत्र में जाने की इजाजत नहीं है। उन्हें इसके लिए श्रीलंकाई अधिकारियों से अनुमति लेनी पड़ती है। क्या इसे हम अपनी संप्रभुता पर हमला नहीं कहेंगे?

यह ठीक है कि कच्चातिवु द्वीप का कोई सामरिक महत्व नहीं है, लेकिन क्या सिर्फ इसीलिए हमें यह द्वीप श्रीलंका को सौंप देना चाहिए? गांव में ही हमारी पुश्तैनी जमीनें होती हैं, जो यूं ही पड़ी रहती हैं, लेकिन हम उन पर अपना मालिकाना हक नहीं छोड़ते। वे बेशक परती पड़ी रहती हैं, लेकिन हम उनको बेचते नहीं, अलबत्ता उनकी रखवाली का दायित्व गांव के ही लोगों को सौंप देते हैं। कुछ यही बात कच्चातिवु के लिए भी कहना उचित है। हमारे लिए भले यह द्वीप काम का न हो, लेकिन हमें इस पर अपना दावा नहीं छोड़ना चाहिए। मौजूदा सरकार ने उचित दमखम दिखाया है और उम्मीद है कि जब जून में फिर से नई सरकार सत्ता में आएगी, तब श्रीलंका के साथ इस मसले का भी उचित समाधान निकाला जाएगा और यह द्वीप फिर से हमारे नक्शे का हिस्सा बन जाएगा।

देश की अखंडता से समझौता करना उचित नहीं। क्या आपसी सौहार्द जमीन के टुकड़े देने मात्र से बनते हैं? यह याद रखिए कि उगते सूरज को सभी सलाम करते हैं। किसी भी देश की यह हिम्मत नहीं होती कि वह भारत की अवहेलना करे, यदि हमारा देश उस दौर में वैश्विक मंचों पर उभर रहा होता। आज ऐसा हो रहा है, और अब कोई भी पड़ोसी देश शायद ही हमसे दोस्ती न रखना चाहेगा। इसलिए, जमीन वापस लेकर भी हम श्रीलंका के साथ आपसी रिश्तों को मजबूत बनाए रख सकते हैं।

प्रभात झा, टिप्पणीकार

https://t.me/AllNewsPaperPaid

अमर उजाला

प्रवाह

महोत्सव विश्वास का

निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना वर्ष : 1948

नई दिल्ली ■ बुधवार, 3 अप्रैल 2024

जो समय बचाते हैं, वे धन बचाते हैं और बचाया हुआ धन कमाए धन के बराबर है।
-महात्मा गांधी

अरुणाचल प्रदेश भारत का अभिन्न और अविभाज्य अंग है और चीन द्वारा उसकी कुछ जगहों को नया नाम देने से कुछ बदलने वाला नहीं है। इन हरकतों को छोड़ अगर चीन सीमा विवाद सुलझाने के प्रति समुचित गंभीरता दिखाए, तो वह ज्यादा उपयोगी होगा।

फिर वही चीन, वही राग

कुछ हफ्ते पहले प्रधानमंत्री मोदी की अरुणाचल प्रदेश यात्रा पर चीन की आपत्तियों को भारत द्वारा इस घोषणा के साथ खारिज किए जाने के बावजूद कि यह पूर्वोत्तर राज्य भारत का अभिन्न व अविभाज्य हिस्सा है, अब चीन द्वारा राज्य की तीस जगहों को नया नाम देना उसके दुस्साहस को दिखाता है, जिसका कड़ा विरोध होना ही चाहिए। यह इसलिए भी घोर आपत्तिजनक है कि पिछले सात साल में यह चौथी बार है, जब चीन ने भारतीय क्षेत्र में आने वाली जगहों को नए नाम देने का दुस्साहस किया है। चीन के सरकारी अखबार *ग्लोबल टाइम्स* का यह कहना कि भारतीय भाषा में जगहों के नाम चीन के क्षेत्रीय दावों व संप्रभु अधिकार को कमजोर करेंगे, इसलिए नाम बदलना जरूरी था, पूरी तरह से बेतुका है, जिस पर विदेश मंत्रालय ने उसे ठीक ही दो-टूक जवाब दिया है कि बार-बार दोहराने से आधारहीन दावों को वैधता नहीं मिलती। दरअसल, अतीत के कथित अन्याय का हवाला देकर आक्रामक क्षेत्रीय दावे करना चीन की रणनीति का हिस्सा है। वह अरुणाचल प्रदेश को दक्षिणी तिब्बत का कथित हिस्सा बताकर इस पर अपना दावा पेश तो करता है, लेकिन उसे इससे भी दिक्कत है कि पूरी दुनिया अरुणाचल को भारत का अंग मानती है। इसका प्रमाण अमेरिका की हालिया टिप्पणी है, जिसमें उसने अरुणाचल को भारत का अभिन्न हिस्सा माना है। गौर करने वाली बात यह भी है कि अरुणाचल प्रदेश के कुछ खास हिस्सों के नाम बदलने के अब तक चीन ने जो प्रयास किए हैं, वे सुनियोजित ही दिखते हैं, भले ही उनसे जमीनी स्तर पर कोई बदलाव न आए हों। वर्ष 2017 में अरुणाचल प्रदेश में दलाई लामा के दौरे के तुरंत बाद बौखलाए चीन ने राज्य की छह जगहों के नए नामों की सूची जारी की थी। फिर, 2021 में पूर्वी लद्दाख में गतिरोध के बीच बीजिंग ने यहां की 15 जगहों को कथित रूप से नया नाम दिया। वर्ष 2023 में अरुणाचल में जी-20 की एक बैठक से बिफरे चीन ने ग्यारह जगहों

के नए नामों की तीसरी सूची जारी की। और अब, चीन ने यह ओछी हरकत तब की है, जब पिछले ही महीने प्रधानमंत्री मोदी ने अरुणाचल प्रदेश में 13 हजार फीट की ऊंचाई पर बनी सेला सुरंग का उद्घाटन किया। दोनों देशों के बीच संबंधों पर भारत का रुख हमेशा से यही रहा है कि सीमा पर शांति के बगैर व्यापारिक रिश्तों पर खुल कर बात नहीं हो सकती। लेकिन यह तभी संभव है, जब चीन भी अपनी बौखलाहट छोड़कर सीमा विवाद को सुलझाने की दिशा में समुचित गंभीरता दिखाए।

उड़ान भी अब बदल गई है

कुछ दशक पहले तक भारत में विमान से यात्रा करना मध्यवर्गीय भारतीयों के लिए एक ग्लैमरस मामला था और एयरपोर्ट पर कुछ खास किस्म के चेहरे ही दिखते थे, लेकिन अब आम आदमी से लेकर श्रमिक तक, यानी पूरा भारत दिखता है, जो एक सुखद अहसास है।

कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' ने 1950 के दशक में अपनी वारसॉ की विमान यात्रा के बारे में लिखा था। कौतुहल और भय से भरा हुआ उनका गद्य उड़ान की व्याकुलता के बारे में था, जिसे एयर इंडिया की पत्रिका में प्रकाशित किया गया था। उस गद्य में उड़ान के अनुभव के बारे में उन्होंने अपनी भावनाओं को साझा किया था, जो दशकों बाद भी मेरे दिमाग में गूंजती हैं। उन्होंने लिखा था- 'हवाई यात्रा, स्वभाव से ही जरा संकट की यात्रा होती है और मुझ जैसे डरपोक लोग जब भी हवाई जहाज पर कदम धरते हैं, वे यह सोच लेते हैं कि अब तक जो जी लिया, अब अगर आगे भी जीना होगा, तो जहाज सकुशल धरती पर लौट आएगा।' वैसे तो दिनकर जी की तरह मैं भी एक डरपोक किस्म की इंसान हूं। हालांकि कई वर्षों पहले की बात है, जब मैंने दिल्ली से देहरादून के लिए एक घरेलू उड़ान ली थी। यह मेरी एक छोटी-सी विमान यात्रा थी, क्योंकि उड़ान भरने के कोई 10 मिनट बाद ही कैप्टन ने घोषणा की और केबिन क्रू को लैंडिंग के लिए तैयार होने के लिए कहा। कह सकती हूं कि यह मेरी एक सर्वश्रेष्ठ उड़ान थी।

अद्वैता काला
पत्रकार, फिल्म कथा लेखक एवं चर्चित उपन्यासकार

मेरी घरेलू सहायिका भी मेरे साथ पहली बार विमान से यात्रा कर रही थी और वह मेरी बगल में बैठी थी। उड़ान के दौरान वह बहुत सहज महसूस कर रही थी, उसका यह रवैया ठीक मेरे विपरीत था, जबकि मैं जब छोटी-सी बच्ची थी, तभी से विमान यात्रा कर रही हूं। वह काफी सहज होकर विमान में परोसे गए भोजन का आनंद ले रही थी, खिड़की के बाहर तैरते हुए बादलों को देख रही थी और जब विमान ने उड़ान भरी या नीचे उतरने लगा, तो उसे अपने पेट में किसी प्रकार की हलचल महसूस नहीं हुई। कहने की जरूरत नहीं है कि उसका अनुभव मेरे अनुभव से बिल्कुल अलग था!

हवाई यात्रा के दौरान मेरी घरेलू सहायिका ने एक बात जो नोटिस की और जिसकी तरफ उसने मेरा ध्यान दिलाया, वह थी हवाई अड्डे पर

मौजूद अन्य यात्री, जो हवाई यात्रा कर रहे थे। इस बात ने उसे काफी आश्चर्यचकित किया, क्योंकि उसने मेरा ध्यान बिहारी मजदूरों के एक समूह की ओर दिलाया, जो दूसरे काउंटर पर अपनी पोटली की जांच करवा रहे थे। मेरी घरेलू सहायिका को यह सब देखकर विश्वास नहीं हो रहा था, क्योंकि उसने हवाई अड्डे पर ऐसे लोगों को देखने की कभी उम्मीद नहीं की थी। हालांकि समय के साथ चीजें बहुत बदल गई हैं। जो काफी बूढ़े लोग हैं, वे याद कर सकते हैं कि कैसे कुछ दशक पहले तक भारत में विमान से यात्रा करना मध्यवर्गीय भारतीयों के लिए एक ग्लैमरस मामला था। पहले जो लोग हवाई जहाज से यात्रा करते थे, वे अपनी उड़ानों के लिए अच्छे कपड़े पहनते थे। यात्रा के बाद उनके रवैये में एक खास तरह का बदलाव आ जाता था और उनकी खुशबू अलग होती थी। यह एक वर्गीय भावना थी। इकनॉमी क्लास में भी यात्रा केवल उच्च वर्ग के लोग ही करते थे। उदारीकरण ने और अधिक एयरलाइनों के लिए आसमां खोल दिया, लेकिन विमान यात्रा करना अब भी सभी के लिए आसान नहीं था, खासकर कड़ी मेहनत करने वाले उन बिहार के मजदूरों के लिए, जो छुट्टी में अपने घर लौट रहे थे।

लेकिन वर्ष 2014 के बाद मोदी सरकार के प्रयासों से हवाई मार्गों और हवाई अड्डों के खुलने के साथ-साथ हवाई जहाजों के प्रतिस्पर्धी किरायों ने हवाई यात्रा को आम लोगों के लिए और अधिक सुलभ बना दिया है और हम सभी को इस बात पर गर्व महसूस करना चाहिए, यहां तक कि उन लोगों को भी, जो हवाई यात्रा करने से डरते हैं। हालांकि रेल से यात्रा करना पसंद करने के बावजूद मेरा मानना है कि नई वंदे भारत ट्रेन की सीटें किसी भी एयरलाइन की सीटों से कहीं अधिक आरामदेह हैं। पर मोदी सरकार के इस परिवर्तनकारी दृष्टिकोण से अलग जो उल्लेखनीय बात है, वह है सामान्य, कामकाजी वर्ग का आत्मविश्वास। और सिर्फ मध्यवर्गीय भारतीयों में ही नहीं, बल्कि श्रमिक वर्ग में भी उड़ान को लेकर यह आत्मविश्वास आया है।

चेक-इन के समय की औपचारिकताओं को पूरा करने में मुझे अपनी घरेलू सहायिका की मदद करनी पड़ी। लेकिन उसने मुझे आश्वस्त किया कि अगली बार वह अपना आधार कार्ड और टिकट अपने हाथ में रखेगी और अकेले यात्रा करने में सक्षम होगी, क्योंकि चेक-इन प्रक्रिया सुव्यवस्थित और सहज थी, जिससे उसे अब कोई डर नहीं लगता था।

रेल से यात्रा करना पसंद करने के बावजूद मुझे स्वीकार करना होगा कि यदि आप समय से पहले पहुंच जाते हैं, तो हवाई यात्रा में ट्रेनों में होने वाली अव्यवस्था नहीं होती है। हालांकि, श्रमिक वर्ग के रवैये में यह आत्मविश्वास, जिसमें उनकी पोटली और अन्य सामान की जांच करने वाले श्रमिकों का समूह भी शामिल है, एक गरिमा और गतिशीलता का संकेत देता है, जो हमारे देश के हवाई अड्डों पर शायद ही कभी देखा जाता था।

मुझे लगभग बारह-तेरह साल पहले की बात याद आती है, जब मैंने मध्य पूर्व की यात्रा की थी, तब मैंने देखा कि हमारे देश के बहुत से लोग हवाई अड्डे पर उतरते समय एक साथ इकट्ठा हो गए थे और उन्हें अपनी आवश्यक सुविधाओं के लिए एक कोने में बैठा दिया गया था, वे वहां मजदूरों के रूप में काम करने के लिए गए थे। मुझे उन लोगों का मवेशियों की तरह झुंड बनाना, उनके भ्रमित चेहरे और उनके साथ दोयम दर्जे का व्यवहार बहुत परेशान करने वाला लगा। मैंने भारत में अंतरराष्ट्रीय चेक-इन काउंटर पर एक व्यक्ति की मदद की थी, और जब वह दूसरों के साथ बैठा, तो उसने उनसे नजरें भी नहीं मिलाईं। इस प्रक्रिया में गरिमा का पूरी तरह अभाव दिखा। अंतरराष्ट्रीय उड़ान की तो बात ही छोड़ दें, यह उन सभी के लिए पहली उड़ान थी।

किसी अनजान मुल्क में होने, विमान से यात्रा करने और फिर विदेशी भाषा की सीमित जानकारी के साथ वहां की सरकार की जांच-प्रक्रिया से संबंधित संयुक्त आतंक के प्रति मैं सहानुभूति रखती हूं। इसने मेरा दिल तोड़ दिया। इसलिए अपने देश में इतने सारे श्रमिकों को विमान यात्रा करते देखकर मुझे व्यक्तिगत रूप से बहुत खुशी हुई। बेशक अधिकांश उड़ानें कम समय की रही हों, लेकिन यह एक लंबी छलांग है, जब उन लोगों के आत्मविश्वास और सम्मान की बात आती है, जो कठिन मेहनत करते हैं।

https://t.me/AllNewspaperPdf

जीवन धारा

ओशो

सारी सांसारिक वस्तुएं विनाशी हैं और सांसारिक वस्तुओं का सुख भी विनाशी है। यह अनुभूति अविनाशी सुख की आध्यात्मिक खोज को जागृत करती है। आध्यात्मिकता हमें द्वैत से परे जाना सिखाती है।

आध्यात्मिकता की खोज शाश्वत सुख के लिए होती है

अध्यात्म और धर्म एक नहीं हैं। दोनों के बीच बहुत बड़ा अंतर है। शांति और सुख की खोज व्यक्ति धर्म से करता है।

प्रत्येक धर्म अपने मार्ग अनुसार ज्ञान प्रदान करता है कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। धर्म एक श्रद्धा और मान्यता है। यह हमें बुरी चीजों को छोड़कर अच्छी चीजों को अपनाना सिखाता है, क्योंकि कुदरत का नियम ऐसा है कि जब कोई बुरे कर्म करता है, उसका पाप उसे दुखी करता है; अगर कोई अच्छे कर्म करता है, तो वह पुण्य कर्म उसे खुशी देता है।

धर्म कुछ करने के बारे में है-आपको भगवान की पूजा करनी है, आपको पश्चाताप करना होगा, आपको ध्यान करना होगा, आपको घर और संपत्ति, पैसा और सभी सामान को त्यागना होगा और आपको बहुत सारी तपस्या भी करनी होगी। मुख्य रूप से, हमेशा किसी भी कार्य से जुड़े रहने से बहुत बोझ और तनाव होता है। जब कोई व्यक्ति कुछ करना चाहता है और किसी भी कारण से उसे करने में विफल हो जाता है, तब स्वाभाविक रूप से उसके भीतर तुरंत ही बहुत डर और घबराहट हो जाती है, जो उसे बहुत बेचैन करती है।

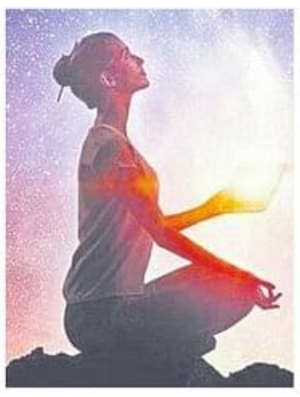

पुण्य कर्मों का फल आम तौर पर सांसारिक सुख के रूप में होता है, जो अपने स्वभाव से तात्कालिक होता है। और जब तक कोई इस सुख का अनुभव कर रहा है, तब वह थोड़ी देर के लिए संतुष्टि का अनुभव करता है, लेकिन उसके के बाद वह संतृप्त हो जाता है और सुख के कुछ अन्य स्रोत खोजने के लिए आगे बढ़ता है। यह प्रक्रिया जन्म-जन्मांतर चलती रहती है। आध्यात्मिकता की खोज शाश्वत सुख के लिए शुरू होती है। जन्म-जन्मांतर जैसे-जैसे आध्यात्मिक प्रगति होती जाती है, यह अनुभव होता है कि सारी सांसारिक वस्तुएं विनाशी हैं और सांसारिक वस्तुओं का सुख भी विनाशी है। यह अनुभूति अविनाशी सुख की आध्यात्मिक खोज को जागृत करती है। अतः खोज शुरू होती है, कि मुझे अविनाशी सुख कहां से मिलेगा?

कुदरत एक दिन ऐसी परिस्थिति प्रदान करती है, जिससे उसकी ज्ञानी से मुलाकात होती है। ज्ञानी उसे यह अनुभव देते हुए मदद करते हैं कि मैं कौन हूं। और यहीं से आध्यात्मिकता की शुरुआत होती है। और हमें बुरा छुड़वाकर अच्छे को अपनाने को कहता है, जबकि आध्यात्मिकता में कुछ भी छोड़ने और अपनाने की कोई आवश्यकता नहीं है। आध्यात्मिकता हमें द्वैत से परे जाना सिखाती है और मुक्त करती है।

जिस तरह एक भौतिक वैज्ञानिक गंदे पानी से दो तत्वों को अलग कर सकता है, उसी प्रकार ज्ञानी (आध्यात्मिक वैज्ञानिक), अध्यात्म विज्ञान के माध्यम से आत्मा के जड़ तत्वों में से आत्मा को अलग कर सकते हैं। जब हम अनुभव करते हैं कि 'मैं कौन हूं?' तब हम आत्मा का अनुभव करते हैं, जो शाश्वत है और हमें आत्मा के अविनाशी सुख का अनुभव होता है।

द्वैत से परे...

सूत्र

आमतौर पर लोग धर्म और अध्यात्म को एक ही समझ लेते हैं, जबकि इन दोनों में बहुत बड़ा अंतर होता है। धर्म हमें अच्छे-बुरे की पहचान कराता है और अच्छाई की ओर प्रेरित करता है, जबकि अध्यात्म हमें अपने आत्म से परिचय कराता है। आत्म से साक्षात्कार होने पर ही हम द्वैत से परे होकर मुक्त होते हैं।

दूसरा पहलू

जलवायु परिवर्तन दुनिया भर में स्कूली बच्चों की शिक्षा और परीक्षा परिणामों पर बहुत बुरा असर डाल रहा है।

प्राकृतिक आपदाएं कर रहीं बच्चों को स्कूल से दूर

देश भर में तापमान 45 डिग्री पहुंच जाने की वजह से दक्षिणी सूडान में स्कूल बंद कर दिए गए। हाल के वर्षों में यहां भयंकर बाढ़ की वजह से भी बच्चों के स्कूल जाने में बाधा पड़ी। दक्षिणी सूडान में औसतन बच्चे अपने जीवन में औपचारिक स्कूली शिक्षा के पांच साल भी पूरे नहीं कर पाते हैं। हमने इस सवाल की गहराई से पड़ताल की कि जलवायु परिवर्तन दुनिया भर में बच्चों की शिक्षा पर कैसे असर डाल रहा है।

नेचर क्लाइमेट चेंज में हाल में छपे एक शोध पत्र में, हमने जलवायु परिवर्तन से संबंधित घटनाओं को शिक्षा नतीजों से जोड़ने वाले अध्ययनों की समीक्षा की और हमें गर्मी और गिरते शैक्षणिक प्रदर्शन के बीच स्पष्ट संबंध देखने को मिला। अमेरिका में ज्यादा तापमान वाले दिनों में किशोर बच्चों के गणित में बहुत ही कम नंबर आए। चीन में तेज गर्मी के दिनों में बच्चों के परीक्षा-प्रदर्शन में गिरावट आई, जो स्कूली शिक्षा के एक चौथाई साल या कई महीनों के बराबर थी।

लेकिन यह मामला सिर्फ परीक्षा तक सीमित नहीं है। अध्ययन बताते हैं कि बढ़ती गर्मी दीर्घकाल में सीखने की क्षमता को भी प्रभावित करती है। प्राकृतिक आपदाएं बच्चों को स्कूल से दूर कर रही हैं। विकासशील देशों में तूफान और सूखे की वजह से बच्चों को स्कूल छोड़ने पर मजबूर होना पड़ता है और फिर वे परिवार की मदद के लिए काम करने लगते हैं। इस तरह स्थायी रूप से शिक्षा से उनका नाता टूट जाता है। उच्च आय वाले देशों में बच्चे तूफान और जंगल की आग के कारण स्कूलों से अनुपस्थित रहते हैं।

कैटलिन एम. प्रेंटिस

अध्ययन बताते हैं कि बढ़ती गर्मी दीर्घकाल में सीखने की क्षमता को भी प्रभावित करती हैं। प्राकृतिक आपदाएं बच्चों को स्कूल से दूर कर रही हैं।

सैंडी तूफान के दौरान जिन बच्चों की माताएं गर्भवती थीं, उन बच्चों में ध्यान की कमी के विकार की आशंका ज्यादा पाई गई।

प्राकृतिक आपदाओं का असर बच्चों के जन्म के पहले भी पड़ सकता है। जैसे, सैंडी तूफान के दौरान जिन बच्चों की माताएं गर्भवती थीं, उन बच्चों में ध्यान की कमी के विकार की आशंका ज्यादा पाई गई। भारत में बढ़ते तापमान के कारण फसल नुकसान और कुपोषण की वजह से भी बच्चों की स्कूली शिक्षा प्रभावित होती है और इसका असर बच्चों के स्कूल जाने और सीखने पर भी पड़ता है। जलवायु परिवर्तन के कारण पहले से वंचित समूहों को शिक्षा हासिल करने में कहीं ज्यादा समस्याओं का सामना करना पड़ेगा। इससे निपटने के लिए ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को कम कर वैश्विक तापमान को तत्काल काबू में करने की जरूरत है। साथ ही, बच्चों को जलवायु परिवर्तन से होने वाले तनावों से भी बचाना है। प्राकृतिक आपदाओं से निपटने की प्रभावी रणनीति बनाने के साथ लोगों को जागरूक भी करना होगा।

-साथ में फ्रांसिस वर्ग्सट्स, हेलेम लुइस बेरी एवं कैल्टन माइनर। *(द कन्वर्सेशन)*

आंकड़े

अरबपतियों के ठिकाने

दुनिया भर में सबसे ज्यादा अरबपति न्यूयॉर्क में हैं, लेकिन मुंबई ने बीजिंग को भी पीछे छोड़ दिया है, जो हमारी बढ़ती समृद्धि को दर्शाता है।

सोत : Hurun Global Rich List, 2024

शरीर क्षणभंगुर है, आत्म तत्व ही सबकुछ है। सांसारिक मोहजाल में फंसकर जीवन व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए।

पशु-पक्षियों से सीखो

अंतर्यात्रा
शिव कुमार गोयल

गंधर्वराज विश्ववसु की पुत्री मदालसा तपस्वी और विद्वान थीं। वह अपने पुत्रों को शास्त्रों के उदाहरण देकर बताया करती थीं कि शरीर क्षणभंगुर है, आत्म तत्व ही सबकुछ है। सांसारिक मोहजाल में फंसकर जीवन व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए।

मदालसा के पति ऋतध्वज ने एक दिन कहा, प्रिये, तुम तीनों बच्चों को ज्ञानोपदेश देकर सांसारिक जगत से विरत कर चुकी हो। चौथे पुत्र अलर्क को राजधर्म का उपदेश दो, ताकि वह हमारे वंश को आगे बढ़ा सके।

मदालसा ने अलर्क को आदर्श राजधर्म की शिक्षा देनी शुरू की। एक दिन मदालसा ने कहा, पुत्र, हम पशु-पक्षियों के जीवन से कुछ सीख सकते हैं। कौवे से आलस्य रहित रहने की शिक्षा ली जा सकती है। भौरों से रसग्राही और मृग से सदा चौकन्ना रहने की सीख लेनी चाहिए। जैसे सर्प फन फैलाकर अपनी रक्षा के लिए दूसरों को डराता है, उसी प्रकार राजा को शत्रु को डराकर आतंकित रखना चाहिए। राजा को हंस के समान नीर-क्षीर विवेकी होना चाहिए। जैसे चंद्रमा और सूर्य सर्वत्र समान रूप से अपनी ऊर्जा का प्रसार करते हैं, वैसे राजा को समस्त प्रजा के साथ समानता का व्यवहार करना चाहिए। वही राजा अमर होता है, जो प्रजा के हित और कल्याण को सर्वोपरि मानता है।

(अमर उजाला आर्काइव से)

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 13 मई, 1998

परमाणु परीक्षणों का कोई राजनीतिक उद्देश्य नहीं

'परमाणु परीक्षणों का राजनीतिक उद्देश्य नहीं'

नयी दिल्ली, 12 मई (वा)। प्रधानमंत्री कार्यालय (पीएमओ) के निकटवर्ती सूत्रों के अनुसार सोमवार को किये गये परमाणु परीक्षणों का कोई राजनीतिक उद्देश्य नहीं था।

सूत्रों ने बताया कि भाजपा हमेशा से परमाणु हथियार संपन्न भारत की पक्षधर रही है। राष्ट्रीय एजेंडे में कहा गया था कि हम परमाणु शस्त्र के इस्तेमाल के विकल्प को खुला रखेंगे। उन्होंने कहा कि यह परीक्षण किसी की इजाजत या दबाव में नहीं बल्कि विशुद्ध राष्ट्रीय हित और सुरक्षा परिवेश को ध्यान में रखकर किये गये हैं प्रधानमंत्री कार्यालय सूत्रों के अनुसार परमाणु परीक्षण करते का निर्णय करते समय यह अपेक्षा करते नहीं थी कि सारी दुनिया एक स्वर में

प्रधानमंत्री कार्यालय के निकटवर्ती सूत्रों के अनुसार पोखरण में किए गए परमाणु परीक्षणों का कोई राजनीतिक उद्देश्य नहीं था। भाजपा हमेशा परमाणु संपन्न भारत की पक्षधर रही है। यह राष्ट्रीय हित और सुरक्षा को ध्यान में रखकर किया गया है।

टाइम पास बन गया है सोशल मीडिया

नए शोध के अनुसार, अरबों लोग सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं, लेकिन वे कम पोस्ट कर रहे हैं और अधिक निष्क्रिय अनुभव का आनंद ले रहे हैं।

मुकुल श्रीवास्तव

तकनीक

वर्ष 2010 में जो सोशल मीडिया आशाओं-उम्मीदों का प्रतीक बनकर उभर रहा था, वह 2020 आते-आते फेक न्यूज और लोगों के राजनीतिक विचारों को प्रभावित करने जैसे आरोपों का शिकार हो गया। महज दस साल में ही लोग अब सोशल मीडिया पर अपनी राय पोस्ट करने से परहेज करने लगे हैं। पोस्ट करने से आशय टेक्स्ट, इमेज फॉर्म में अपने आपको अभिव्यक्त करने से है। लोग लॉग इन तो करते हैं, पर बहुत कम लोग ही पोस्ट कर रहे हैं।

लोग प्रतिदिन लगभग दो घंटे इंस्टाग्राम, फेसबुक या एक्स जैसे सोशल मीडिया को स्क्रॉल करते हुए समय बिताते हैं, लेकिन उनकी आखिरी पोस्ट एक साल पहले की होती है। कभी-कभी लोग स्टोरी जरूर शेयर करते हैं, लेकिन वह चौबीस घंटे बाद गायब हो जाती है। किसी तरह के विवाद से बचने के लिए लोग अब यह सोचने पर मजबूर हो गए हैं कि इस बात पर झगड़ने की जरूरत नहीं है कि किसने किसे वोट दिया या कोई क्या सोचता है। अब वे आमने-सामने या

समूह चैट को प्राथमिकता देते हैं, जिसे 'निजी नेटवर्किंग' कहा जा रहा है।

उपयोगकर्ताओं के सर्वेक्षण और डाटा-एनालिटिक्स फर्मों के शोध के अनुसार, अरबों लोग सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं, पर वे कम पोस्ट कर रहे हैं और ज्यादातर निष्क्रिय अनुभव का आनंद ले रहे हैं। वे अब भी लोगों की सोशल मीडिया फीड देखने या रील देखने में समय बिता रहे हैं, लेकिन वे अब अपनी राय रखने में उतने सक्रिय नहीं रहे हैं। यानी यह टाइम पास करने का जरिया बन चुका है,

डाटा-इंटेलिजेंस कंपनी मॉर्निंग कंसल्ट की अक्तूबर रिपोर्ट में, सोशल-मीडिया अकाउंट वाले 61 प्रतिशत वयस्क अमेरिकी उत्तरदाताओं ने कहा कि वे जो पोस्ट करते हैं, उसके बारे में ज्यादा चयनात्मक हो गए हैं, यानी अब लोग क्या पोस्ट करना है, उसके बारे में सोचने लग गए हैं।

भारत भी अपवाद नहीं है। भले ही अपने विशाल सोशल मीडिया यूजर बेस के कारण यहां ऐसा नहीं दिखता, पर अब लोग सोशल मीडिया पर कम पोस्ट शेयर कर रहे हैं। इसके कई कारण हैं। इस शोध के हिसाब से लोग मानने लगे हैं कि वे जो सामग्री देखते हैं, उसे नियंत्रित नहीं कर सकते। वे अपने जीवन को ऑनलाइन साझा करने के प्रति भी अधिक सुरक्षात्मक हो गए हैं और उन्हें अपनी निजता की भी चिंता होने लगी है। सोशल मीडिया पर ट्रोलर्स की बढ़ती संख्या के कारण भी लोगों का मजा किरकिरा हुआ है।

यह सोशल मीडिया कंपनियों के व्यवसाय के लिए खतरा है। उपयोगकर्ताओं के ज्यादा से ज्यादा शेयर करने के कारण ही वे दुनिया की सबसे शक्तिशाली कंपनियों और प्लेटफार्मों में से एक बन गए हैं। मजेदार बात यह है कि इनमें से कोई भी कंपनी कोई उत्पाद नहीं बनाती है, फिर भी ये दुनिया की बड़ी और लाभकारी कंपनियां बन गई हैं। जाहिर है, लोगों के कुछ कहने की आदत के कारण यानी सिर्फ यूजर जेनरेटेड कंटेंट के कारण ये कंपनियां मुनाफा कमा रही हैं।

भारत में बेशक अभी अमेरिका जैसी स्थिति नहीं है, पर लोग अपनी निजता की सुरक्षा के लिए सब कुछ सोशल मीडिया पर डालने की मानसिकता से किनारा कर रहे हैं। इसका एक बड़ा कारण सोशल मीडिया एकाउंट का उपयोग मार्केटिंग और ब्रांडिंग के लिए किए जाने के अलावा मीडिया लिट्रेसी का प्रचार-प्रसार भी है। वैसे भी सोशल मीडिया पर आते ही उपभोक्ता डाटा में तब्दील हो जाता है। इस तरह देश में हर सेकंड असंख्य मात्रा में डाटा जेनरेट हो रहा है, जिसका फायदा इंटरनेट के व्यवसाय में लगी कंपनियों को हो रहा है।

आधिकारिक तौर पर सोशल मीडिया से भारत में कितने रोजगार पैदा हुए, इसका उल्लेख नहीं मिलता, क्योंकि ये सारी कंपनियां इनसे संबंधित आंकड़े सार्वजनिक नहीं करतीं। साथ ही प्रत्यक्ष रोजगार के काफी कम होने का संकेत इन कंपनियों के कर्मचारियों की कम संख्या से प्रमाणित होता है। अब सोशल मीडिया कंपनियां उपयोगकर्ताओं को ज्यादा व्यक्तिगत अनुभव देने की ओर अग्रसर हैं। वे मैसेजिंग जैसे अधिक निजी उपयोगकर्ता अनुभवों में निवेश कर रही हैं और बातचीत को ज्यादा सुरक्षित बना रही हैं, जिसमें लोगों को अंतरंग साथियों के लिए पोस्ट करने के लिए प्रोत्साहित करना भी शामिल है। हाल ही में इंस्टाग्राम ने क्लोज फ्रेंड्स फीचर जारी किया है। इन सबके बावजूद सोशल मीडिया से लोगों की बढ़ती अरुचि किसी नए माध्यम के विकास का बहाना बनेगी या नए यूजर की बढ़ती संख्या इसे ही बनाए रखेगी, यह देखना दिलचस्प होगा।

edit@amarujala.com

राजस्थान पत्रिका
संस्थापक
कर्पूर चन्द्र कुलिश

नक्सल प्रभावित इलाकों में बदलाव का सुखद संकेत

देश के नक्सल प्रभावित इलाकों में भी लोकतंत्र की जड़ें अन्य हिस्सों की तरह लगातार मजबूत होती जा रही हैं। इसे सुखद संकेत ही कहा जाना चाहिए। निर्वाचन आयोग के आंकड़े बताते हैं कि पिछले दो दशक के दौरान लोकसभा चुनावों में नक्सल प्रभावित इलाकों में मतदान में तीस फीसदी की वृद्धि हुई है। यह कहना भी उचित ही होगा कि केन्द्र और नक्सल प्रभावित राज्यों में शासन के लगातार प्रयासों के कारण नक्सल समस्या अब सिमटती जा रही है। प्रभावित क्षेत्रों में सुरक्षा बंदोबस्त और विकास की रफ्तार बढ़ने का नतीजा है कि जिन इलाकों में नक्सलियों की धमकियों के कारण लोग चुनाव के समय अपने मताधिकार का इस्तेमाल करने से घबराते थे, वहां लोग लोकतंत्र के यज्ञ में बढ़-चढ़ कर योगदान दे रहे हैं।

पिछले कई दशकों में यह देखने में आ रहा था कि सशस्त्र क्रांति के नाम पर नक्सली देश में चुनावों की लोकतांत्रिक प्रक्रिया का विरोध करते रहे हैं। सबने वह दौर भी देखा है जब चुनावों की घोषणा होते ही नक्सली प्रभावित क्षेत्रों में मतदाताओं के लिए चुनाव बहिष्कार का फरमान जारी कर दिया जाता था। कुछ दशक पहले उनके इस फरमान का लोगों पर असर दिखता भी था। लोग वोट डालने से इसलिए भी कतराते थे क्योंकि नक्सली चुनाव के समय हिंसक माहौल बनाकर मतदाताओं को खूब डराते-धमकाते थे। समय के साथ जैसे ही नक्सली क्षेत्रों में सुरक्षा प्रबंध मजबूत होने लगा तो नक्सली चुनाव में बहिष्कार के फरमान को उम्मीदवारों से वसूली का माध्यम बनाने लग गए थे। लेकिन कुछ सालों से नक्सलियों का यह हथकंडा भी बेअसर होने लगा है। सरकारी आंकड़े बताते हैं कि एक दशक पहले देश के 10 राज्यों के 106 जिले नक्सल समस्या से प्रभावित थे, लेकिन अब यह संख्या घटकर 46 रह गई है। पांच साल के दौरान नक्सल वारदातों में भी 76 प्रतिशत तक कमी आई है। इसकी बड़ी वजह यह भी है कि देश के नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में सड़क, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी मूलभूत सुविधाओं का तेजी से विस्तार हुआ है। इसके कारण पुलिस और प्रशासन की पहुंच आंतरिक इलाकों में बढ़ी है। नक्सल प्रभावित इलाकों के प्रत्येक मतदान केंद्रों पर सुरक्षा बलों की पर्याप्त तैनातगी से लोगों में सुरक्षा का भाव बढ़ा है।

आज के दौर में भी चुनाव के समय नक्सली अपनी मौजूदगी दिखाने के लिए हिंसा की छिटपुट घटनाओं को अंजाम देते हैं। संतोष इस बात का है कि लोग इनसे विचलित हुए बिना लोकतंत्र के महायज्ञ में हिस्सा ले रहे हैं। उम्मीद की जा सकती है कि भविष्य में नक्सल प्रभावित इलाकों में और सुधार आएगा। यह माहौल नक्सलियों को भी हथियार छोड़ने के लिए मजबूर करेगा।

आंध्र में 27 महिलाओं ने लड़ा चुनाव

लोकसभा चुनाव 2019 में आंध्र प्रदेश की 25 सीटों पर कुल 319 प्रत्याशियों ने चुनाव लड़ा। इनमें 27 महिला प्रत्याशी थी। मैदान में उतरे 266 प्रत्याशियों की जमानत जब्त हो गई।

पत्रिका लोकतंत्र का उत्सव

लोकसभा चुनाव 2024

भाजपा को जम्मू-कश्मीर में 46.68 प्रतिशत वोट मिले

जम्मू-कश्मीर में लोकसभा चुनाव 2019 में भाजपा को 46.68 प्रतिशत मत मिले और जम्मू-कश्मीर नेशनल कांफ्रेंस को 7.94 प्रतिशत मत मिले। दोनों ने तीन-तीन लोकसभा सीटें जीतीं। कांग्रेस को 28.65 प्रतिशत मत मिले, लेकिन एक भी सीट नहीं जीत पाई।

महाराष्ट्र 33 प्रतिशत वोटों पर है सभी राजनीतिक दलों की नजर

मराठा समुदाय के तेवर तय कर सकते हैं उम्मीदवारों का भविष्य

पत्रिका LIVE चुनाव मैदान से

मुंबई
रामदिनेश यादव

देश के दूसरे सबसे बड़ी आबादी वाले प्रदेश महाराष्ट्र में लोकसभा चुनाव को लेकर महासंग्राम मचा हुआ है। यहां शिवसेना (उद्धव बालासाहेब ठाकरे) नेतृत्व वाली महाविकास आघाडी और भाजपा नेतृत्व वाली महायुति के बीच कांटे की टक्कर होगी। इस लड़ाई में कई महत्त्वपूर्ण फैक्टर भी काम करेंगे, जिनमे से एक महत्त्वपूर्ण फैक्टर है मराठा समाज। राज्य में मराठा समुदाय 33 प्रतिशत से अधिक है। आरक्षण की मांग को लेकर पिछले कई वर्षों से यह समाज आंदोलन कर रहा है। इस वर्ग को कई बार आरक्षण देने का प्रयास तत्कालीन राज्य सरकारों ने किया लेकिन कोर्ट में उनका मामला टिक नहीं पाया। इस बार भी जब प्रदेश में एकनाथ शिंदे की सरकार आई तो उसके कुछ दिनों बाद ही मराठा आरक्षण का जिन्न जाग गया और मराठा आरक्षण को लेकर आंदोलन भी शुरू हो गया। इस आंदोलन में मनोज जारांगे पाटिल हीरो बनकर उभरे, शिंदे सरकार ने मराठाओं की कुछ मांगों को तो स्वीकार कर लिया लेकिन कुछ को लेकर मुकर गई। इस वजह से मराठा समाज के कुछ लोग सरकार से खफा हैं। आरोप-प्रत्यारोप के चलते राजनीतिक दलों और मराठा समाज के बीच तनाव बढ़ गया है। इसका असर इस लोकसभा चुनाव में पड़ेगा। दिलचस्प बात यह है कि मराठा समाज किस दल से खफा है और किसके साथ है, यह किसी को समझ में नहीं आ रहा है।

समुद्र किनारे स्थित विजयदुर्ग पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र है।

बना हुआ है दबदबा

महाराष्ट्र में मराठा समुदाय काफी समृद्ध माना जाता है। अब तक राज्य में 10 मुख्यमंत्री मराठा समाज के बने हैं। महाराष्ट्र की कुल जनसंख्या का 33 प्रतिशत हिस्सा मराठा समुदाय का है। पश्चिमी महाराष्ट्र सहित मध्य, खानदेश और कोंकण क्षेत्र में मराठा समुदाय की संख्या अधिक है। प्रदेश में शिक्षा और सहकार क्षेत्र में इनका काफी प्रभुत्व है। राज्य के 50 प्रतिशत एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, 70 प्रतिशत डिस्ट्रिक्ट कोऑपरेटिव बैंक और 90 प्रतिशत शुगर फैक्ट्री मराठा लोगों के हाथ में है। पश्चिम महाराष्ट्र में दुग्ध सहकार क्षेत्र में भी दबदबा है। राज्य के विधानमंडल के विधानसभा और विधान परिषद (कुल 366 में से 169) में 46 प्रतिशत से ज्यादा विधायक मराठा समाज से हैं।

पाटिल पर है नजर

फिलहाल सबकी नजर लोकसभा चुनाव को लेकर मनोज जारांगे पाटिल की भूमिका पर टिकी है। पिछले वर्ष सितंबर से आंदोलन में उतरे मराठा कार्यकर्ता मनोज जारांगे राज्य में हीरो बन गए।

भाजपा के साथ शिवसेना (एकनाथ शिंदे) गुट, एनसीपी अजित पवार गुट, राष्ट्रीय समाज पार्टी महायुति गठबंधन में शामिल होकर लड़ रहे हैं। शिवसेना (उद्धव बालासाहेब ठाकरे) के साथ कांग्रेस व एनसीपी (शरद चंद्र पवार) गठबंधन में शामिल हैं।

चुनावी चटकारा

खास क्यों बन गई मप्र की एक सीट

मध्यप्रदेश में लोकसभा की 29 सीटें हैं, लेकिन एक सीट की सबसे ज्यादा चर्चा हो रही है। वह इसलिए कि यहां एक पूर्व मुख्यमंत्री और वर्तमान मुख्यमंत्री की प्रतिष्ठा दांव पर लगी हुई है। पूर्व मुख्यमंत्री का कहना है कि वे 45 साल से राजनीति में हैं और मोदी लहर में भी यह सीट कांग्रेस के पास रही। इसलिए वे किसी भी सूरत में इस सीट को खोना नहीं चाहते। मौजूदा मुख्यमंत्री इस सीट को जीतकर अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करना चाहते हैं। भाजपा के नेता ही यह टिप्पणी कर रहे हैं कि जो एक सीट पहले नहीं जीत पाए, उसे जीतकर दिखाएं। अपनों की इस बात को प्रदेश के मुखिया चुनौती के रूप में ले रहे हैं। अब कुछ नया करने के लिए यहां भी कांग्रेसियों को तोड़कर भाजपा में लाने का अभियान शुरू हो गया है। दोनों ही दिग्गज इस सीट पर जीत दिलाकर के शीर्ष नेतृत्व को खुश करना चाहते हैं।

राग सियासी

पेशा चोखो देख कर,
करियर रहे बनाय।
पीढ़ी दर पीढ़ी बढ़े
राजनीति अपनाय।।
राजनीति अपनाय,
सीट कुछ बनी बपौती।
बेटा बेटी कहीं,
कहीं पर पोता पोती।।
जनसेवा की ओट,
वोट का जात हमेशा।
हर दल में ये खोट,
सियासत है अब पेशा।।

-राम नरेश गौतम

पश्चिम बंगाल ममता ने 4 और बीजेपी ने 5 को दिया है मौका

दलबदलू नेताओं पर भी जताया टीएमसी व भाजपा ने भरोसा

पत्रिका LIVE चुनाव मैदान से

कोलकाता
रवींद्र राय

पश्चिम बंगाल में लोकसभा चुनाव को लेकर सत्तारूढ़ तृणमूल कांग्रेस और विपक्षी भाजपा इस बार फूंक-फूंक कर कदम रख रही है। दोनों ही पार्टियां कुछ सीटों पर उम्मीदवारों के चयन में अनुभवी नेताओं की बजाय दलबदलुओं पर भरोसा जताने की रणनीति अपना रही हैं। इससे पार्टी के वफादार समर्थकों में असंतोष पैदा हो रहा है। तृणमूल कांग्रेस प्रमुख ममता बनर्जी ने अपने 42 उम्मीदवारों की सूची में चार दलबदलुओं को शामिल किया है जो या तो अन्य पार्टियों के निर्वाचित प्रतिनिधि हैं या हाल के वर्षों में पार्टी में शामिल हुए हैं। पार्टी की उम्मीदवार सूची में तीन अन्य नाम ऐसे हैं जो वर्तमान में टीएमसी के सांसद या विधायक हैं लेकिन उनका भी विभिन्न दलों से जुड़े रहने का इतिहास रहा है। भाजपा ने इसके विपरीत अब तक घोषित 40 प्रत्याशियों में पांच दलबदलुओं को जगह दी है।

दावा, जीतने की क्षमता के चलते दिया टिकट: तृणमूल और भाजपा ने अपने फैसलों को सही ठहराते हुए जीतने की क्षमता और राजनीतिक रणनीति को सर्वोच्च प्राथमिकता दी है। दूसरे दलों से आए लोगों को खड़ा करने के कारण तृणमूल कांग्रेस और भाजपा दोनों के खिलाफ कुछ क्षेत्रों में विरोध और असंतोष शुरू हो गया है। दलबदलुओं को उम्मीदवार बनाने से जुड़े जोखिमों को स्वीकार करते हुए दोनों पार्टियों के नेता कहते हैं कि उनकी निष्ठा की कोई गारंटी नहीं है। तृणमूल कांग्रेस के राज्यसभा सदस्य सुखेंदु शेखर रॉय ने कहा कि ऐसा नहीं है कि हमारे पास उम्मीदवार के रूप में सक्षम नेताओं की कमी है। राजनीति में अनेक पहलुओं पर विचार किया जाना चाहिए। जीतने की क्षमता और पार्टी की रणनीति सर्वोपरि है।

गेटवे टू द नॉर्थ-ईस्ट के रूप में प्रसिद्ध सिलीगुड़ी प्रमुख पर्यटन स्थल है।

मैदान में उतारे दलबदलु

तृणमूल की ओर से मैदान में उतारे गए दलबदलुओं में विश्वजीत दास, मुकुटमणि अधिकारी और कृष्ण कल्याणी प्रमुख हैं, जो क्रमशः बनगांव, राणाघाट और रायगंज लोकसभा सीटों से चुनाव लड़ रहे हैं। बैरकपुर से भाजपा सांसद अर्जुन सिंह दो साल पहले तृणमूल में शामिल होने के बाद पिछले महीने भगवा खेमे में लौट आए थे। उनको फिर से पार्टी ने प्रत्याशी बनाया है। तृणमूल कांग्रेस के दिग्गज विधायक तापस राय उम्मीदवार चयन को लेकर असहमति के कारण भाजपा में शामिल हो गए और पार्टी ने उन्हें कोलकाता उत्तर से मैदान में उतारा है। शुभेंदु अधिकारी के छोटे भाई सौमेंदु अधिकारी भी तृणमूल कांग्रेस छोड़कर भाजपा में आए और पार्टी के उम्मीदवार हैं।

नए चेहरों को तरजीह

तृणमूल कांग्रेस ने निवर्तमान सांसदों में से 16 को फिर से उम्मीदवार बनाया है, लेकिन सात को मैदान में नहीं उतारा। इस बार उम्मीदवार सूची में 26 नए चेहरे हैं जिनमें 11 राजनीति में नए हैं। पिछली बार चुनाव हारे नेताओं को दूर रखा है।

उत्तराखंड भाजपा धारा 370 की समाप्ति और समान नागरिक संहिता का मसला उठा रही

कांग्रेस ने अग्निवीर और अंकिता हत्याकांड को बनाया मुद्दा

डॉ.संजीव मिश्र

उत्तराखंड की पांच लोकसभा सीटों पर चुनाव के लिए मैदान सज चुका है। उत्तराखंड में सत्ता पक्ष हो या विपक्ष, पूरा चुनाव मुद्दों पर केंद्रित नजर आता है। भाजपा के सामने लगातार तीसरी बार सभी सीटें जीतने की चुनौती है, वहीं कांग्रेस हमलावर भूमिका में है। उत्तराखंड में पहले चरण में 19 अप्रेल को वोट डाले जाएंगे। इसके लिए मैदान सज चुका है और धुरंधरों के बीच घमासान मचा है। वर्ष 2014 और 2019 के लोकसभा चुनावों में सभी पांच सीटें जीतने वाली भाजपा उत्तराखंड में क्लीन स्वीप की हैट्रिक मारना चाहती है। हरिद्वार में रमेश पोखरियाल निशंक की जगह पूर्व मुख्यमंत्री त्रिवेंद्र सिंह रावत को मौका दिया गया है। यहां उनका मुकाबला पूर्व मुख्यमंत्री हरीश रावत के पुत्र वीरेंद्र रावत से है। पौड़ी गढ़वाल में पूर्व मुख्यमंत्री तीरथ सिंह रावत का टिकट काटकर भाजपा ने पार्टी के मुख्य प्रवक्ता अनिल बलूनी को उतारा है। यहां कांग्रेस के पूर्व प्रदेश अध्यक्ष गणेश गोदयाल मोर्चा संभाले हैं। अल्मोड़ा में एक बार फिर भाजपा के अजय टम्टा और कांग्रेस के प्रदीप टम्टा आमने-सामने हैं। नैनीताल सीट पर पिछले चुनाव में हरीश रावत को हराने वाले अजय भट्ट का मुकाबला कांग्रेस के प्रकाश जोशी से होगा। टिहरी में 2012 में उपचुनाव जीतने के बाद लगातार सांसद माला राज्यलक्ष्मी शाह के खिलाफ पहली बार लोकसभा चुनाव लड़ रहे कांग्रेस प्रत्याशी जोतसिंह गुनसोला मैदान में हैं। गुनसोला दो बार मसूरी से विधायक रहे हैं।

भाजपा वादों के पूरा होने का कर रही प्रचार

उत्तराखंड में भाजपा विकास के साथ पार्टी के वादे पूरे करने का मसला उठा रही है। इसमें राम मंदिर निर्माण के साथ समान नागरिक संहिता सबसे ऊपर है। पार्टी का कहना है कि उत्तराखंड से भाजपा ने पूरे देश में समान नागरिक संहिता पर अमल की पहल की है। भाजपा यहां कश्मीर में धारा 370 की समाप्ति को भी मुद्दा बना रही है।

पहाड़ की बेटी को न्याय दिलाने की हो रही बात

कांग्रेस ने एक रिसोर्ट में अंकिता भंडारी की हत्या के बाद उसमें भाजपा के वरिष्ठ नेताओं की मिलीभगत का आरोप लगाकर इसे मुद्दा बनाया हुआ है। पहाड़ की बेटी को इंसाफ दिलाने की बात बार-बार उठ रही है। कांग्रेस अग्निवीर योजना के विरोध का झंडा भी बुलंद किए हुए है और इसके लिए कई सैनिक सम्मेलन आयोजित किए जा चुके हैं।

55 प्रत्याशी मैदान में

उत्तराखंड में पहले चरण में मतदान होने के कारण नाम वापसी की प्रक्रिया पूरी हो चुकी है। अब प्रदेश की पांच लोकसभा सीटों के लिए कुल 55 प्रत्याशी मैदान में हैं। इनमें सर्वाधिक 14 प्रत्याशी हरिद्वार में हैं। इनके अलावा टिहरी में 11, पौड़ी गढ़वाल में 13, अल्मोड़ा में सात और नैनीताल मे दस प्रत्याशी मैदान में हैं।

भाजपा डायरी

भ्रष्टाचार के मुद्दे को जोर-शोर से हवा देने की है तैयारी

लोकसभा चुनाव धीरे-धीरे रफ्तार पकड़ रहा है। चुनाव रैलियां शुरू हो चुकी हैं। भाजपा की प्रचार टीम के कप्तान नरेन्द्र मोदी मंगलवार को पहले उत्तराखंड और फिर राजस्थान में गरजे। कांग्रेस के साथ तमाम विपक्ष पर बरसे भी। राजस्थान की रैली में जनता से मुखातिब होते हुए सवाल दागा और बोले, सारे भ्रष्टाचारी मिलकर भ्रष्टाचार पर कार्रवाई रोकने के लिए रैली कर रहे हैं। इशारा साफ-साफ दो दिन पहले दिल्ली के रामलीला मैदान में हुई विपक्ष की रैली की तरफ था। दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल की गिरफ्तारी के खिलाफ विपक्ष ने रैली में सरकार पर निशाना साधा था।

मोदी ने रैली में जनता से संवाद साधते हुए पूछा, मैं कहता हूं भ्रष्टाचार हटाओ और वे (विपक्ष) कहते हैं, भ्रष्टाचारी को बचाओ। चुनावी चौसर पर अब अगले दो महीने केजरीवाल की गिरफ्तारी का मुद्दा छाया रहने वाला है।

लगता है राममंदिर, अनुच्छेद 370 और सीएए के साथ भाजपा भ्रष्टाचार के मुद्दे को भी जोर-शोर से हवा देगी। मोदी ने विपक्ष पर तंज कसते हुए कहा कि, 'वे कहते हैं कि मोदी के तो कोई परिवार ही नहीं है तो उन्हें भ्रष्टाचार की क्या जरूरत है।' मोदी ने फिर तंज कसते हुए कहा, 'तो क्या जिनके परिवार हैं, उन्हें भ्रष्टाचार करने का लाइसेंस मिल जाता है।' राजनीति में आरोप-प्रत्यारोप का सिलसिला उतना ही पुराना है, जितनी पुरानी राजनीति है। आने वाले दिनों में यह सिलसिला परवान पर पहुंचने वाला है।

राजनीतिक वर्ग पहेली –2

च	कि	ण	ल	ख	न	उ	श	ले	प्रि	ब	गां	र	रा
दी	ख	ब	अ	चि	त	शा	र्जी	सा	खि	द	दि	व	अ
जो	सा	ले	द	श	प	अ	चि	न	पा	य	या	ट	कि
ध	प्रि	ह	तो	ध	ण	मे	पी	या	द	ना	जे	सा	मु
पु	ज	खि	कि	या	य	ठी	भ	ज	ड	सा	पी	या	यं
र	यो	भ	वा	ल	सू	ट	न	दि	य	ध	न	पू	श
ट	गी	ज	रा	उ	खि	व	मै	न	पु	री	ड्डा	र्वी	उ
श	आ	न	ण	ले	ति	ज	र	त्य	पा	ची	ध	दि	व
ती	दि	न	सी	घे	भ	रु	ल	चि	ले	अ	सा	ल्ली	ध
जु	त्य	ब	व	त	ध	यो	व	भू	घे	थ	व	गां	म
चि	ना	मि	प्रि	ल	ज	हि	इ	नं	थ	ती	खि	र्जी	म
ज	छिं	द	वा	डा	स	चि	न	ती	त	मि	भ	य	ल
ली	भू	व	प्रि	उ	भू	पे	श	ब	घे	पु	पा	र्जी	ब
गी	अ	खि	ध	ले	र	र्जी	भ	ण	ज	र	र	ख	न
कु	ध	र	ले	य	म	थु	रा	भू	सा	ट	ध	म	क

प्रस्तुतिः प्रतिमा सिंह

संसदीय क्षेत्र के नाम

1. धारावाहिक सास भी कभी बहू थी की अभिनेत्री और केंद्रीय मंत्री की संसदीय सीट
2. पीएम इस संसदीय सीट से सांसद बने
3. इस सीट से सांसद केंद्र के रक्षा मंत्री हैं
4. कांग्रेस के लिए दो यात्राएं कर चुके इस नेता की यह सीट दक्षिण भारत में स्थित है
5. ड्रीम गर्ल यहां से जीत लोकसभा पहुंची
6. पत्नी की मौत से विवादों में आए नेता कहां से सांसद बने
7. पूर्व बल्लेबाज दिल्ली की इस सीट से सांसद बने
8. केंद्रीय जल शक्ति मंत्री इस सीट से सांसद हैं
9. मप्र के पूर्व मुख्यमंत्री के पुत्र इस सीट से सांसद हैं
10. यूपी के पूर्व सीएम की पत्नी इस सीट से सांसद बनी थी

पोलीटून

कांग्रेस डायरी

वार-पलटवार के बीच रैलियों की तैयारियां जोरों पर

चुनाव प्रचार के आगाज में पहले गृहमंत्री अमित शाह और फिर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के राजस्थान दौरे से एक कदम आगे बढ़ चुकी भाजपा पर जवाबी हमले के लिए कांग्रेस में भी तैयारियां युद्ध स्तर पर हैं। पांच अप्रेल को पार्टी अपना विजन डॉक्यूमेंट और चुनाव घोषणा-पत्र को जारी करेगी। पार्टी का दावा है कि इसे देशभर के लोगों से फीडबैक लेकर तैयार किया गया है। कांग्रेस अपनी पांच न्याय गारंटियों हिस्सेदारी न्याय, किसान न्याय, नारी न्याय, श्रमिक न्याय और युवा न्याय पहले ही घोषित कर चुकी है। इन पांच गारंटियों पर ही पार्टी घोषणा-पत्र आधारित होगा। पार्टी दिल्ली में चुनाव घोषणा-पत्र जारी करने के

समारोह और इसके बाद 6 अप्रेल को जयपुर और हैदराबाद में होने वाली पार्टी की बड़ी चुनावी रैलियों को लेकर मशक्कत कर रही है।

जयपुर में अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खरगे के अलावा सोनिया गांधी, राहुल गांधी और प्रियंका गांधी का संबोधन है। राजस्थान से खबर है कि ज्यादातर सीटों के कांग्रेस प्रत्याशी चुनाव प्रचार के लिए प्रियंका की डिमांड कर रहे हैं। कांग्रेस ने 17 नाम और घोषित किए हैं, इनमें आंध्रप्रदेश, बिहार, उड़ीसा व पश्चिम बंगाल के प्रत्याशियों के नाम हैं। आंध्रप्रदेश विधानसभा चुनाव के लिए 114 उम्मीदवार और ओडिशा विधानसभा के 49 नाम घोषित किए गए। बिहार के मुजफ्फरपुर से भाजपा के सांसद अजय निषाद कांग्रेस में शामिल हो गए। निषाद भाजपा का टिकट नहीं मिलने से नाराज होकर कांग्रेस में आए हैं।

आज का सवाल

अमरीका में हिंदू धर्मस्थलों पर हमले क्यों बढ़े हैं?

ईमेल करें: edit@epatrika.com

उचित रणनीति का अभाव

कमजोर रणनीति की वजह से विपक्ष की स्थिति अच्छी नहीं है। इसकी वजह से वरिष्ठ नेता चुनाव नहीं लडना चाहते हैं। वर्तमान हालात, गुटबाजी व आंतरिक बिखराव भी चुनाव लड़ने से कतराने का कारण हैं।

-सतीश उपाध्याय, मनेंद्रगढ़ एमसीबी, छत्तीसगढ़

आत्मविश्वास की कमी

सत्ता में मौजूद दल की मजबूती के चलते विपक्ष के नेताओं को हार की आशंका सता रही है। वे अपनी राजनीतिक साख बचाने और राजनीति का स्तंभ बना रहना चाहते हैं। विपक्ष के नेताओं में आत्मविश्वास की कमी है।

-गजेंद्र चौहान, डीग

विपक्षी नेताओं में है डर

असल में जांच एजेंसियों के दुरुपयोग के चलते विपक्ष का हौंसला पस्त है। विपक्ष के कई नेताओं को उलझा दिया गया है। कई को जेल भेज दिया गया है। इससे विपक्षी नेताओं में डर का माहौल है।

-विजय शर्मा, कोटा

patrika.com पर पढ़ें

पाठकों की प्रतिक्रियाएं

पत्रिकायन का सवाल था, 'विपक्ष के वरिष्ठ नेता भी चुनाव लडने से क्यों बच रहे हैं?' प्रतिक्रियाएं ऑनलाइन भी देखें।

इसे स्कैन करें https: rb.gy/9x8rlr

https://t.me/AllNewsPaperPdf

चिंतन

चीन को 'चीनी अंदाज' में कड़ा जवाब दे भारत

अरुणाचल प्रदेश के शहरों, गांवों, नदियों, झीलों, वन क्षेत्र आदि के बार बार नाम बदलने की चीनी हिमाकत का करारा जवाब दिया जाना जरूरी है। पहली बार 2017 में जब पहली बार चीन ने यह हिमाकत की थी, तभी भारत को कठोर एक्शन लेना चाहिए था। इस बार अरुणाचल प्रदेश के 30 जगहों के चीनी नाम चीन ने रख दिया है, इससे पहले तीन बार ऐसा कर चुका है। हर बार भारत ने कड़ी प्रतिक्रिया दी और चीनी करतूतों को खारिज किया, पर इससे बात नहीं बन रही है। चीन बार बार भारत को उकसावे वाली गतिविधियां करता रहा है। नाम रखने के अलावा, कभी अरुणाचल के लोगों को वीजा से इनकार तो कभी नेताओं के अरुणाचल दौरे पर आपत्ति जताता है। भारत व चीन सीमा क्षेत्र के बीच 1914 से मैकमोहन रेखा निर्धारित है, इसके बावजूद, चीन कभी लद्दाख में, कभी अरुणाचल प्रदेश में, कभी उत्तराखंड में सीमा पर विवाद खड़ा करता रहता है। गलवान की हिसंक झड़प के बावजूद चीन अपनी हरकतों से बाज नहीं आ रहा है। चीन अरुणाचल प्रदेश के पास सीमा पार अपने इन्फ्रास्ट्रक्चर को मजबूत कर रहा है। चीन कभी भी भरोसेमंद पड़ोसी नहीं रहा है, भारत के भरोसा जताने के बावजूद चीन ने धोखा ही दिया है। भारत और चीन के बीच हिमालय पर्वत क्षेत्र है, जो भौगोलिक रूप से दोनों देशों को विभाजित करता है, लेकिन हिमालय क्षेत्र में भारत की ओर के क्षेत्र पर चीन की हमेशा बुरी नजर रही है। कभी चीनी दीवार तक सिमटा चीन ने अपनी विस्तारवादी नीति के तहत पड़ोस के कई क्षेत्र पर अवैध कब्जा कर चुका है। शिनझियांग, मकाऊ, तिब्बत आदि क्षेत्र कभी भी चीन का हिस्सा नहीं रहे, भारत से युद्ध के बाद भारत के क्षेत्र अक्साई चिन पर अवैध कब्जा जमाए हुए है। भारत को अरुणाचल में स्थानों का नाम बदलने के चीन के ''मूर्खतापूर्ण प्रयासों'' को सदा के लिए बंद करने के उपाय करने होंगे। पूर्व पीएम पंडित जवाहरलाल नेहरू की गलतियों को ठीक करते हुए, भारत को तिब्बत को लेकर नया मोर्चा खोलना चाहिए। चीन बेशक मजबूत है, लेकिन अभेद्य नहीं है। भारत को सामरिक और कूटनीतिक दोनों स्तर पर चीन को घेरना चाहिए। केवल चेतावनी देने से बात नहीं बन रही है। भारत के मजबूत नेता को चीन के दुस्साहस के खिलाफ मजबूत फैसले लेने होंगे। चीन की करतूतों को हर वैश्विक मंच पर बेनकाब करना होगा। चाणक्य के देश भारत को चीन के खिलाफ सतत कूटनीतिक माइंडगेम के हथियार का इस्तेमाल करते रहना पड़ेगा। सामरिक व सीमा विवाद मामले पर देश में राजनीति नहीं होनी चाहिए, जैसा अक्सर कांग्रेस करती रहती है। चीन के साथ विवाद कांग्रेस सरकार की गतलियों की वजह से ही बढ़ी है। 'हिंदी चीनी भाई भाई' नारे की कितनी भारी कीमत भारत ने उठाई, यह कांग्रेस की ही पंचशील नीति का खामियाजा थी। यह वास्तविकता जरूर है कि किसी के नाम बदलने या नया नाम रख देने से वह उसका नहीं हो जाएगा, लेकिन यह हिमाकत करना ही दूसरे राष्ट्र को उकसाना है। चीन यही कर रहा है। चीन भारत के साथ सीमा विवाद जानबूझ कर नहीं सुलझाना चाहता है, ऐसे में भारत को भी चीनी अंदाज में ही जवाब देना चाहिए। तिब्बत पर मोर्चा खोलना चाहिए, अक्साई चिन लेने का प्रयास करना चाहिए, कैलाश मानसरोवर समेत सभी भारतीय ऐतिहासिक-सांस्कृतिक महत्व के क्षेत्र तक पहुंच भारतीय क्षेत्र से सुनिश्चित करनी चाहिए, पीओके और गिलगित-बाल्टिस्तान को भारतीय क्षेत्र में मिलाने के प्रयास से भी चीन के सीपेक को धक्का लगेगा। चीन के साथ ट्रेड को धीरे-धीरे जीरो स्तर पर लाना होगा।

सवाल
आर.के. सिन्हा

बांग्लादेश में भारत के दुश्मन कौन

जिस भारत ने 1970 तक के पूर्वी पाकिस्तान, की प्रताड़ित और पीड़ित आम जनता के हितों की रक्षा के लिए पाकिस्तान से युद्ध मोल लिया, उस बांग्लादेश का प्रमुख विपक्षी दल बांग्लादेश नेशनलिस्ट पार्टी (बीएनपी) लगातार भारत के खिलाफ जहर उगलता रहता है। उसके जहरीले अभियान से पड़ोसी मुल्क के कठमुल्लों को भी भारत और अपने ही बांग्लादेश के हिन्दुओं के खिलाफ हिंसा करने का मौका मिल जाता है। बांग्लादेश में बीएनपी ने हाल ही में भारत के उत्पादों के बॉयकाट का आह्वान भी किया हुआ है। इसके चलते वहां प्रधानमंत्री शेख हसीना सरकार और विपक्ष आमने-सामने हैं। मुस्लिम बहुल बांग्लादेश में भारत विरोधी भावना कोई नई बात नहीं है। पिछले साल क्रिकेट विश्व कप में भारत की हार के बाद ढाका और कई शहरों में जश्न मना था। मैं स्वयं 1970 के भारत -पाक युद्ध में 'युद्ध संवाददाता'के हैसियत से बांग्लादेश में भारतीय सेना के साथ रहा था। युद्ध के दौरान भारतीय सेना ने लाखों बांग्लाभाषी मुसलमानों को क़त्लेआम से बचाया। इन सभी अत्याचारों का मैं प्रत्यक्षदर्शी गवाह हूं,लेकिन बांग्लादेश की आज़ादी के बाद जब बंगबंधु शेख़ मुज़ीबुर रहमान ने सभी युद्ध संवाददाताओं के साथ वरिष्ठ संपादकों को एक विशेष ट्रेन भेजकर बुलाया, तभी जगह-जगह 'इंडियाज़ जिनीस-पत्तर भालो नेई' के वाल पेंटिंग देखने को मिले। जब मैंने शेख़ मुजीब के पीआरओ से पूछा कि भारत ने तो युद्ध के बाद लाखों बांग्लादेशियों को भुखमरी से बचाया, हज़ारों मकान बनवाए, फिर यह क्या चल रहा है?' तब पीआरओ ने कहा 'आप चिंता मत कीजिए। कुछ हिंदू विरोधी कट्टरपंथी हैं, उन्हें ठीक करने में सरकार लगी हुई है।' लेकिन वे तो आज भी बने हुए हैं, बल्कि कई गुना बढ़ गए हैं। बांग्लादेश में भारत के कथित हस्तक्षेप को लेकर विरोध और असहमति 1990 के दशक से देखी जा रही है, लेकिन हाल के वर्षों में विरोध के ये सुर कहीं ज़्यादा मुखर हुए हैं। बीएनपी और उसकी सहयोगी पार्टियों ने देश में बीती जनवरी में हुए आम चुनाव का बहिष्कार किया था। इस चुनाव में जीत के बाद शेख़ हसीना चौथी बार बांग्लादेश की प्रधानमंत्री बनी थीं। आम चुनाव के बाद से बीएनपी के अधिकांश नेता ये माहौल बनाने में जुटे हुए हैं कि बांग्लादेश के एकतरफ़ा चुनाव को सिर्फ़ भारत की वजह से वैधता मिली है और इसलिए लोगों को भारत और उसके उत्पादों का बहिष्कार करना चाहिए। संकेत बहुत साफ है कि बीएनपी भारत से नफरत करती है। हालांकि उसकी नफरत की वजह समझ से परे है। भारत का 1947 में बंटवारा हुआ। पंजाब और बंगाल सूबों के कुछ हिस्से पाकिस्तान में चले गए। आगे चलकर पाकिस्तान का वह भाग, जिसे पूर्वी पाकिस्तान कहते थे, 1971 में एक स्वतंत्र देश के रूप में विश्व मानचित्र पर उभरा । नए देश का नाम बांग्लादेश के रूप में जाना गया। उसकी स्थापना में भारत का योगदान रहा। वहां कट्टरता की एक तस्वीर लगातार देखने को मिलती रहती है। हिन्दुओं और प्राचीन हिन्दू मंदिरों पर हमले लगातार होते रहते हैं। कुछ साल पहले बांग्लादेश में अमेरिकी ब्लॉगर अविजित रॉय की निर्मम हत्या और उनकी पत्नी के ऊपर हुए जानलेवा हमले से वहां पर कट्टरता की बढ़ती ताकत का पता चलता है। वहां पर धर्मनिरपेक्ष ताकतों के लिए स्पेस जीवन के सभी क्षेत्रों में घट रहा है। अविजित रॉय बांग्लादेश मूल के अमेरिकी थे। वे हिन्दू थे। वे और उनकी पत्नी बांग्लादेश में कट्टरपंथी ताकतों के खिलाफ आवाज बुलंद कर रहे थे। अविजित की हत्या से बांग्लादेश में हिन्दुओं की भयावह होती स्थिति पर पूरी दुनिया का ध्यान गया था। यह अफसोसजनक बात है कि बांग्लादेश में हिन्दू सुरक्षित नहीं हैं। जिस बांग्लादेश में 'हिफ़ाज़त-ए-इस्लाम' जैसा जहरीला संगठन सक्रिय होगा उसका भगवान ही मालिक है। यह अपने देश के लोगों को यह समझाने में सफल रहा कि इस्लाम खतरे में है। कैसे खतरे में है? यह कोई नहीं बता सकता। बांग्लादेश में 90 फीसदी से अधिक मुसलमान हैं। तस्लीमा नसरीन ने भी अपने उपन्यास लज्जा में बांग्लादेश में अल्पसंख्यकों की दर्दनाक स्थिति पर विशतार से लिखा है, इसलिए ही उनकी जान के दुश्मन हो गए यह कट्टरपंथी। उसी विरोध के कारण तसलीमा को बांग्लादेश छोड़ना पड़ा था। तसलीमा लसरीन का उपन्यास 1993 में पहली बार प्रकाशित हुआ था। वह लज्जा में साम्प्रदायिक उन्माद के नृशंस रूप को सामने लाती हैं। लज्जा के आने के बाद कट्टरपंथियों ने उनके खिलाफ फतवा जारी किया था। बांग्लादेश की स्थापना के बाद लग रहा था कि वहां पर हिन्दुओं की स्थिति सुधर जाएगी। भारत की चाहत रही है कि बांग्लादेश की प्रधानमंत्री शेख हसीना सत्तासीन रहें। निश्चित रूप से बांग्लादेश में शेख हसीना का सत्ता पर काबिज होना भारत और वहां के हिन्दुओं के हित में है।

(लेखक पूर्व सांसद हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

एक देश, एक चुनाव
डॉ. रमेश ठाकुर

चुनावों में फिजूल खर्ची रुकेगी

> देश में चुनाव पर बहुत ज्यादा पैसा फिजूल खर्च होता है। सवाल ये है आखिर ये समस्या रुके कैसे, हालांकि इसको लेकर एक चुनाव एक देश की मुहिम कारगर साबित हो सकती है। वन नेशन, वन इलेक्शन की मांग लंबे समय से उठती रही है। अब तो परिस्थितियां ऐसी हो गई हैं कि हर एक-दो साल के अंतराल पर किसी न किसी बड़ी विधानसभा के चुनाव करने पड़ते हैं। इसमें कोई दो राय नहीं कि लोकसभा और विधानसभा चुनाव एक साथ न होने से चुनावों में लगने वाले लंबे-चौड़े अमले, नेताओं और जनता के बहुमूल्य समय के साथ-साथ अकूत धन का क्षरण होता है। साथ ही बार-बार होने वाले चुनावों से विकास की गति बाधित होती है।

चुनाव बहुत खर्चीले हो गए हैं, बिना पैसों के लड़ना अब संभव नहीं? सवाल ये है आखिर ये समस्या रुके कैसे, हालांकि इसको लेकर एक चुनाव एक देश की मुहिम कारगर साबित हो सकती है, क्योंकि हमारे यहां हर वक़्त चुनावी मौसम रहता है। इनमें काफी समय, धन और संसाधन बर्बाद होता है। यही वजह है कि वन नेशन, वन इलेक्शन की मांग लंबे समय से उठती रही है। प्रधानमंत्री मोदी की भी यही तमन्ना रही है, इसलिए गाहे-बगाहे वह अपनी इच्छा जताते रहे हैं। हाल ही में उनकी सरकार ने पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में एक राष्ट्र, एक चुनाव की संभावनाओं की समीक्षा के लिए एक उच्चस्तरीय कमेटी गठित कर इस मुद्दे को फिर से छेड़ दिया है।

गौरतलब है कि देश में एक साथ चुनाव की अवधारणा नई नहीं है। आजादी के बाद 1951-52 में पहले चुनाव से लेकर 1967 तक एक लोकसभा और विधानसभाओं के चुनाव एक साथ होते रहे, लेकिन 1968 और 1969 में कुछ विधानसभाओं के समय से पूर्व भंग होने के कारण यह चलन जारी नहीं रह सका। अब तो परिस्थितियां ऐसी हो गई हैं कि हर एक-दो साल के अंतराल पर किसी न किसी बड़ी विधानसभा के चुनाव करने पड़ते हैं। इसमें कोई दो राय नहीं कि लोकसभा और विधानसभा चुनाव एक साथ न होने से चुनावों में लगने वाले लंबे-चौड़े अमले, नेताओं और जनता के बहुमूल्य समय के साथ-साथ अकूत धन का क्षरण होता है। साथ ही बार-बार होने वाले चुनावों से विकास की गति बाधित होती है, क्योंकि हर चुनाव की घोषणा के साथ ही आचार संहिता से लागू हो जाती है। फिर आचार संहिता इतनी लंबी चलती है कि अगले दो-ढाई महीने तक तरक्की पर ब्रेक लग जाता है। निःसंदेह एक साथ चुनाव से इन तमाम विसंगतियों पर काबू पाया जा सकता है। गौर फरमाएं तो प्रधानमंत्री मोदी भी यही तर्क देकर कभी लाल किला की प्राचीर से तो कभी पीठासीन अधिकारियों की सम्मलेन में इसकी पुरजोर वकालत करते रहे हैं। उनके कार्यकाल में ही लॉ कमीशन, नीति आयोग और संसद की स्थायी समिति के जरिये इसकी समीक्षा की जा चुकी है। इस तरह मोदी सरकार द्वारा रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में गठित यह चौथी समिति है। हालांकि इससे पूर्व की समितियों की सिफारिशों पर अब तक वर्तमान सरकार ने कोई निर्णय लिया है। इसकी वजह यह है कि यह कहने-सुनने में जितना व्यावहारिक और उचित लगता है, उतना शायद भारत जैसे संघीय और संवैधानिक ढांचे वाले मुल्क में आसान नहीं है। वैसे, मकसद और उद्देश्य अगर केवल समय और धन की बचत है तो फिर यह भी दलील दी जा सकती है कि हर पांच वर्ष में ही चुनाव क्यों कराए जाएं? उनकी समयावधि बढ़ाकर छह-सात वर्ष क्यों न कर दी जाए? इससे समय और धन की बचत तो हो जाएगी, लेकिन कई और समस्याएं खड़ी हो जाएंगी। मसलन अगर इनमें जीत दर्ज करने वाली कोई सियासी पार्टी अच्छा काम नहीं कर रही है और जन अपेक्षाओं पर खरी नहीं उतर रही है तो उसे फिर जनता को पांच से अधिक वर्षों तक बर्दाश्त करने के लिए विवश होना पड़ेगा। हमारे देश में वैसे ही इसकी संभावनाएं प्रबल हैं

क्योंकि चुनावी वादे करके भूलना हमारे नेताओं और राजनीति दलों की आदत में शुमार है। चुनाव सुधारों के तौर पर मतदाताओं को अक्षम जनप्रतिनिधियों को वापस बुलाने का अधिकार देने की मांग बेमानी हो जाएगी।

देश में लोकसभा और विधानसभा चुनाव फिलहाल अलग-अलग होने के बावजूद इसे शांतिपूर्वक सम्पन्न कराना निर्वाचन आयोग और सुरक्षा बलों के लिए बड़ी चुनौती होती है। इसमें काफी समय लगता है। मसलन 2019 के आम चुनाव सात चरणों में संपन्न हुए और इसमें 39 दिन अर्थात सवा महीने का समय लगा। इस दौरान कानून-व्यवस्था बनाए रखने के लिए लगभग 2.7 लाख अर्द्धसैनिक बलों और 20 लाख पुलिस फोर्स का सहारा लेना पड़ा। इसी तरह बड़े राज्यों के विधानसभा चुनावों को कई फेज में कराना पड़ता है जिनके लिए काफी सुरक्षा बलों की तैनाती करनी पड़ती है। ऐसे में एक साथ लोकसभा और विधानसभा चुनाव करवाने में लगने वाले समय और संसाधन का अंदाजा बखूबी लगाया जा सकता है। बात केवल इतनी भर नहीं है। असल में विविधता वाले हमारे देश में राजनीतिक परिस्थितियां इसके अनुकूल नहीं हैं। बहु-दलीय राजनीतिक व्यवस्था वाले हमारे देश में जनता के चुनावी मुद्दे एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र, एक राज्य से दूसरे राज्य और फिर राज्य से राष्ट्रीय स्तर तक अलग-अलग हैं। मुद्दों के साथ-साथ उनकी चुनावी प्राथमिकताएं अलग-अलग हैं। किसी राज्य में लोग अपने यहां के क्षेत्रीय दलों को पसंद करते हैं तो किसी राज्य के राष्ट्रीय दलों को तरजीह देते हैं। भू-सामाजिक और राजनीतिक वैविधता से लोगों के सामने बहुत से विकल्प खुले होते हैं और जन-मानस अपनी आवश्यकताओं के अनुसार ही अलग-अलग प्रशासनिक स्तर पर दलों का चयन करते हैं। ऐसे में एक साथ चुनाव कराने से क्षेत्रीय दलों को काफी नुकसान होगा और उनकी संभावनाएं क्षीण होती जाएंगी, क्योंकि बदली हुई निर्वाचन प्रणाली में राष्ट्रीय मुद्दों और जनभावनाओं का प्रभुत्व होगा। हमारे देश में वैसे ही गठबंधन सरकारों का एक लंबा दौर रहा है। कई बार किसी दल को स्पष्ट बहुमत नहीं मिलने और फिर आपस में गठबंधन की सहमति नहीं बन पाने से त्रिशंकु जैसे हालात पैदा हो जाते हैं। एक साथ चुनाव कराने की स्थिति में अगर केंद्र में किसी दल या गठबंधन की सरकार बन जाती है और किसी राज्य में त्रिशंकु परिस्थितियां उत्पन्न हो गईं, ऐसे में हालात बड़े विचित्र हो जाएंगे। फिर यही बात केंद्र के लिए भी लागू होती है। ऐसी परिस्थितियों में क्या त्रिशंकु लोकसभा या विधानसभाओं को अगले पांच वर्षों तक फिर से एक साथ चुनाव होने की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी या फिर से फौरन चुनाव करवा कर समय, धन और संसाधनों की बर्बादी की जाएगी?

भारतीय संविधान में लोकसभा और राज्यों की विधानसभाओं के अपने-अपने अधिकार प्रदत्त हैं। इनके अनुसार ही यह कार्य करती हैं और जनहित वाली योजनाओं का सृजन करती हैं। इसके अतिरिक्त शासन का तीसरा स्तर भी है जो स्थानीय निकायों के जरिये चलता है। इसका मकसद स्थानीय सतह पर योजनाओं को सुचारू रूप से क्रियान्वित करना है। लोकसभा और विधानसभाओं के एक साथ चुनाव करवाने से स्थानीय निकायों में भी इसका प्रयोग किए जाने की मांग उठने लगेगी। सबसे बड़ी दिक्कत तो संसद के उच्च सदन राज्यसभा के सामने पेश आएगी जिसके सदस्यों का कार्यकाल 6 साल का होता है और इसमें से हर दो वर्ष पर एक-तिहाई सदस्यों का कार्यकाल समाप्त होता है।

ऐसे में जाहिर तौर पर तो चुनाव संबंधी धन-संसाधन एवं समय की बर्बादी को कम करने, स्थिर शासन और बार-बार चुनाव से होने वाले अवरोधों को कम करने के लिए एक साथ चुनाव प्रासंगिक लगते हैं, लेकिन क्या यह व्यावहारिक भी हैं। इसका जवाब तलाश करने के लिए इस पर व्यापक चर्चा जरूरी है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया **edit@haribhoomi.com** पर दे सकते हैं।

सुख की चाह के लिए तप की साधना जरूरी है...

संकलित
दर्शन

तप संकल्प की प्राप्ति का एकमात्र उपाय है। जिसे सत्य संकल्प द्वारा सुख की चाह है, उसे तप की साधना अवश्य करनी चाहिए। संकल्प के दृढ़ एवं सत्य न होने का सबसे बड़ा कारण तप की कमी होता है। जो व्यक्ति अपने स्थूल और सूक्ष्म शरीर के द्वारा तप नहीं करता, वह अपने संकल्पों को कभी प्राप्त नहीं कर सकता। तप से हमें अपने मन और तन, दोनों को पक्का बनाना होता है। जैसे मिट्टी का कच्चा घड़ा पानी डालने पर गल जाता है। वह अग्नि में बिना तपे कभी जल नहीं ला सकता। इसी प्रकार जब तक मनुष्य अपने जीवन को तप द्वारा पक्का नहीं बनाता, तब तक वह कभी भी अपने संकल्पों की सिद्धि को धारण नहीं कर सकता। तप से जीवन की समस्त अशुद्धियां दूर होती हैं। अशुद्धियों के दूर होने से शरीर और इंद्रियों को विशेष सिद्धि मिलती। तभी कहा जाता है कि तप से सभी कुछ साध्य है। वेदों में भी तप की महिमा और आवश्यकता का अनेक स्थानों पर वर्णन किया गया है। कल्याण की कामना करने वाले ऋषिगण भी प्रथम तप और दीक्षा का ही अनुष्ठान करते हैं। श्रीमद्भागवत कथा के द्वितीय स्कंध में श्री भगवान ब्रह्मजी से कहते हैं कि 'मैं इस दृश्यमान अखिल प्रपंच को तप द्वारा रचता हूं और पुनः तप द्वारा ही ग्रसित कर लेता हूं। मैं तप द्वारा ही इस विश्व का भरण-पोषण करता हूं और मेरा अत्यंत तेजस्वी पराक्रम तप ही है। तप द्वारा वह तेज और वह शक्ति प्राप्त की जा सकती है, जो किसी भी संकल्प की प्रतिपूर्ति का आधार बनती है।'

बहरूपियों से हमेशा सतर्क एवं सावधान रहें

संकलित
प्रेरणा

एक कबूतर और एक कबूतरी एक पेड़ की डाल पर बैठे थे। उन्हें बहुत दूर से एक आदमी आता दिखाई दिया। कबूतरी के मन में कुछ शंका हुई और उसने कबूतर से कहा कि चलो जल्दी उड़ चले नहीं तो ये आदमी हमें मार डालेगा। कबूतरने लंबी सांस लेते हुए आराम के साथ कबूतरी से कहाः भला उसे ध्यान से देखो तो सही, उसके कपड़े देखो, चेहरे से भोलापन टपक रहा है, ये हमें क्या मारेगा, बिलकुल सज्जन पुरुष लग रहा है। कबूतर की बात सुनकर कबूतरी चुप हो गई। जब वह आदमी उनके पास आया तो अचानक उसने अपने वस्त्र के अंदर से तीर कमान निकाला और झट से कबूतर को मार दिया। और बेचारे उस कबूतरके वहीं प्राण पखेरू उड़ गए। असहाय कबूतरी ने किसी तरह भाग कर अपनी जान बचाई और बिलखने लगी। उसके बाद वह कबूतरी रोती हुई अपनी फरियाद लेकर राजा के पास गई और राजा को उसने पूरी घटना बताई। तुरंत शिकारी को पकड़ कर दरबार में लाया गया। शिकारी ने डर के कारण अपना जुर्म स्वीकार कर लिया। उसके बाद राजा ने कबूतरी को ही उस शिकारी को सजा देने का अधिकार दे दिया। कबूतरी ने बहुत दुःखी मन से कहा किः मेरे विचार से इस क्रूर शिकारी को बस इतनी ही सजा दी जानी चाहिए कि अगर वो शिकारी है तो उसे हर समय शिकारी वाले कपड़े पहनना चाहिए। ये अच्छे व्यक्ति वाले कपड़े उतार दे क्योंकि अच्छे व्यक्ति वेल कपड़े पहन कर धोखे से घिनौने कर्म करने वाले सबसे बड़े नीच होते हैं।

अंतर्मन

आज की पाती

नया वित्त वर्ष मंगलमय हो

हमारे देश में हर वर्ष वित्तीय वर्ष 1 अप्रैल से 31 मार्च तक होता है। देश में वर्ष 1867 में अंग्रेजों ने पहली बार बजट प्रस्तुत किया था। उन्होंने 1 अप्रैल से 31 मार्च को वित्तीय वर्ष घोषित करके इसे अपनी सुविधा के लिए रखा था। तब से ही हमारे देश में वित्तीय वर्ष की परंपरा 1 अप्रैल से 31 मार्च तक चलती आ रही है। उम्मीद है कि हमारे देश के लिए वित्तीय वर्ष 2024-25 महत्वपूर्ण रहेगा और केंद्र में जो भी सरकार सत्ता में आएगी, वो देश के आर्थिक विकास के लिए काम करेगी। कुछ अर्थशास्त्री यह भी अनुमान लगाए हुए हैं कि यह वर्ष देश की जीडीपी अर्थात सकल घरेलू उत्पाद के लिए बेहतर हो सकता है। इस वित्त वर्ष में सभी का कारोबार खूब फले-फूले, यह कामना करनी होगी। - **विकास परसाई**, रायगढ़

ट्रेंड

एकजुट होने का क्षण

ऑटिस्टिक लोग शिक्षा, रोजगार और सामाजिक समावेशन के अपने मौलिक अधिकारों में बाधाओं का सामना करना जारी रखते हैं। विश्व ऑटिज़्म जागरूकता दिवस उनके महत्वपूर्ण योगदान का जश्न मनाने, अपने अधिकारों को समझने के लिए एकजुट होने का एक क्षण है।

-एंटोनियो गुतरेस, यूएन महासचिव

दुनिया अलग जगह होगी

यदि हम इस दुनिया में पर्याप्त संख्या में ऐसे लोगों का निर्माण कर सकें जिनका जीवन का अनुभव शारीरिक और मानसिक से परे हो, तो यह दुनिया एक बहुत अलग जगह होगी।

-सदगुरु, आध्यात्मिक गुरु

चीन का नाम नहीं लेते

प्रधानमंत्री चीन का नाम नहीं लेते, विदेश मंत्री ना जाने क्यों चीन से घबराते हैं? चीन ने हमारे अरुणाचल की 30 जगहों के नाम बदल दिए-जयशंकर जी कहते हैं, क्या फ़र्क़ पड़ता है- मैं आपके घर का नाम बदल दूं, तो वह घर मेरा थोड़े ही हो जाएगा

-सुप्रिया श्रीनेत, कांग्रेस नेता

नवाचार बढ़ने के प्रमाण

पूरे भारत में तकनीकी नवाचार के बढ़ने के प्रमाण। एक इंजीनियर जो अभी तक कोई अन्य डिलीवरी ऐप नहीं बना रहा है। संजीव आईआईटीआर स्तर 5 की स्वायत्तता को लक्षित करने के लिए जटिल गणित का उपयोग कर रहा है।

-आनंद महिंद्रा, उद्योगपति

करंट अफेयर

इजराइल अल जजीरा का संचालन बंद करेगा

इजराइल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू ने संसद द्वारा अल जजीरा चैनल को बंद करने जैसे फैसले के लिए कानून पारित किए जाने के बाद सोमवार को संकल्प जताया कि देश में इस चैनल का परिचालन बंद कर दिया जाएगा। उन्होंने यह आरोप भी लगाया कि यह 'आंतकवादी चैनल' है जो उकसाता है। प्रसारक ने नेतन्याहू के उकसाने वाले दावे की निंदा करते हुए इसे 'खतरनाक, हास्यास्पद झूठ' बताया। अल जजीरा ने सोमवार देर रात एक बयान में कहा कि वह नेतन्याहू को अपने कर्मचारियों और कार्यालयों की सुरक्षा के लिए जिम्मेदार मानता है। चैनल के मुताबिक, उसके पत्रकार अपने साहसिक और पेशेवर कवरेज को जारी रखेंगे, और वह ''हर कानूनी कदम उठाने का अधिकार सुरक्षित रखता है।'' इजराइल के अल जजीरा के साथ लंबे समय से खराब संबंध रहे हैं। इजराइल चैनल पर उसके प्रति पूर्वाग्रह रखने का आरोप लगाता है। लगभग दो साल पहले दोनों के संबंध तब और बिगड़ गए जब इजराइली कब्जे वाले वेस्ट बैंक में इजराइली सैन्य हमले के दौरान अल जजीरा की संवाददाता शिरीन अबू अकलेह की हत्या कर दी गई थी। अल जजीरा उन कुछ अंतरराष्ट्रीय मीडिया घरानों में से एक है जिसने पूरे युद्ध के दौरान गाजा से खबरें दीं।

ऑफ बीट

जीवित पक्षियों के लिए नए 'जीवन वृक्ष' का पता चला

पक्षी जीनोम के अब तक के सबसे बड़े अध्ययन से पक्षी परिवार के पेड़ की उल्लेखनीय रूप से स्पष्ट तस्वीर सामने आई है। अध्ययन से पता चलता है कि

पक्षियों के अधिकांश आधुनिक समूह डायनासोर के विलुप्त होने के 50 लाख वर्षों के भीतर पहली बार दिखाई दिए। पक्षी हमारे जीवन का एक बड़ा हिस्सा हैं, शहरों में भी यह प्रकृति का प्रतीक हैं। वे आम जनता के बीच लोकप्रिय हैं और वैज्ञानिकों द्वारा उनपर काफी अध्ययन किया गया है। लेकिन इन सभी पक्षियों को एक पारिवारिक वृक्ष में रखना निराशाजनक रूप से कठिन रहा है। 360 से अधिक पक्षी प्रजातियों के जीनोम का विश्लेषण करके, हमारे अध्ययन ने जीवित पक्षियों के प्रमुख समूहों के बीच मौलिक संबंधों की पहचान की है। नया पारिवारिक वृक्ष पक्षी संबंधों के बारे में कुछ पिछले विचारों को उलट देता है, साथ ही कुछ नए समूहों का भी खुलासा करता है। पक्षी परिवार के पेड़ की तीन प्रमुख शाखाएँ हैं। पहली शाखा में टिनमस और रैटाइट्स शामिल हैं, जिनमें एमु, कीवी और शुतुरमुर्ग जैसे बिना उड़ने वाले पक्षी शामिल हैं। दूसरी शाखा में भूमिपक्षी और जलपक्षी – मुर्गियाँ, बत्तखें इत्यादि हैं। अन्य सभी पक्षी तीसरी शाखा में आते हैं, जिसे निओवेस के नाम से जाना जाता है, जिसमें 95% पक्षी प्रजातियाँ शामिल हैं।

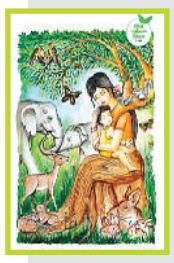

अपने विचार

हरिभूमि कार्यालय
टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-42422221 पर या सीधे मेल से **aapkepatra.haribhoomi@gmail.com** पर भेज सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPaperPaid